आर.एन.आई. नं. 3653/57
मुद्रण तिथि 5 से 8 मार्च, 2022
डाक प्रेषण तिथि 10 मार्च, 2022

वर्ष : 80 अंक : 03
फाल्गुन, 2078 मूल्य : ₹ 10
पृष्ठ संख्या 104

डाक पंजीयन संख्या Jaipur City/413/2021-23
WPP Licence No. Jaipur City/WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

मार्च, 2022

नमो अरिहंताणं
नमो सिद्धाणं
नमो आयरियाणं
नमो उवज्झायाणं
नमो लोए सव्वसाहूणं

एसो पंच नमोक्कारो, सव्व-पावप्पणासणो
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल जयपुर

Website : www.jinwani.in

आधि, व्याधि, उपधि और उपाधि से
अप्रभावित रहना समाधि है।

संसार की समस्त सम्पदा और भोग
के साधन भी मनुष्य की इच्छा
पूरी नहीं कर सकते हैं।

- आचार्य हस्ती

आवश्यकता जीवन को चलाने
के लिए जरूरी है, पर इच्छा जीवन
को बिगाड़ने वाली है,
इच्छाओं पर नियंत्रण आवश्यक है।

- आचार्य हीरा

जिनका जीवन बोलता है,
उनको बोलने की उतनी जरूरत भी नहीं है।

- उपाध्याय मान

With Best Compliments :

Rajeev Nita Daga Foundation Houston

श्री महावीराय नमः
श्री कुशलरत्नगजेन्द्रगणिभ्यो नमः

जय गुरु हीरा जय गुरु महेन्द्र जय गुरु मान

जो संघ में भक्ति रखता है और शासन की उन्नति करता है, वह प्रभावक श्रावक है।
– आचार्य श्री हस्ती

साधक का लक्ष्य पाप का निकन्दन करना है। समता की साधना से यह सम्भव है।
– आचार्य श्री हीरा

श्रद्धावनत

केसरीचन्द जैन, महेशचन्द जैन, जिनेशचन्द जैन, सतीशचन्द जैन

विनोद, प्रमोद, संजय, संतोष, मनीष, चन्द्रप्रकाश, चन्द्रदीप, राहुल, प्रवीण जैन

कृष्णा, तरुण, आयुष, प्रखर, हर्ष जैन (कंजौली वाले)

72, बैंक कॉलोनी, महेश नगर विस्तार–बी, जयपुर (राज.)
मो. : 77909 69620

श्री महावीराय नमः

श्री कुशलरत्नगजेन्द्रगणिभ्यो नमः

जय गुरु हीरा | जय गुरु महेन्द्र | जय गुरु मान

अंक सौजन्य

इस भूमण्डल पर विचरण करने वाले पञ्चमहाव्रतधारी
साधु-साध्वी एवं सभी जीवों का हित हो, सुख हो,
पथ्य हो, मंगल हो, कल्याण हो-कल्याण हो

स्व. श्री साहिबचन्दजी-राजबाईजी सुराणा, ब्यावर

स्व. श्री सम्पतराजजी-सौभाग्यवतीजी सुराणा, ब्यावर

:: श्रद्धानवत ::

अनिल-शशि, नन्दीश-नीशू, व्यूह-पिंकी, विपुल-निधि,
ध्रुती, पारिणामिक, नयन्श, डीयू, शिमित सुराणा, ब्यावर-वैल्लूर परिवार

प्रतिष्ठान

Dhanalakshmi Sanitarywares
Tiles & Sanitaryware
Mottor, VELLORE
7904863507

Vellore Ceramics
Sathuvachari,
VELLORE
8870072982

S.A. Jainson Trade Link
CHENNAI
9150503783

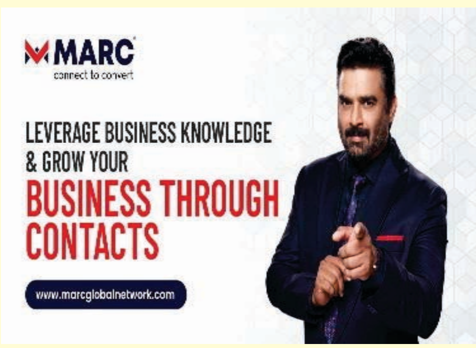

ISSN 2249 - 2011 हिन्दी-मासिक

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

卐 **संरक्षक**
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
प्लॉट नं. 2, नेहरुपार्क, जोधपुर (राज.), फोन-0291-2636763
E-mail : absjrhssangh@gmail.com

卐 **संस्थापक**
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 **प्रकाशक**
अशोककुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182, के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997
जिनवाणी वेबसाइट- www.jinwani.in

卐 **प्रधान सम्पादक**
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन

卐 **सह-सम्पादक**
नौरतनमल मेहता, जोधपुर
मनोज कुमार जैन, जयपुर

卐 **सम्पादकीय कार्यालय**
ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाजनगर, जयपुर-302015 (राज.)
फोन : 0141-2705088
E-mail : editorjinvani@gmail.com

卐 **भारत सरकार द्वारा प्रदत्त**
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-JaipurCity/413/2021-23
WPP Licence No. JaipurCity-WPP-04/2021-23
Posted at Jaipur RMS (PSO)

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

अबले जह भारवाहए,
मा मग्गे विसमेऽगाहिया।
पच्छा पच्छाणुतावए,
समयं गोयम! मा पमायए।।
-उत्तराध्ययन सूत्र, 10.33

अबल भारवाही जैसे,
मत विषममार्ग अवगाहन कर।
पछताते उत्पथगामी फिर,
गौतम! प्रमाद क्षण का मतकर।।

मार्च, 2022
वीर निर्वाण सम्वत्, 2548
फाल्गुन, 2078

वर्ष 80 अंक 3

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 250 रु.	स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
20 वर्षीय, देश में : 1000 रु.	संरक्षक सदस्यता : 11000/-
20 वर्षीय, विदेश में : 12500 रु.	साहित्य आजीवन सदस्यता- 4000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क/सहयोग राशि ``JINWANI" बैंक खाता संख्या SBI 51026632986 **IFSC No. SBIN** 0031843 में NEFT/RTGS से जमा कराकर जमापर्ची (काउन्टर-प्रति) श्री अनिलजी जैन के व्हाट्स एप्प नं. 9314635755 पर भेजें।

जिनवाणी में प्रदत्त सहयोग राशि पर आयकर में 80G की छूट उपलब्ध है।

मुद्रक : डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-4043938

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय-	समाधि	-डॉ. धर्मचन्द जैन	7
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-डॉ. धर्मचन्द जैन	11
विचार-वारिधि-	आत्म-विकास के सूत्र	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.	12
प्रवचन-	अनमोल समय को व्यर्थ न जाने दें	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.	13
	समत्व की साधना : सामायिक (1)	-मधुरव्याख्यानीश्री गौतममुनिजीम.सा.	17
	पुण्य संसार घटाता है और जीवन को अच्छा बनाता है	-तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.	22
	पंजाब और राजस्थान के सन्तों का मधुर व्यवहार	-विद्वद्वर्य श्री जयमुनिजी म.सा.	26
	राग त्याज्य, अनुराग उपादेय	-श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा.	31
84वाँ जन्म-दिवस-	'विज्जाचरण-पारगा' परमाराध्य आचार्यप्रवर...	-श्री हस्तीमल गोलेछा	34
शोधालेख-	अभय की साधना का स्तोत्र भक्तामर	-डॉ. दिलीप धींग	41
	भारतीय दर्शनों में अनेकान्तवाद के तत्त्व : एक ऐतिहासिक विवेचन	-प्रो. सागरमल जैन	54
तत्त्व-चर्चा-	आओ मिलकर कर्मों को समझें (19)	-श्री धर्मचन्द जैन	48
जीवन-व्यवहार-	व्यावहारिक जीवन के नीति वाक्य (14)	-श्री पी. शिखरमल सुराणा	51
दीक्षा एवं समाधि-मरण-	ऐसी कृपा हो भगवन्! जब प्राण तन से निकलें	-श्री नमन मेहता	60
प्रासङ्गिक-	होली के रंग.... मेरे अरिहंत प्रभु के सङ्ग	-श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'	66
संवाद-वाटिका-	भर यौवन में पाल्यो शील	-श्रीमती सुमन कोठारी	70
गीत/कविता-	अष्टसम्पदाधारी गुरु हीरा मंगलकारी	-श्री मनमोहन बाफना	21
	जीना कितना यहाँ पर....	-श्री त्रिलोकचन्द जैन	30
	झुका नहीं करता	-डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'	30
	शुद्ध संयम के पर्याय : आचार्यश्री हीरा	-श्रीमती अंशु संजय सुराणा	33
	हीरा गुरु की महिमा बड़ी महान्	-श्री शान्तिलाल कुचेरिया	40
	आजीविका	-डॉ. रमेश 'मयंक'	59
	जीवन-बोध क्षणिकाएँ	-श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.	65
	आधुनिक रिश्ते-नाते	-श्री संजय महनोत	75
	क्षण-क्षण होता क्षीण.....	-श्री शिखरचन्द छाजेड़	75
	हस्ती तेरा हीरा	-श्रीमती चन्दना मुकेश गुन्देचा	88
विचार/चिन्तन-	अरिहंते सरणं पवज्जामि	-महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.	11
	अगुरु डूबत नाव है, सुगुरु तारण जहाज	-श्री दिनेश जैन	16
	श्रावक की कतिपय विशेषताएँ	-कोमल जैन	25
साहित्य-समीक्षा-	नूतन साहित्य	-श्री गौतमचन्द जैन	73
समाचार-विविधा-	समाचार-संकलन	-संकलित	76
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	-संकलित	89
बाल-जिनवाणी -	विभिन्न आलेख/रचनाएँ	-विभिन्न लेखक	91

सम्पादकीय

समाधि

डॉ. धर्मचन्द जैन

मनुष्य आधि, व्याधि, उपधि और उपाधि से आक्रान्त है और इनके कारण उद्विग्न, दु:खी और सन्त्रस्त है। मानसिक अशान्ति को आधि तथा शारीरिक विकारों को व्याधि कहा जाता है। उपधि के दो अर्थ हैं। सामान्य अर्थ छल-कपट है तथा दूसरा अर्थ जीव से भिन्न उपकरण आदि वस्तुएँ हैं जो अधिक होने पर परिग्रह का रूप भी धारण कर लेती हैं। उपाधि का तात्पर्य पद, डिग्री आदि हैं, जो किसी व्यक्ति की योग्यता और प्रतिष्ठा की सूचक होती हैं। इसके होनेपर भी मानव को अशान्ति का अनुभव होता है। क्योंकि शान्ति का सम्बन्ध बाहर से नहीं भीतर से है।

साधारणतया भीतर की शान्ति को एवं चित्त की निराकुलता को समाधि कहा गया है। समाधि शब्द का अर्थ अनुकूल-प्रतिकूल प्रत्येक परिस्थिति में समता में रहकर शान्ति का अनुभव करना है। गहरा अर्थ समझें तो आधि, व्याधि, उपधि और उपाधि से अप्रभावित रहना समाधि है। यह सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र में अवस्थित रहने से सम्भव होती है। इसलिये धवला टीका में कहा गया है-**दंसणणाणचरित्तेसु सम्मवट्ठाणं समाही णाम।** सम्यग्दर्शन, ज्ञान एवं चारित्र में सम्यक् अवस्थान समाधि है। अभयदेवसूरि ने समवायाङ्ग की टीका में चित्त की स्वस्थता को और स्थानाङ्ग की टीका में समता को समाधि कहा है, जिसमें राग आदि का अभाव होता है। महापुराण (21.226) में उत्तम परिणामों में चित्त का स्थिर रहना समाधि कहा गया है। स्वयम्भू स्तोत्र में धर्म-ध्यान और शुक्ल-ध्यान को समाधि की संज्ञा दी गई है। भगवती आराधना में चित्त की शुभोपयोग या शुद्धोपयोग में एकाग्रता को समाधि कहा गया है। परमात्म प्रकाश (2.190) में कहा गया है कि-समस्त विकल्पों का विलय होना परम समाधि है। योगसूत्र के भाष्य में योग को समाधि कहा गया है तथा उसे एकाग्र अवस्था में सम्भव माना गया है। चित्त जब क्षिप्त, मूढ़ या विक्षिप्त होता है तो समाधि सम्भव नहीं होती।

भारतीय परम्परा में समाधि शब्द का प्रयोग योगदर्शन, बौद्धदर्शन और जैनदर्शन में विशेष रूप से हुआ है। योगदर्शन में योग के आठ अङ्गों में अन्तिम अङ्ग समाधि है। वहाँ ध्यान के पश्चात् समाधि को स्थान दिया गया है। यह सविकल्पक एवं निर्विकल्पक के भेद से दो प्रकार की होती है। बौद्ध परम्परा में अष्टांगिक मार्ग के अन्तर्गत सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति, सम्यक् समाधि को समाधि के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है। सम्यक् व्यायाम जहाँ अकुशल धर्मों को अनुत्पन्न होने तथा कुशल धर्मों के उत्पन्न होने के लिए पुरुषार्थ है, वहाँ सम्यक् स्मृति सजगता है। ऐसा होने पर ही चित्त में एकाग्रता स्वरूप समाधि का अनुभव होता है।

समाधि के विविध पक्षों और परिभाषाओं का चिन्तन करने पर विदित होता है कि चित्त जब राग-द्वेष, क्रोध-मान-माया-लोभ आदि का उदय होने पर भी उनकी वृद्धि में संलग्न नहीं होता, समता से उनका सामना करता है तो स्वत: ही वे विकार निर्बल हो जाते हैं और साधक को समाधि का अनुभव होता है। यह सावद्य प्रवृत्ति से रहित होने पर, नये विकारों को जन्म न देने पर अथवा उन्हें न बढ़ाने पर भी अनुभव की जा सकती है। यह चित्त की एकाग्रता भी है और चित्त की स्वस्थता भी। सामान्यत: राग आदि का भाव होना और समता में रहना समाधि है। इसी अवस्था में ज्ञान-दर्शन-चारित्र की सम्यक् साधना हो पाती है। प्रज्ञा का प्रकटीकरण ऐसी अवस्था में शीघ्र होता है तथा विपुल आत्म-सामर्थ्य का अनुभव होता है।

स्थानाङ्गसूत्र में दस प्रकार की समाधि कही गयी

है, जिसमें पाँच महाव्रतों और पाँच समितियों का उल्लेख किया गया है। प्राणातिपात विरमण, मृषावाद विरमण, अदत्तादान विरमण, मैथुन विरमण, परिग्रह विरमण, ईर्या समिति, भाषा समिति, एषणा समिति, आदान निक्षेपण समिति, परिष्ठापनिका समिति ये दस समाधि के कारण हैं। कारण में कार्य का उपचार/आरोप कर इन्हें भी समाधि कह दिया गया है। हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन-सेवन और परिग्रह जहाँ मनुष्य को अशान्त, रोगी एवं दुःखी करने से असमाधि के कारण हैं वहाँ इनसे विरति समाधि की जनक है। ईर्या समिति आदि पाँच समितियों का सम्यक् पालन भी साधु-साध्वी को चित्त में समाधि प्रदान करता है। इनके अतिरिक्त मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति भी समाधि में कारण बनती है। मन में उत्पन्न होने वाला अशुभ चिन्तन जहाँ असमाधि या दुःख को उत्पन्न करता है वहाँ उसका निवारण समाधि को पुष्ट करता है। इसी प्रकार अशुभ एवं सावद्य वचन जहाँ दूसरे को असमाधि उत्पन्न करते हैं वहाँ वे स्वयं वक्ता को भी असमाधि में ले जाते हैं। जो वचनगुप्ति के पालन से ऐसे वचनों का परित्याग करता है वह समाधि में रहता है। इसी प्रकार शरीर से जो सावद्य प्रवृत्ति करता है वह असमाधि को निमन्त्रण देता है तथा जो इसका गोपन करता है वह समाधि का आस्वादन करता है। ध्यान-साधना से भी समाधि का अनुभव होता है। इस अर्थ में समाधि शब्द अधिक प्रचलित है।

दशवैकालिकसूत्र में नवम विनय समाधि अध्ययन के चतुर्थ उद्देशक में समाधि के चार प्रकार प्रतिपादित हैं-1. विनय समाधि, 2. श्रुत समाधि, 3. तप समाधि और 4. आचार समाधि। ये चारों चित्त में समाधि का अनुभव करने में कारण बनते हैं, अतः इन्हें समाधि कहा गया है। जो विनयशील होता है वह समाधि में रहता है। उसके चित्त में विक्षोभ नहीं होता। वह शान्त भाव से गुरु के द्वारा किये गये अनुशासन को स्वीकार करता है और उसे अपने हित में सहायक समझता है। वह गुरुजनों की सेवा करने तथा उनके द्वारा प्रदत्त शिक्षाओं को श्रवण करने के लिए तत्पर रहता है। वे जो उपदेश देते हैं उसे सम्यक् प्रकार से ग्रहण एवं धारण करता है। वह गुरु आज्ञा का आराधक होता है। ज्ञान प्राप्त होने पर अभिमान नहीं करता। इस तरह से जो विनयस्वभावी होता है वह समाधि में जीता है। अहंकार असमाधि का जनक है और विनय समाधि का जनक।

श्रुत के स्वाध्याय से राग आदि विकारों में जो कमी का अनुभव होता है तथा चित्त में प्रशमता का वास होता है वह श्रुत समाधि है। श्रुत समाधि में रहने वाला साधक शास्त्र का अध्ययन करने में अपना हित समझता है। उसमें एकाग्रचित्त होता है तथा यह विचार करता है कि मैं शास्त्र का अध्ययन कर अपने को धर्म में स्थिर रख सकूँगा और दूसरों को भी स्थिर करने में निमित्त बनूँगा। तप भी समाधि का साधन बनता है, किन्तु तब नहीं जब उसे लौकिक इच्छाओं की पूर्ति का साधन बनाया जाय। इस लोक के सुख की कांक्षा, परलोक में स्वर्ग आदि के सुख की वाञ्छा का त्याग करने के साथ जब तप साधक यश-कीर्ति की भी चाह का त्याग कर देता है और तप को एकमात्र निर्जरा का साधन बनाता है तब उसके लिए तप साधना समाधि में सहायक बनती है। वह तपस्या के द्वारा पूर्व पाप कर्मों को धुनकर क्षय कर देता है।

आचार समाधि चतुर्थ समाधि है। आचार भी समाधि का कारण तब बनता है जब उसे इस लोक और परलोक के भौतिक सुखों की पूर्ति का साधन न बनाया जाय। साथ ही उसे यश-कीर्ति एवं प्रशंसा का आलम्बन न बनाया जाय। मात्र अरिहंतों के द्वारा उपदिष्ट होने से उसका आचरण आत्महित में किए जाने पर ही समाधि प्राप्त होती है। जो इन चार प्रकार की समाधियों का सम्यक् बोध कर समाधि में रहकर शुद्धचित्त वाला बनता है वह अपना विपुल हित करता है और कल्याणकारी तथा सुखप्रद निर्वाण पद को प्राप्त करता है।

समवायाङ्गसूत्र में असमाधि के बीस स्थान कहे गये हैं। इनमें ईर्या समिति की ठीक से पालना न होना, प्रतिलेखन, प्रमार्जन सम्यक् रूप से न करना, अपने से

बड़े साधुओं पर दोषारोपण करना, एकेन्द्रिय आदि जीवों का व्यर्थ उपघात करना, पीठ पीछे दूसरों की निन्दा करना, कलहकारी होना, उपशान्त मुद्दों को पुनः झगड़े के लिए जागृत करना, समय पर स्वाध्याय न करना, संघ में फूट डालने वाले वचन बोलना आदि ऐसे कारणों का निरूपण किया गया है जिनसे चित्त में अशान्ति उत्पन्न होती है और समाधि गायब हो जाती है।

समाधि शब्द का प्रयोग आचाराङ्गसूत्र, उत्तराध्ययनसूत्र आदि में भी हुआ है तथा यह इंगित किया गया है कि साधु को समाधि की अभिलाषा रखनी चाहिये और उसके लिए साधना को साधन बनाना चाहिये। क्योंकि जो समाधि में स्थित होता है उसी में प्रज्ञा का विकास होता है। समाधि की अभिव्यक्ति तभी सम्भव है जब इन्द्रियों और मन को निगृहीत किया जाय, हिंसा आदि पापों से विरत रहा जाय, क्रोध-मान-माया-लोभ पर विजय प्राप्त की जाय। चित्त को विचलित होने से बचाया जाय।

गृहस्थ हो या साधु, सबको समाधि की आवश्यकता है। बाह्य इन्द्रिय के विषयों से मिलने वाले सुख से बढ़कर है समाधि का सुख। विषय-सुखों का परिणाम तो आधि-व्याधि के रूप में दृग्गोचर होता है, किन्तु समाधि हर परिस्थिति में आनन्द का अनुभव कराती है। समाधि का सम्बन्ध आत्म-भावों से है। समता में रहकर समाधि का अनुभव सहज हो सकता है। जो साधना में जितना परिपक्व होता है, वह उतना ही समाधि में रह सकता है। समाधि में सुख भी है और शान्ति भी है। यह बाह्य पदार्थों पर निर्भर नहीं है, इसलिए इसकी प्राप्ति में साधक स्वाधीन भी है। इन्द्रिय सुखों की प्राप्ति में पराधीनता भी है और मनचाही वस्तुओं की प्राप्ति होने में श्रम और समय भी जाया होता है, किन्तु समाधि में न श्रम की आवश्यकता है, न धन की और न ही अधिक समय की। समाधि में आत्म-शक्ति एवं सामर्थ्य का विकास होता है जबकि आधि, व्याधि, उपधि और उपाधि में आत्म-सामर्थ्य का ह्रास होता है। साधना तब ही सफलीभूत होती है जब चित्त समाधि में रहे। उसमें अभिव्यक्त आत्मसामर्थ्य का उपयोग दोषों और विकारों के शमन में हो। एक साधक यदि उपधि और उपाधियों के आकर्षण में फँस जाता है तो उसकी साधना निर्विघ्न नहीं होती और वह प्रगतिशील भी नहीं होती।

अनगार अर्थात् साधु या साध्वी समस्त संयोगों की चाहना से विप्रमुक्त होते हैं। वे संयम और तप से आत्मा को भावित कर उसे निर्दोष और निर्मल बनाते हैं। दोष ही दुःखों का कारण है। एक बात और कि समाधि में रहने के लिए सहना होता है। साधक उपसर्गों एवं परीषहों को सहता है। उसके भीतर में प्राणिमात्र के प्रति मैत्रीभाव का अजस्र स्रोत प्रवाहित होता है। किसी के प्रति द्वेष नहीं होता, किसी से घृणा नहीं होती, किसी को बुरा नहीं समझता। अपनी मर्यादा में रहकर हर एक के प्रति सहयोग का भाव रहता है।

जो साधना के पथ में उतर आया है, उसे अपना लक्ष्य सम्मुख दिखाई देता है। वह सहज भाव से आत्मदृढ़ता के साथ बाधक तत्त्वों को पराजित कर देता है और आत्मलक्ष्य की ओर बढ़ता चला जाता है। वह स्वयं समाधि में रहता है तथा दूसरों को भी समाधि में रहने की प्रेरणा करता है। समाधि में रहकर ही सम्पूर्ण मोहनीय कर्म पर विजय पायी जा सकती है और केवलज्ञान के मार्ग को सुगम बनाया जा सकता है।

आध्यात्मिक विकास का साधन है समाधि। यह जितनी पुष्ट होती जाएगी, साधक का उतना ही आध्यात्मिक विकास होता जाएगा। वह संवर की साधना के साथ निर्जरा की साधना भी पूर्ण गति से कर सकेगा।

समाधिभावों में मरण को ही समाधिमरण या पण्डितमरण कहा जाता है। गृहस्थ श्रावक को पण्डितापण्डित मरण होता है। विवेकशील साधु एवं श्रावक समाधिमरण के लिए प्रयत्नशील होते हैं। पीपाड़ में श्रद्धेयश्री मोतीमुनिजी ने इस प्रकार के मरण का वरण किया है। समाधि में रहकर प्रज्ञा को पुष्ट करने वाले तथा विकारों पर विजय प्राप्त करने वाले सभी साधकों की जय।

ISSN 2249-2011

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

डॉ. धर्मचन्द जैन

कोहे माणे य मायाए, लोभे य उवउत्तया।
हासे भए मोहरिए, विकहासु तहेव य।।
एयाइं अट्ठ ठाणाइं, परिवज्जित्तु संजए।
असावज्जं मियं काले, भासं भासिज्ज पण्णवं।।

-उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 24, गाथा 9-10

अर्थ-क्रोध, मान, माया और लोभ, हास्य, भय और मौखर्य (वाचालता) में तथा विकथाओं में उपयोगयुक्तता रखना दूषण है। प्रज्ञावान, संयती (साधु), इन आठ स्थानों को छोड़कर यथा समय निरवद्य-निर्दोष (और) परिमित भाषा का प्रयोग करे।

विवेचन-उत्तराध्ययनसूत्र के 24वें अध्ययन प्रवचनमाता में 5 समिति और 3 गुप्तियों का प्रतिपादन हुआ है। भाषा समिति के अन्तर्गत उपर्युक्त दो गाथाएँ कही गयी हैं।

एक साधु को किस प्रकार भाषा का प्रयोग करना चाहिए इसका निरूपण इन दो गाथाओं में हुआ है। साधु पञ्चमहाव्रतधारी होता है अत: वह सत्य महाव्रत के अन्तर्गत झूठ बोलने का पूरी तरह त्याग रखता है, किन्तु कई कारणों से न चाहते हुए भी झूठ का प्रयोग हो जाता है। उनमें से यहाँ आठ कारणों का कथन किया गया है। साधु के द्वारा क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, भय, वाचालता और विकथाओं के कारण झूठ का प्रयोग हो जाता है। एक साधक क्रोध आदि कषायों का विजेता होता है। उन कषायों में बोला हुआ सत्य वाक्य भी मृषा की कोटि में आता है, क्योंकि इन कषायों में व्यक्ति अपनी समता को खो देता है, असन्तुलित हो जाता है, इसलिये बोले हुए वाक्य में कहीं-न-कहीं झूठ का प्रयोग हो ही जाता है।

मनुष्य का आत्म-उपयोग एक साथ एक स्थान पर ही होता है। जब वह क्रोध आदि में संलग्न हो जाता है तो क्या बोलने योग्य है और क्या नहीं, इसका विवेक नहीं रह पाता है। क्रोधादि दोष हैं और दोषों में उपयोगरत व्यक्ति निर्दोष भाषा का प्रयोग करे, यह सम्भव नहीं है। साधु के लिए निर्दोष भाषा उपादेय है, दोष युक्त भाषा नहीं। कई बार साधक को सत्य के लिए भी क्रोध आता है। झूठे आरोप का प्रतिकार करने के लिए भी क्रोध आता है। दूसरे के द्वारा अपमान और तिरस्कार कर दिये जाने पर भी क्रोध आता है। इस प्रकार के सभी कारणों से उत्पन्न क्रोध की अवस्था में बोली गयी भाषा दोष युक्त होती है।

समता में रहकर बोला गया वचन ही साधु के लिए आचार सङ्गत है। साधु कितना भी महान् क्यों न हो, अहंकार के वशीभूत होकर आत्म-प्रशंसा के वचन बोलना उसके लिए दोष युक्त होते हैं। मायावी व्यवहार तो सर्वथा त्याज्य है, छद्म युक्त होकर वचन बोलना साधक के लिए साधना में बाधक है। मायावी व्यवहार से लोगों को आकर्षित करना भी त्याज्य है। साधु में भीतर-बाहर से एकरूपता होती है। वह लोभ-लालच में पड़कर भी असत्य नहीं बोलता है। दूसरों को भी लोभ-लालच में नहीं डालता है। उसके वचन सधे हुए होते हैं। हँसी-मजाक में भी झूठ बोलना उसके लिए त्याज्य होता है। क्योंकि हँसी-मजाक का झूठ भी कभी दूसरे के हृदय को चोट पहुँचाने वाला होता है तो साथ ही वह साधना से भटकाने वाला भी बन जाता है। सात प्रकार के भयों में से किसी भी प्रकार के भय से भयभीत होकर साधक झूठ नहीं बोलता। वह षट्कायिक जीवों की रक्षा करने के कारण अथवा उन्हें अभय प्रदान करने के कारण निर्भय होता है।

साधक अल्पभाषी होता है वह व्यर्थ की बकवास नहीं करता, इसलिये मौखर्य को भी दोष माना गया है। अधिक बोलने वाला कहीं-न-कहीं दोष युक्त वचनों का प्रयोग कर सकता है, इसलिये साधक को हर वचन

इस तरह से बोलना चाहिये जैसे वह रत्न को बाहर निकाल रहा हो। चार प्रकार की विकथाएँ कही गयी हैं- स्त्रीकथा, भक्तकथा, देशकथा और राज्यकथा। ये चार प्रकार की विकथाएँ भी साधु के लिए त्याज्य हैं। एक गृहस्थ को भी जब वह सामायिक में होता है तो उपर्युक्त सभी आठों दोषों का परिहार करते हुए उसे भाषा का प्रयोग करना चाहिए।

क्रोध, मान आदि आठों दोष पूर्व संस्कारों से उद्भूत होते हैं, किन्तु इन पर विजय प्राप्त करना साधक का लक्ष्य होता है। अत: प्रज्ञावान संयत साधु को इन आठ स्थानों का परिहार करके निरवद्य एवं परिमित भाषा का यथाकाल प्रयोग करना चाहिए। जब बोलने का अवसर हो तब बोलना चाहिये और बोलते समय उपर्युक्त दोषों का परिहार करके बोलना चाहिये। तब जो वाणी बोली जायेगी वह भाषा समिति के पालन में सहायक होगी। इस तरह भाषा समिति भी साधक को निर्दोष बनाने में सहायक बन सकेगी।

अरिहंते सरणं पवज्जामि

महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.

- ❖ जब कर्मसिद्धान्त पर आस्था कमजोर होती है तब लौकिक देवी-देवताओं की आराधना होती है।
- ❖ माथे को नारियल नहीं बनाना, जो किसी भी देहरी पर झुक जाए। नारियल के अन्दर तो बुद्धि नहीं है, सिर में तो है।
- ❖ नज़र उतारने के लिए लौकिक क्रियाओं की आवश्यकता ही नहीं रहे, अगर नज़र लगने के कारणों से दूर रहें। उदाहरणार्थ-दुकान पर स्वयं 10 चाय पीयेंगे और सहयोगी (नौकर) को मात्र एक चाय पिलायेंगे। नज़र नहीं लगेगी तो क्या होगा?
- ❖ शक्ति न भगवान में है, न भक्त में है, शक्ति भक्ति में है।
- ❖ आज तक Part time job की तरह भगवान को ध्याया, Full time job की तरह नहीं ध्याया। Part time job से करोड़पति भी नहीं बना जा सकता, तो केवली कैसे बना जाएगा?
- ❖ दिन भर के जीवन में कुछ भी गलत नहीं हुआ, तो भी रात में सोने से पहले भगवान को धन्यवाद क्यों नहीं दिया? देना चाहिए।
- ❖ काम शुरू तो भगवान की शरण लेकर करते हैं, पूरा होने पर श्रेय स्वयं ले लेते हैं, एक अपेक्षा से भगवान को धोखा देने जैसा है। Like - use & throw.
- ❖ लोग कइयों के Fan हैं। देव-गुरु-धर्म के Fan हो जाते तो जन्म-मरण End हो जाते।
- ❖ भगवान की वाणी पर तर्क नहीं करना चाहिए। आज्ञा पालन में सतर्क रहना चाहिए।
- ❖ दिन भर रटन रहे-उठते-बैठते-सोते-खाते-प्रवेश करते-'अरिहंते सरणं पवज्जामि।'
- ❖ जीव यदि एक भी नियम को श्रद्धापूर्वक ले, आगार रहित ले और निर्दोषता से जीवन भर पाले तो उसे अगले भव में भी जिनशासन प्राप्त होता है।
- ❖ इस भव में भगवान नहीं बने तो कम से कम अच्छे भक्त तो बनें।
- ❖ जिनेश्वर देव पर श्रद्धा रहेगी तो सफलता मिलेगी। 'अरिहंतो महदेवो' पर स्पष्टता रहे। अनेक स्थानों पर गड्ढा खोदने से कुएँ का जल प्राप्त नहीं होता। अरिहंत देव पर प्रगाढ़ श्रद्धा होगी तो जीवन में सफलता मिलेगी।
- ❖ ज्ञान और क्रिया की प्रेरणा से पूर्व दर्शन की प्रेरणा करनी चाहिए। श्रद्धा की रोड पर गाड़ी आ जाएगी तो ज्ञान-क्रिया की दिशा में तो स्वत: दौड़ जायेगी।

-'एक क़दम धर्म की ओर' कक्षा से संकलित,
श्रीमती श्वेता कर्णावट, जोधपुर

10 मार्च 2022
जिनवाणी 12
ISSN 2249-2011

विचार-वारिधि

आत्म-विकास के सूत्र

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.

- मोक्ष की ओर आगे बढ़ना है तो अहंकार, मान अथवा घमण्ड को चकनाचूर कीजिए।
- विकार से रहित होकर तपस्या करें तो कर्मों की बहुत बड़ी निर्जरा होती है।
- यदि समय थोड़ा है तो थोड़े समय में कर्म काटने का साधन है, 'तपस्या।'
- आत्म-शुद्धि के लिए गुरु के सामने जाकर अपनी आलोचना और प्रायश्चित्त करना चाहिए।
- हर सामाजिक और धार्मिक कार्यकर्त्ता को समझना चाहिए कि सामाजिक और धार्मिक रीति-रिवाजों पर नियन्त्रण रखना आवश्यक है।
- सच्चे साधक अपनी गलती को मानने में, उसको गुरुजनों के सामने प्रकट करने में और प्रायश्चित्त लेने में संकोच नहीं करते।
- आत्मा की शुद्धि के सूत्र हैं-निरीक्षण, परीक्षण और शिक्षण।
- हर एक को अपना जीवन शुद्ध करने के लिए अपनी आलोचना खुद करनी है, बारीकी से देखना है।
- काल की गति विचित्र है। वह न बच्चा देखता है, न जवान, न बूढ़ा और न तरुणी, एकदम आकर धर दबोचता है।
- दु:ख-मुक्ति का रास्ता यह है कि हित-मार्ग को जानो, पहचानो, पकड़ो और तदनुकूल आचरण करो।
- धन के बीच अनासक्त रहने वाला चिन्तित नहीं होता, किन्तु जो माया का नशा कर लेता है, उसको सदा चिन्ताएँ घेरे रहेंगी।
- यदि आय के पीछे पाँच या दस टका भार हल्का करने की मन में आवे और आसक्ति तथा राग कम हो तो मैं कहता हूँ कि आसक्ति कम होते ही आपका रोग और शोक भी कम हो जाएगा।
- धन बढ़ने के साथ-साथ चिन्ता बढ़ने से रोग भी अधिक बढ़ता है, इसलिए आप यह समझें कि जो धन मेरे पास है वह मेरा नहीं है, मैं तो एक ट्रस्टी हूँ, संरक्षक हूँ।
- सामायिक, पौषध, संवर आदि साधनाएँ निज के कर्म काटने के साधन हैं।
- दान के माध्यम से समाज के योग्य क्षेत्र में संवितरण किया जाता है।
- दान करने वाले का पैसे पर ममत्व कम रहेगा, तो शोक-सन्ताप कम होगा, बीमारी कम होगी।
- वचन की महिमा वक्ता की योग्यता पर आधारित होती है।
- शिष्य गुरु के सामने दिल खोलकर बात कर सकता है। वह शिष्य नहीं जो गुरु से खुले मन बात नहीं करे।
- जघन्य आदमी दीर्घद्वेषी होता है, जब तक वह एक-एक गाली के बदले में दस गाली नहीं दे दे, तब तक शान्त नहीं होता।
- उत्तम पुरुष प्रणिपात के बाद क्रोध नहीं रखते।
- निश्छल भाव से प्रभु के साथ सम्बन्ध जोड़कर आगे बढ़ने का प्रयास करोगे तो अवश्य कल्याण के भागी बनोगे।
- सर्वार्थसिद्ध विमान के देवता सम्पदा और वैभव के कारण सुखी नहीं हैं, वरन् वे सुखी हैं पौद्गलिक कामना कम होने के कारण। वे उपशान्त भाव में रहने वाले हैं।

-'अमृत-वाक्' पुस्तक से साभार

ISSN 2249-2011

प्रवचन

अनमोल समय को व्यर्थ न जाने दें

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.

परमश्रद्धेय पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. द्वारा नेहरू पार्क, जोधपुर (राज.) में 23 अगस्त,1994 को फरमाये गये प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता द्वारा किया गया है। **-सम्पादक**

तीर्थङ्कर भगवान महावीर की आदेय-अनुपम वाणी जीव की अनेकानेक मिथ्या मान्यताओं को, अज्ञान की परतों को और अन्त:घटों के अन्धकार को दूर करने का प्रयास कर रही है।

कुछ लोग चातुर्मास के अवसर पर इन्द्रिय-विषयों की तृप्ति हेतु हरियाली देखने को अथवा दर्शनीय स्थलों के निरीक्षण हेतु भटकते और भ्रमण करते हैं। महावीर का कथन है-मानव! यह समय बाहर भटकने के बजाय अन्तर की गहराई में उतरने का है। आगमवाणी के शब्दों में कहा जाए-

आयावयंति गिम्हेसु, हेमंतेसु अवाउडा।
वासासु पडिसंलीणा, संजया सुसमाहिया।।

-दशवैकालिकसूत्र, 3.12

कर्म के बन्धनों से बचने वाले, संवर और संयम की साधना करने वाले, अन्तर और बाहर में शान्ति-समाधि चाहने वाले अपने आत्म-विकास में कैसे चलें? तीन ऋतुओं में उनके तीन काम बताये जा रहे हैं। गर्मियों में आतापना लेते हैं, शरीर तपाते हैं, इन्द्रियों के विकारों को जलाते हैं और कषायों की आग शमन करते हैं। आतापना सोने को तपाने की तरह आत्मगुणों को विकसित करने के लिए ली जाती है।

सर्दी में जल में डुबकी लगाकर शीत सहन करने के बजाय, बर्फ की शिलाओं पर बैठने के बजाय, वृक्षों की डालियों पर विश्राम के बजाय दूसरों को दु:ख नहीं देते हुए शीत की आतापना सहन करते हैं।

वर्षा ऋतु में वे अपने-आपको इन्द्रियों के विषधरों से अलग करके प्रतिसंलीनता ग्रहण करते हैं। एक स्थान पर आत्मा को केन्द्रित कर उसे विशुद्ध करने की चेष्टा करते हैं।

पक्षी गर्मियों में देश-देशान्तर भ्रमण करते हैं, पर वर्षा के मौसम में घोसलों का सहारा लेकर बैठ जाते हैं। साधक भी तन से, मन से बाहर की ओर भटकने के बजाय, इधर-उधर भ्रमण करने के बजाय भीतर की ओर गोपन करके चलते हैं। जैसे कछुआ अपने शरीर को संकुचित करके रहता है, इसी तरह साधक अपने भीतर में उतरता है। प्राचीन समय में महापुरुष अपने आत्म-विकास का अधिक लक्ष्य रखते थे। एक-एक स्थविर भगवन्त, एक-एक आचार्य भगवन्त, एक-एक संघाड़ा प्रमुख पाँच-पाँच सौ, हजार-हजार साधुओं के साथ विचरण करते। उनमें उपदेश देने वाले विरले होते, अधिकतर सब साधना में ही संलग्न रहते। वे अपने अभ्यास को परिपक्व कर लेने के बाद स्वयं परीक्षा के लिए आगे बढ़ते। भगवन्त के चरणों में पहुँचते, महास्थविरों के चरणों में निवेदन करते कि भगवन् आपकी आज्ञा हो तो मैं चार महीनों के लिए शेर की गुफा के बाहर चातुर्मास करना चाहता हूँ। मैं अपनी अहिंसा-करुणा-दया कितनी बलवती है, देखना चाहता हूँ। मैं यह देखना चाहता हूँ कि भय से मैं घबरा तो नहीं रहा हूँ। इस परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए वे स्वयं सिंह की गुफा, साँप की बाम्बी, कुएँ की पाल पर खड़े रहकर अप्रमत्त साधना को विकसित करने का प्रयास करते। यह वर्णन मात्र सन्तों के लिए है, आप ऐसा भी न समझें। श्रावक भी वर्षा ऋतु में अपने-आपका गोपन करे। अपनी इन्द्रियों को और मन को एकाग्र करने की

चेष्टा करे। प्रत्येक साधक के लिए यही बात है।

सन्त विराधना से बचते हैं इसी तरह श्रावक वर्ग भी संवर-संयम-साधना और ज्ञान आराधना में आगे बढ़े। तीर्थङ्कर भगवान महावीर का आघोष है-वर्षा ऋतु के काल में भटकना संसार में अटकना है। आप हम जितना गोपन करेंगे, विराधना से जितने बचेंगे, उतना अच्छा है। अनेक भ्रमणाओं का, मिथ्या धारणाओं का उत्तराध्ययन सूत्र के चौथे अध्याय में निकन्दन किया गया है। मैं शास्त्र की वही बात आपके समक्ष रख रहा हूँ- **'असंखयं जीवियं मा पमायए, जरोवणीयस्स हु नात्थि ताणं। एवं वियाणाहि जणे पमत्ते, किण्णु-विहिंसा अजया गहिंति।।'**

आचार्य भगवन्त के शब्दों में कहूँ-''छोड़ प्रमाद जुड़े ना जीवन बूढ़े जन का है त्राण नहीं। यों जान प्रमादी हिंस्र असंयत, लेंगे किसकी शरण कहीं।''

चौथे अध्ययन का वर्णन किया जा रहा है। कुछ लोगों की धारणाएँ थी, कुछ मान्यताएँ-सिद्धान्त थे कि धर्म की आराधना बुढ़ापे में करनी चाहिये। ऐसे नीति-वाक्य भी मिलते हैं। रघुवंश महाकाव्य में वर्णन किया गया-

शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां, यौवने विषयैषिणां।
वार्धक्ये मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम्।।

रघुकुल की रीत है-बचपन में विद्या का अभ्यास करना है। विद्या में पारगामी बनना है। ब्रह्मचर्याश्रम में जीवन बिताना है। जवानी आने पर परिवार और माता-पिता का ऋण उतारने के साथ भावी प्रजा का निर्माण करना है। धन का अर्जन भी करते हैं और उसका भोग भी करते हैं। पचास वर्ष समाप्त हो जाने के बाद वानप्रस्थाश्रम में आगे बढ़ने का कथन है। चौथा आश्रम है संन्यासाश्रम। इसमें समस्त ममता का त्याग कर दिया जाता है।

भोग में जन्मे, घर में पले, लेकिन उनका घर में जीवन समाप्त नहीं होता था। रघुकुल का हर सदस्य अवस्था के साथ संयम की ओर-मुनिव्रत की ओर बढ़ता था। उस समय में असंयम में काल-कवलित होने वाले कम मिलते थे। जीवन में बचपन में निधन हो जाने पर आश्चर्य होता था।

वृद्धाश्रम में धर्म की आराधना की जाए तो उसमें आज भी रुकावटें नहीं हैं। तेईस तीर्थङ्करों ने जीवनकाल में कुछ भी किया होगा, पर भगवान महावीर ने एक सूत्र दिया-'असंखयं जीवियं मा पमायए।'' मानव जीवन असंस्कृत है। चाँदी का बर्तन टूट जायेगा तो झाल लग जायेगी। मटकी में छेद हो जायेगा तो लाख लगा देंगे। काम लेते-लेते डोरी कभी टूटने लगेगी तो उस जगह को तोड़कर गाँठ लगा दी जायेगी। लकड़ी का पाया टूटने लगेगा तो मेख लगा दी जायेगी। पत्र फट जाय तो उसे चिपकाया जा सकेगा। दीपक बुझने लगे तो उसमें तेल भरा जा सकेगा। इन सबका संस्कार किया जा सकता है, पर मनुष्य की आयुष्य की डोर टूट गई तो उसे वैद्य-डॉक्टर-हकीम कोई भी ऐसा नहीं जो संजीवनी की तरह काम ले सकें। देव-देवेन्द्र की शक्ति और सामर्थ्य नहीं कि वे आयुष्य में क्षण-पल बढ़ा सके।

इस काल का क्या भरोसा? न जाने पतंग की डोर कब कट जाय? उसके लिए न समय है, न मुहूर्त्त ही। इसलिए आप इस भ्रम को मन से निकाल दीजिये कि अभी कमाने के दिन हैं, अभी जितने चाहे भोग भोग लें, धर्म तो बुढ़ापे में कर लेंगे। भ्रमणा में कई बार लोग भूल कर जाते हैं। तीर्थङ्कर भगवन्त इस भ्रमणा निवारण के लिए कहते हैं-''मानव! तू सामर्थ्य वाला है, तुझमें करने की शक्ति है, अभी तेरी इन्द्रियाँ सशक्त हैं, मन चिन्तनशील है, इस समय तूँ जितना करना चाहे कर सकता है, इसलिए कर ले। बुढ़ापे में शरीर जर्जरित हो जाएगा। कान घास-फूस की आवाज तो क्या नगाड़े की चोट तक नहीं सुनेंगे। कल तक दूर बैठा हुआ कौन क्या कह रहा है, यह भी सुनता था। आज नजदीक बैठकर न सुनता है और न ही नज़र जमती है। बुढ़ापे में तू सुन नहीं पाएगा, देख नहीं पाएगा, अनशन करना या अठाई करना मुश्किल हो जायेगा।

एक बहिन आई। बोली–''महाराज! शादी करके मैंने सोलह की तपश्चर्या की, अठाई की, अब तो एकाशन भी मुश्किल से होता है।'' अब वृद्धावस्था में करने की भावना है, पर तप होता नहीं। तप किया तब खूब किया, तप का अनुभव भी है, करने की लगन भी है, पर शरीर साथ नहीं देता। हम कभी प्रत्याख्यान की बात कहते हैं, कभी प्रेरणा करते हैं, हमें सबके लिए प्रेरणा करनी पड़ती है। एक बार एक बच्चे को सामायिक करने की प्रेरणा दी। बच्चे ने हाँ भर ली। माँ–बाप साथ थे, उन्होंने कहा–बाबजी! अबार कांई सामायिक करावो, ओ टाबर सामायिक ने कांई समझे। इण रा खेल–कूद रा दिन है। बच्चे की भावना है, लेकिन माँ–बाप बीच में आते हैं। वह आठ साल का था तब सामायिक नहीं करने दी, अब वह अठारह साल का हो गया तब पढ़ाई का भार कहकर घर वाले टाल जाते हैं। वह अठाईसवें साल में पहुँचा। फिर प्रेरणा की, तब वही माँ–बाप कहते हैं–महाराज! इणने थोड़ो समझावो, यो तो म्हारी माने इ कोनी। पहले जब वह करना चाहता था, तब बच्चा है कहकर उसे सहयोग नहीं किया, अब उसके बच्चे हो गये अब माँ–बाप शिकायत करते हैं कि वह हमारी सुनता नहीं। मैं पूछूँ–इस सामायिक का नम्बर कब आयेगा? आप अगर बचपन, जवानी में नहीं करेंगे, तो बुढ़ापे में क्या गारन्टी? कई तो ऐसे–ऐसे मांई के लाल हैं जो एक के बाद एक काम गिनाते हुए सामायिक को टालते जाते हैं। उनसे शायद श्मशान तक पहुँचने का समय आने पर भी सामायिक नहीं होती। ऐसा क्यों होता है? यह समझने की जरूरत है। आप जब तक सामायिक को ज़रूरी नहीं समझेंगे, तब तक वह नहीं होगी और जिस दिन इसे जरूरी समझ लेंगे तो बचपन, जवानी और बुढ़ापे में कभी भी सामायिक की जा सकेगी। करने वाले करते भी हैं।

इस सामायिक के लिए अवस्था कहीं बाधक नहीं है। कौन–कब उठ जाएगा इसका पता नहीं। कभी दादा के सामने पोता चला जाता है, इसलिए सामायिक बाद में करेंगे, यह भ्रमणा छोड़नी पड़ेगी। जब हर व्यक्ति जीवन चलाने का प्रयास करता है तो फिर आराधना के लिए बहानों की क्या ज़रूरत? आप चाहे जिस अवस्था में सामायिक करें, सामायिक घाटे का सौदा नहीं है।

यह जीवन असंस्कृत है। राणा सांगा की धर्मपत्नी महाराणी कर्णावती भरी जवानी में है, करने का अवसर है, पर इस बीच 1526–30 में बाबर ने जब हमला कर दिया तो रानी चंडिका की तरह कूद पड़ी। बाबर उसके साहस और शौर्य को देखकर अभिभूत हो गया। बाबर ने कहा–''हम औरतों से युद्ध नहीं करते। मैं तुम्हारी वीरता और मर्दानगी देखकर प्रसन्न हूँ।''

1530–40 के बीच राणा सांगा की मृत्यु हो गई। यह खबर मुसलमान शासक बहादुर शाह को लगी। उसने आक्रमण कर दिया। हमले का कारण था–रानी का रूप, उसके पास स्वर्ण भण्डार और समृद्धि। रानी ने चिता में कूदकर जौहर कर लिया।

इस जीवन में कब क्या करना पड़ता है? जो करने के समय पर कर गुजरता है उसे पछताना नहीं पड़ता। वह चाहे तो आत्मा से परमात्मा, जीव से शिव और नर से नारायण भी बन सकता है।

एक भाई उपस्थित हुआ। दो साल में के बच्चे के हिरण्या की शिकायत थी। आप संसार में बैठे हैं जहाँ कई किस्से सुनते हैं। किसी की किडनी खराब है, तो किसी के श्वास नली में तकलीफ है। अस्पताल में जाकर देखें तो छोटे–छोटे बच्चों के ऑपरेशन हो जाते हैं। शरीर में न जाने कितने–कितने रोग कब आ जाते हैं? इस जीवन का कोई भरोसा नहीं। यह किसी भी दिन धोखा दे सकता है।

भगवान महावीर हमें चेता रहे हैं– मानव! सबसे पहले आत्म–कल्याण है। तूँ तन से, मन से एवं धन से जो भी आत्मकल्याण कर सकता है कर ले। कर सकने की स्थिति में अगर कुछ नहीं किया तो बुढ़ापे में क्या कर पायेगा? शरीर को छोड़कर प्रस्थान करेंगे तो न मालूम कहाँ जाना पड़ेगा?

यह जीवन निश्चित ही जाने वाला है। अतः कुछ-न-कुछ सत् कार्य करते रहना चाहिये। मानव जीवन फिर से मिल जाएगा, यह कोई ज़रूरी नहीं है। अभी मिला है तो जितनी साधना कर सकता है, कर ले। क्योंकि यही अनमोल अवसर है। आप इसे स्वर्णिम अवसर समझकर चूके नहीं। एक बार इस लाखिणे अवसर को गँवा दिया, तो फिर यह मौका मिले, यह ज़रूरी नहीं है। जो ज्ञान, साधना, तपश्चर्या करना चाहे, कर लें आज वक्त आपका है। अगर साधना के इन अनमोल क्षणों को व्यर्थ खो दिया तो सिवाय पछतावे के कुछ हाथ नहीं लगने वाला है। आप इस अनमोल अवसर से लाभ उठाकर चारित्र में चरण बढ़ायें, व्रत-नियमों में आगे बढ़े और स्वाध्याय-ध्यान में गति करें, तो सुख-शान्ति प्राप्त करेंगे। इसी भावना के साथ.......।

अगुरु डूबत नाव है, सुगुरु तारण जहाज

श्री दिनेश जैन

गुरु महान् होता है। क्या आवश्यक है कि गुरु कोई एक व्यक्ति ही हो, चिन्तन करें, गुरु तो एक तत्त्व है, गुरु एक शक्ति है। परमार्थ से हमारी आत्मा ही हमारी गुरु है। गुरु सिर्फ एक व्यक्ति नहीं है। गुरु तो भाव है, गुरु श्रद्धा है, गुरु ज्ञान का सागर है। गुरु वे हैं जो हमारे व्यक्तित्व के निर्माता हैं। हमें कब, कहाँ और कैसे सच्चे गुरु मिल जाएँ और क्या ज्ञान दे जाएँ यह भी हमारे स्वयं के व्यवहार पर निर्भर करता है। हम गुरु और ज्ञान दोनों को अपनाना चाहते हैं तो हमें सर्वप्रथम सच्चे गुरु को पहचानना होगा, श्रद्धा जागृत करनी होगी, सामर्थ्य जागृत करना होगा।

सच्चे गुरु समिति, गुप्ति और महाव्रतों से परिपूर्ण अखण्ड नाव की तरह हैं जो जन्म-मरण युक्त इस संसार से मुक्ति दिला सकते हैं। वहीं महाव्रतों से अपूर्ण अगुरु छिद्रों वाली नाव है, वह हमें डुबो देगी अर्थात् अनन्त काल तक जन्म-मरण करने के लिए बाध्य कर देगी। हमारे जीवन की महत्त्वपूर्ण परीक्षा ही सही गुरु का चयन है। वेश धारण करने से कोई गुरु नहीं बन सकता है। वर्तमान में आज ऐसे अनेक अगुरु हैं, जो प्रभु महावीर का वेश धारण करने के बाद भी महावीर के सिद्धान्तों से कोसों दूर हैं। याद रखना जो आडम्बर युक्त साधक है वह हमारे जीवन की सफलता में बाधक ही बाधक है।

हमारे पूर्वज जिन्हें गुरु मानते थे हम भी उन्हीं के शिष्यों को गुरु मानें, यह कैसे उचित होगा? गुरु-शिष्य की परम्परा में कथनी और करनी के अन्तर को देखना होगा, आँखें बन्द करके अपनाई हुई भेड़चाल को बदलना होगा, आडम्बरों से बचना होगा। प्रत्येक भव के साथी कर्म राजा पर विजय प्राप्त करने के लिए धर्म का मर्म जानना होगा और धर्म के मर्म को जानने के लिए सही गुरु को खोजना होगा।

गुरु वह है जो हमें अज्ञान रूपी अन्धकार से सम्यग्ज्ञान रूपी प्रकाश की ओर ले जाये। गुरु वह है जो निर्ग्रन्थ प्रवचन के द्वारा हमें ज्ञान का उपार्जन कराए। गुरु वह है जो जन्म-मरण के बन्धनों से मुक्ति की ओर ले जाये । गुरु ज्ञान पुञ्ज होते हैं, वे जैनागम के अनुरूप स्वयं भी जीवन जीते हैं और हमें भी वही सिखाते हैं। सच्चा गुरु इस असार संसार-सागर से तिराने वाले जहाज हैं, अगर इनका चयन गलत हो गया तो अति दुर्लभ मनुष्य भव व्यर्थ हो जाएगा। नरक, तिर्यञ्च में अनेक भव करने के लिए बाध्य हो जाएँगे। भगवान महावीर का प्रसिद्ध घोष है-स्वयं सत्य की खोज करें, सच्चे गुरु की पहचान ज्ञान से करें और ज्ञान को पाने के लिए जैन शास्त्रों का अध्ययन करें। क्योंकि सच्चा गुरु ही ज्ञान दाता है, सच्चा गुरु ही भाग्य विधाता है। चिन्तन करें।

-पत्रकार, लेखक, समाजसेवी, फीलखाना, हैदराबाद

ISSN 2249-2011

प्रवचन

समत्व की साधना : सामायिक (1)

मधुर व्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. द्वारा 25-26 सितम्बर, 2021 को मानसरोवर-जयपुर चातुर्मास में आयोजित विद्वत् संगोष्ठी में फरमाए गए इस प्रवचन का संकलन श्री गौतमचन्दजी जैन (पूर्व डी.एस.ओ.), जयपुर ने किया है। **-सम्पादक**

मैं अपनी बात एक प्रश्न के साथ करना चाहूँगा कि जीवन किसे कहते हैं? जिस जीवन को हम जी रहे हैं, जीने का ताना-बाना बुन रहे हैं, वह जीवन क्या है? अनुभवियों ने उत्तर देते हुए बताया कि जन्म और मृत्यु के बीच गुजरने वाले क्षणों को या समय को जीवन कहते हैं। जीने वाले उन क्षणों में अक्सर कई प्रकार की परिस्थितियों का सामना होता रहता है। कभी सम्मान-अपमान का, कभी संयोग-वियोग का, कभी हानि-लाभ का, तो कभी सुख और दु:ख का। प्राय: हर व्यक्ति इन उतार-चढ़ाव की परिस्थितियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। कहना चाहूँगा कि जीवन जीने की कला नहीं आने के कारण इन परिस्थितियों में कई व्यक्ति मानसिक और शारीरिक रोग के शिकार हो जाते हैं। चन्द वर्ष पूर्व केफे कॉफी डे के मालिक वीरप्पा गंगया सिद्धार्थ हेगड़े जिनका कि साम्राज्य 2012 तक पूरे देश में अनेक केफे कॉफी डे के आउटलेट के रूप में फैल चुका था। लेकिन उन्हें भी अव्यवस्थित अर्थ संयोजन के कारण तनाव एवं विषमता ने घेर लिया। सन् 2017 में आयकर विभाग द्वारा डाले गये छापे से पूरी तरह से असहाय महसूस करने लग गये और इतने बड़े साम्राज्य के मालिक भी मानसिक सन्तुलन नहीं रख पाने से आत्महत्या कर बैठे।

यह तो मैंने एक घटना का जिक्र किया है। ये घटनाएँ क्यों होती हैं? स्पष्ट उत्तर है कि व्यक्ति के पास साधन, सुविधा, सम्पत्ति, पद, प्रतिष्ठा, अधिकार, ऊँची पहुँच आदि हैं, लेकिन जीवन कैसे जीना, इसकी कला का अभाव है। ऐसे समय में भगवान महावीर का समाधान के रूप में मार्गदर्शन मिलता है। चाहे वह गृहस्थ हो, संन्यासी हो, अमीर हो, गरीब हो, अल्पज्ञ हो, विद्वान् हो, विपन्न हो या सम्पन्न हो, हर व्यक्ति के लिए भगवान ने उपयोगी सूत्र दिया-सामायिक।

हम समझें सामायिक क्या है? मैंने एक बालक से पूछा-सामायिक किसे कहते हैं? बच्चे ने धार्मिक उपकरणों की ओर इशारा करते हुए कहा-'इसे सामायिक कहते हैं।' याद रखें-वेश-परिवर्तन ही सामायिक नहीं है। वेश-परिवर्तन के साथ जीवन की सच्चाई का जो बोध कराये, उसे सामायिक कहते हैं। जिसमें जीव मात्र को स्वयं के तुल्य और स्वयं को सिद्धों के तुल्य समझते हैं, उसे सामायिक कहते हैं। जो ज्ञाता को ज्ञेय, ध्याता को ध्येय और साधक को साध्य बनाये, वह सामायिक है।

जिनशासन में सामायिक की बहुत बड़ी महिमा है, महत्त्व है। यही कारण है कि संयमियों के पाँच चारित्र में प्रथम सामायिक चारित्र को लिया गया है। प्रतिक्रमण के छह आवश्यकों में प्रथम आवश्यक सामायिक प्रसिद्ध है। इसी प्रकार से श्रावक के बारह व्रतों के अन्तर्गत चार शिक्षाव्रतों में प्रथम शिक्षाव्रत सामायिक बतलाया है। व्यवहार सम्यक्त्व के पाँच लक्षणों में प्रथम लक्षण 'शम' या 'सम' अर्थात् सामायिक कहा गया है।

यह सामायिक ही सत्यं, शिवं, सुन्दरम् की पाठशाला है, सत्य जीवन की लक्ष्मण रेखा है। नैतिक एवं प्रामाणिक जीवन की सीख है और आचार धर्म की शिक्षा है। इसी सामायिक ने आत्मा को जन्म दिया। यद्यपि आत्मा अनादि से है, पर जब हम भगवान महावीर आदि तीर्थङ्करों के भवों की गणना का इतिहास पढ़ते हैं

तो वहाँ भवों की गणना में प्रथम बार सम्यक्त्व प्राप्ति को आधार माना गया अर्थात् तीर्थङ्कर की आत्मा ने जिस भव में प्रथम बार सम्यक्त्व प्राप्त किया, तब से भवों की गणना प्रारम्भ हुई। यह सत्य बात है कि सम्यक्त्व या संयममय जीवन की ही महिमा है, शेष जीवन तो व्यर्थ है। आत्मा की असली कीमत तो सम्यक्त्व के कारण से है, शेष भवों का क्या मूल्य? कुछ भी नहीं। जिस दिन कोई जीव सम्यक्त्व प्राप्त करता है, उसी दिन आत्मा का असली उद्भव माना जाता है। सम्यक्त्व भी सामायिक का ही एक रूप है। इसलिये इस सामायिक ने आत्मा को जन्म दिया, ऐसा अपेक्षा से मानने में कोई बाधा नहीं है। हम यह भी कह सकते हैं कि यह वही सामायिक है जिसने नवकार महामन्त्र की रचना की। क्योंकि साधक जब सामायिक चारित्र को अङ्गीकार करता है तो 'नमो लोए सव्वसाहूणं' पद स्वतः सृजित हो जाता है और वही निर्ग्रन्थ सन्त आगे चलकर शेष चारों पद का अधिकारी बनता है। इसलिये हम ऐसा बोल सकते हैं कि इस सामायिक की आराधना ने ही पञ्च परमेष्ठी का सृजन किया। इसी सामायिक ने जीव को अजन्मा बनाया अर्थात् जन्म-मरण से मुक्त किया।

इतिहास बोलता है कि इस सामायिक चारित्र को देखकर ही मृगापुत्र की आत्मा भोग-राग से उपरत होकर वैरागी बनकर वीतराग बन गई। इलायची पुत्र नट-पुत्री में कामान्ध हो गया, जिसे कुल-प्रतिष्ठा का भी भान नहीं रहा और जिसको माता-पिता, परिचित, रिश्तेदार सभी समझाने में विफल हो गये, वही इलायची पुत्र नट-विद्या का प्रदर्शन करते हुए एक सामायिक चारित्र के आराधक मुनि को देखकर तथा उनके संयम, वैराग्य तथा आत्म-केन्द्रित चर्या को देखकर अपराध बोध से भर गया। आत्म-ग्लानि से भर गया। मुनिचर्या को देखने से उसके विचारों में इतना परिवर्तन हो गया कि वहीं पर नट-विद्या का प्रदर्शन करते हुए वह वैराग्य-वासित (विरक्त) हो गया। ऐसे दो-चार प्रसङ्ग ही नहीं हैं, अपितु अनेक प्रसङ्गों से आगम और इतिहास भरे हुए हैं, जिनमें सामायिक चारित्र की आराधना की महिमा का वर्णन है। सामायिक जिनशासन की पहचान है, साधना का प्राण है, साधकों की ऊर्जा है और आराधकों की खुराक है। इसी सामायिक की आराधना से उपशम सुख की प्राप्ति और भविष्य में शाश्वत सुख की प्राप्ति होती है।

सम्पूर्ण द्वादशाङ्गी को सार रूप में एक शब्द में सुनना चाहते हैं या समझना चाहते हैं तो वह शब्द है- 'वीतरागता।' उस वीतरागता को प्रकट करने की प्रयोगशाला है-'सामायिक।' सामायिक की आराधना स्वाभिमान के भाव को जगाती हुई कहती है-हे चेतन! तू कौन, तेरा स्वरूप क्या? अन्तर में झाँक (देख), भेड़ों के झुण्ड में रहते हुए शेर स्वयं को भेड़ मानने लग गया, परन्तु जब उसे अपने असली स्वरूप का बोध हो जाता है तो फिर वह भेड़ों के झुण्ड में नहीं रहता है। ठीक इसी तरह यह जीव संसारियों के बीच में रहते हुए सिद्ध स्वरूपी होकर भी अपने आपको संसारी समझने लग गया। ऐसे समय में सामायिक सत्य का बोध कराती है और सिद्धत्व का स्वाभिमान जगाती है। सामायिक एक लक्ष्य है, साध्य है और आध्यात्मिक साधना की पूर्णता है। फिर उसके बाद न चाह है और न राह है।

ध्यान रखना, यह संसार द्वन्द्वात्मक है। यहाँ वियोग ही दुःख का कारण नहीं, संयोग भी दुःख का कारण है। केवल प्रतिकूलता ही दुःख का निमित्त नहीं, अनुकूलता भी दुःख का कारण है। यहाँ की हानि ही तनाव का कारण नहीं, लाभ भी तनाव का कारण है।

चेन्नई से एक भाईसाहब आये और कहने लगे- 'महाराज पैसा नहीं है, इस प्रकार का दुःख नहीं है। लेकिन जो पैसा है, उसको रखना कहाँ? इसकी बड़ी टेंशन है।' गरीब पाने की चाह में व्याकुल है तो अमीर बचाने के उपक्रम में है। वस्तुतः पाना और बचाना दोनों एक ही है। जो पा गया, वह भी अशान्त है और जिसने नहीं पाया वह भी अशान्त है। अशान्ति संसार की परिणति है।

कोई तन दुःखी, कोई मन दुःखी,

कोई धन बिन रहत उदास।
थोड़े-थोड़े सब दुःखी, सुखिया राम का दास।।

एक भैया ने अपना अनुभव बताते हुए कहा– "महाराज! पुत्र नहीं था, तब दुःख था, पर पुत्र होने के बाद और ज्यादा दुःख हो गया, क्योंकि वह शराबी, जुँआरी, अविनीत और उद्दण्ड प्रकृति का है।" ये तो मैंने आपके सामने एक-दो प्रसङ्ग रखे, पर यह निश्चित है कि वियोग के साथ संयोग भी दुःख का कारण है। इस द्वन्द्वात्मक जीवन के अन्दर कैसे प्रसन्नता को टिकाकर रखना? यहाँ जैनदर्शन बहुत सुन्दर समाधान देता है। **समत्व की साधना जीवन को सन्तुलित करती है, व्यवस्थित करती है, आर्त्त-रौद्रध्यान से मुक्त करती है और संकल्प-विकल्पों से उपरत करती है।** इस द्वन्द्वात्मक संसार को साधना ही सामायिक है अर्थात् अनुकूलता और प्रतिकूलता को साधना ही सामायिक है। अनुभवी कहते हैं कि इसे साधने के लिए साधना में **आत्मबोध** जरूरी है। साथ ही अनुकूलता में **आत्म-संयम** और प्रतिकूलता में **आत्म-विश्वास** जरूरी है।

(1) आत्मबोध

सर्वप्रथम साधना में आत्म-बोध जरूरी है, क्योंकि जब तक आत्म-स्वरूप का बोध नहीं हो जाता, तब तक हमारी साधना न तो आगे बढ़ सकती है और न ही सफल हो सकती है। साधक को यह परिचय करना होगा कि मैं कौन? मैं कहाँ का? मेरा स्वरूप क्या? याद रखना– साधना का प्रारम्भिक बिन्दु यहीं से है। आत्मा के परिचय के लिए हमें इन दो बिन्दुओं का चिन्तन करना होगा–(i) संयोगों से अप्रभावित रहना तथा (ii) भेदविज्ञान।

(I) संयोगों से अप्रभावित रहना–आज हम स्व और पर का ज्ञान ही नहीं कर पा रहे हैं। क्योंकि अधिकांश ने शरीर को ही मैं समझ रखा है। जहाँ शरीर मैं बन जाता है, वहीं से विसंगतियाँ-विषमताएँ प्रारम्भ हो जाती हैं। कारण कि शरीराश्रित ही मन, बुद्धि, अहं, रिश्ते, परिवार, धन, साधन-सुविधाएँ आदि हैं और इस बाह्य जगत् में जब-जब घट-बढ़ होती है, तब व्यक्ति अस्थिर हो जाता है, विषमता से भर जाता है और आर्त्त-रौद्र ध्यान का शिकार हो जाता है। परिणामस्वरूप राग-द्वेष, कर्मबन्ध, पाप, हिंसा आदि सारे आस्रव द्वार खुल जाते हैं और यह जीव जन्म-मरण के चक्रव्यूह में फँस जाता है, मजबूर हो जाता है। अनन्त जन्म-मरण सहित समस्त विषमताओं से निजात पाने का एक ही मार्ग है-संयोगों से अप्रभावित रह कर सबसे पहले आत्म-स्वरूप का बोध करें। इसके लिए इस सूत्र का हमेशा मनन करें।

एगो मे सासओ अप्पा, नाण दंसण संजुओ।
सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे संजोगलक्खणा।।

अर्थात् एक मेरी आत्मा ही शाश्वत है और वह आत्मा ज्ञान-दर्शन स्वभावी है। शेष जितना भी दृश्य जगत् है, वह सब संयोग मात्र है, बाह्यभाव हैं। सम्बन्ध दो प्रकार के होते हैं-एक संयोग सम्बन्ध और दूसरा तादात्म्य सम्बन्ध। जैसे-मिश्री में जो मिठास है, वह तादात्म्य सम्बन्ध है और उसमें धागा है, वह संयोग सम्बन्ध है। याद रखें-संयोग का वियोग निश्चित है, मगर तादात्म्य कभी अलग नहीं हो सकता। आत्मा के साथ तादात्म्य सम्बन्ध है ज्ञान और दर्शन का। आत्म-चिन्तन के प्रभाव से साधक शरीर और शरीर से जुड़ी जितनी भी उतार-चढ़ाव की घटनाएँ होती हैं, उनसे कभी विचलित नहीं होता, सुख-दुःख के प्रवाह में नहीं बहता। संयोग को अपना मानने का अर्थ है-इष्ट-अनिष्ट की कल्पना करना, हर्ष-विषाद का भाव करना, अच्छे और बुरे का संकल्प करना तथा अपने और पराये की बुद्धि रखना। इसी से व्याकुलता की वृद्धि होती है। यदि **तुम आत्म-स्वरूप को उपलब्ध होना चाहते हो तो शरीर को पड़ोसी मानो।** पड़ोसी का मतलब अगल-बगल में रहने वाला। संस्कृत में बड़ी सुन्दर व्याख्या देखने को मिली-'परः असि परोऽसि।' संस्कृत में र और ल तथा र और ड में अभेद माना जाता है अर्थात् पराया है, वह पड़ोसी है। शरीर ही अपना नहीं है तो शेष चीजें कभी भी अपनी नहीं हैं-

यस्यास्ति नैक्यं वपुषाऽपि सार्धं,
तस्यास्ति किं पुत्र-कलत्र-मित्रैः।

पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः,
कुतो हि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये।।

अर्थात् जब शरीर ही तुम्हारा नहीं है तो फिर पुत्र, कलत्र, मित्र और परिजनों से एकत्व को कैसे प्राप्त हो सकते हैं? जैसे शरीर में रोमकूप होते हैं किन्तु चर्म (चमड़ी) को शरीर से अलग कर देने पर वे सब उससे स्वयमेव समाप्त हो जाते हैं। ऐसे ही संसार के जितने संयोग हैं-मकान, दुकान, रिश्ते, धन, परिजन आदि वे सब शरीराश्रित हैं। जब शरीर ही भिन्न है, तो ये सब तीन काल में भी मेरे नहीं हो सकते-

मेरे न हुए ये, मैं इनसे अति-भिन्न अखण्ड निराला हूँ।
निज में पर से अन्यत्व लिये, निज सम रस पीने वाला हूँ।।

आत्म-स्वरूप का ज्ञान यही बोध कराता है कि- **जो दिख रहा है, वह मैं नहीं हूँ और जो देख रहा है, वह मैं हूँ।** इस वाक्य में सारा अध्यात्म का सार समाहित है। दृश्य महत्त्वपूर्ण नहीं, द्रष्टा महत्त्वपूर्ण है। लेकिन क्या करें? **जब मोह, परिस्थितियाँ, विकार हावी हो जाते हैं तो हम दृश्य पर मुग्ध हो जाते हैं और द्रष्टा को भूल जाते हैं।** आत्मबोध संयोगों से अप्रभावित रहकर यही सीख देता है कि द्रष्टा को अपनी दृष्टि में केन्द्रित करो। द्रष्टा को पहचानने की कोशिश करो।

(ii) भेद विज्ञान-जब चेतन एवं तन की भिन्नता का ज्ञान होता है तब आत्मबोध होता है। नमिराजर्षि के सामने परीक्षा की दृष्टि से जलती हुई मिथिला नगरी दिखाने पर भी नमिराज रञ्चमात्र भी विचलित नहीं हुए। उनका आदर्श वाक्य था-

सुहं वसामो जीवामो, जेसिं मो नत्थि किंचणं।
मिहिलाए डज्झमाणीए, न मे डज्झइ किंचणं।।

अर्थात् मिथिला नगरी के जलने से मेरा यहाँ कुछ भी नुकसान नहीं हुआ, क्योंकि उस साधक की धारणा सत्य पर आधारित और स्पष्ट थी-''मैं आत्मा हूँ। शेष सब बाह्य भाव हैं, जिनमें संयोग-वियोग, हानि-लाभ, बनना-बिगड़ना चलता ही रहता है। मैं परिस्थितियों का गुलाम नहीं हूँ। मैं स्वतन्त्र ज्ञाता-द्रष्टा स्वभावी हूँ। मैं इन सबसे भिन्न अखण्ड, आनन्दघन, त्रिकाल चेतन स्वरूपी आत्मा हूँ।'' इसी बात को गुरु हस्ती ने अपने अनुभवी स्वर में कहा-

रोग शोक नहीं मुझको देते, जरा मात्र भी त्रास।
सदा शान्तिमय मैं हूँ, मेरा अचल रूप है खास।।
मेरे अन्तर भया प्रकाश, नहीं अब मुझे किसी की आश।।

आज हमारी हालत कुछ अलग है। संसार में रहने वाला प्रत्येक प्राणी केवल शरीर के स्तर पर जीता है। शरीर की उत्पत्ति को अपनी उत्पत्ति और शरीर के विनाश को अपना विनाश मानता है। जहाँ देह बुद्धि टूटती है, वहीं भ्रान्ति छूटती है। वहीं पर सच्चे अर्थों में अपने भीतर परमार्थ तत्त्व प्रकट होता है। वही बोध का क्षण सामायिक है। शरीर मरणधर्मा है, वियोगधर्मा और विनाशधर्मा है। 'शीर्यते इति शरीरम्।' जो सड़े, गले, मिटे, नष्ट हो, उसका नाम शरीर है। मैं वृद्ध, मैं युवा, मैं प्रौढ़, मैं सुन्दर, मैं कुरूप, मेरा नाम अमुक, मेरा यश, मेरा परिवार, मेरा नाम, मेरी रिश्तेदारी आदि यह सब प्रतीति शरीर के स्तर पर होती है। जबकि मैं इन सबसे पृथक् हूँ, क्योंकि ये सब देह की परिणतियाँ हैं, आत्मा का स्वरूप नहीं हैं। आत्मा के मौलिक गुण ज्ञाता-द्रष्टा स्वभाव से शरीर की भिन्नता का अनुभव करने का प्रयास करें। क्योंकि जितने भी प्राणी मुक्त हुए हैं, वे सभी भेद-विज्ञान के बल पर ही हुए हैं।

हम और आगे विचार करें, हमारे अन्दर जो विचारों का प्रवाह है, जो मन है, वह भी मैं नहीं हूँ। वह कर्म के निमित्त से उत्पन्न होने वाला विभाव है। भीतर जो राग-द्वेष, क्रोधादि चार कषाय, मोह, मद, मत्सर आदि हैं, ये सभी अपने नहीं हैं और न अपना स्वभाव हैं। तुम्हारा स्वरूप इन सबसे परे है। क्रोध आदि कषाय तुम्हारा स्वभाव नहीं है। न क्रोधी, न मानी, न रागी, न द्वेषी है आत्मा। यानी क्रोध आदि से भिन्न स्वरूप है आत्मा का। मैं सिद्ध स्वरूपी, बाह्य भाव से मुक्त, अनन्त चतुष्टय का अधिकारी, उपयोग गुण युक्त

आत्मा हूँ। द्रव्य से-एक हूँ असङ्ग हूँ, पर भाव से मुक्त हूँ। क्षेत्र से-असंख्यात निज अवगाहन प्रमाण हूँ। काल से-अजर, अमर, स्व-पर्याय परिणामी हूँ। भाव से-शुद्ध चैतन्य मात्र निर्विकल्प हूँ। यही हर जीव का परिचय है, हर जीव की पहचान है। यही आत्मबोध है, यही आत्मज्ञान है।

हालाँकि आत्मस्वरूप का बोध हो जाने के पश्चात् सुख-दु:ख को कैसे भोगना? यह प्रश्न ही खड़ा नहीं होता। क्योंकि आत्मज्ञाता होता है, उसे स्वत: सम्बोध प्राप्त हो जाता है। उस साधक पर कभी सुख-दु:ख हावी नहीं होता है। सुख-दु:ख उस साधक को कभी विचलित नहीं कर सकते। जीवन्त दृष्टान्त है गजसुकुमाल का। पर अभी हम न तो इतने आत्मद्रष्टा बन पाये और न सुख-दु:ख का सामना करने की कला में निष्णात हो पाये। अत: आत्मबोध का स्वरूप समझ लेने के बाद सुख-दु:ख को कैसे भोगना-इसको भी संक्षिप्त विवेचन से समझ लेते हैं।

यह हमेशा याद रखें-सुख और दु:ख अर्थात् अनुकूलता और प्रतिकूलता, ये वैभाविक परिणतियाँ हैं। अर्थात् हर जीव का कर्म-विपाक है, जो पुण्य (सुख) और पाप (दु:ख) का उदय रूप है। जब तक जीव के जन्म-मरण का प्रवाह होगा, तब तक ये उदय रूप जीव के सामने आता रहेगा। ज्ञानी जन कहते हैं कि सुख-दु:ख (पुण्य-पाप) का आना, न आना हमारे हाथ की बात नहीं है, क्योंकि जो बीज बोये गये हैं, उसकी फसल तो आयेगी ही। **मगर सुखी-दु:खी होना, न होना हमारे हाथ की बात है।** सुख-दु:ख वेदनीय कर्म के उदय से आते हैं मगर सुखी और दु:खी होना मोहनीय कर्म का प्रभाव है। सुखी और दु:खी होना, यह मन की करतूत है, पराधीनता का परिचायक है, अज्ञानता का बोझ है, विभाव दशा है और भ्रान्त धारणा का सूचक है। क्योंकि अभाव में सुखी भी देखे जाते हैं और सम्पन्नता में दु:खी भी देखे जाते हैं। यह सारा मन का, विचारों का खेल है। संसारी व्यक्ति की अज्ञानता पूर्ण ऐसी लाचारी है कि मन जैसा नचाए, परिस्थितियाँ जैसा नाटक कराए, वैसा यह जीव करने लग जाता है। फलस्वरूप **यह जीव कभी रागी, कभी द्वेषी, कभी क्रोधी, कभी मानी, कभी मायावी, कभी लोभी, कभी ईर्ष्यालु तो कभी हिंसक, झूठा आदि होकर 18 ही पापों के सेवन में प्रवृत्त हो जाता है और बार-बार जन्म-मरण के प्रवाह में बहता रहता है। यही जीव यदि समत्व-साधना को साध ले तो निश्चित अनन्त चतुष्टय का प्रादुर्भाव कर सदा के लिए सिद्धत्व में प्रतिष्ठित हो सकता है।**

इसके लिये हम तीन सूत्र ध्यान में रखें-आत्मबोध, आत्मसंयम और आत्मविश्वास अर्थात् अनुकूलता-प्रतिकूलता को साधने के लिए साधना जरूरी है और उस साधना में आत्मबोध आवश्यक है, जिसकी चर्चा हमने की है। अब अनुकूलता और प्रतिकूलता में क्रमश: आत्म-संयम और आत्मविश्वास पर विचार करना जरूरी है।

अष्टसम्पदाधारी गुरु हीरा मंगलकारी

आचार धर्म की दृढ़ता से पालन
श्रुतज्ञान का करते अवगाहन
व्यक्तित्व तुम्हारा है आकर्षक
ओज तेज से दीप्त आनन, प्रेरक प्रभावी है प्रवचन
वैराग्य भाव का होता सिञ्चन
वाचना की दक्षता में, आपका तो नाम है
मति-सम्मति से देते शंका को विराम है
प्रत्युत्पन्नमति गुरुवर्य से हम पाते सहज समाधान
हित संवर्धन में लीन सदा जो करते हैं संघ को वर्धमान
अष्ट सम्पदा वैभव सम्पन्न गुरु हीरा संघ विभूषित
गौतम से प्रभु फरमाते
अरिहंत प्रतिनिधि आचार्य सुशोभित

-संकलनकर्त्ता, मनमोहन बाफना, कानपुर

ISSN 2249-2011

प्रवचन

पुण्य संसार घटाता है और जीवन को अच्छा बनाता है

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. द्वारा जोधपुर में वर्ष 2019 के चातुर्मास में 'सुपुण्यशाली की होती धर्म में मति' विषय से सम्बद्ध अनेक प्रवचन फरमाए गए थे। उनमें से इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर द्वारा किया गया है। -सम्पादक

स्थूल एवं सूक्ष्म दोनों दृष्टियों से पदार्थ का निरूपण करने वाले अनन्त अनन्त उपकारी वीतराग भगवन्त और स्थूल से सूक्ष्मता में अवगाहन कराने वाले आचार्य और उपाध्याय भगवन्तों के चरणों में वन्दना करने के पश्चात्-

कुछ-कुछ थोकड़ों की जानकारी रखने वाले श्रावक जी पुण्य की हेयता के धुआँधार प्रचार से कुछ प्रभावित हुए, पुण्य काटने का रास्ता ढूँढ़ रहे थे। पुण्य तो इकट्ठा है ही और भी हो ही रहा है, इसके रहते मोक्ष होगा नहीं, तब इसको काटें कैसे? यह चिन्ता उन्हें सता रही थी। संयोग से बहुश्रुत युवाचार्यश्री का नगर में प्रवास हुआ। सन्त-सेवा के रसिक श्रावकजी युवाचार्य श्री के चरणों में उपस्थित हुए। संयोगवश साधक श्री कन्हैयालालजी लोढ़ा भी वहाँ उपस्थित थे। हमें उन्होंने यह वार्ता सुनाई थी। उन मोक्षाभिलाषी श्रावकजी ने युवाचार्यश्री जी से पूछा पुण्य काटने का रास्ता बताइए। युवाचार्य श्री चुप रहे। श्रावक जी ने पुन: निवेदन किया- महाराज सा पाप काटने के, पाप नाश के तरीके तो आगम में पढ़े हैं- नवकार में **'सव्वपावप्पणासणो'**, तस्स उत्तरी में **'पावाणं कम्माणं णिग्घायणट्ठाए'** उत्तराध्ययन एवं दशवैकालिक में भी तप से पाप का क्षय की बात सुनी है, पर आजकल सुनने को मिल रहा है कि पाप छोड़ने की बात तो अन्य मति भी करते हैं, किन्तु उनका मोक्ष नहीं होता, क्योंकि उन्हें पुण्य बुरा लगता नहीं। कृपासिन्धु फरमाओ-पुण्य कैसे कटेगा? युवाचार्य जी आगम में निष्णात थे, कर्मग्रन्थों के विशारद थे, पुन: चुप ही रहे, श्रावक जी की उपेक्षा कर बैठे रहे। विनम्रता से श्रावक जी के तीसरी बार पूछने पर मुनिराज (युवाचार्य श्री) बोले, हमारी मर्यादा नहीं है, किसी को पाप करने की प्रेरणा करने की, पर आपको पुण्य काटने का तरीका चाहिए तो पुण्य काटने का एक ही तरीका है-'खूब पाप करो।' श्रावक जी अनमने से हो गये, बोले- 'आपको किसने युवाचार्य बना दिया? पाप करने से पुण्य काटने का कह रहे हो।' युवाचार्यश्री समता में अवस्थित रहे और उन्होंने फरमाया-'आप कहीं से भी खोज कर लें, पाप से ही पुण्य कटते हैं, संवर-निर्जरा से पापास्रव रुकता है, पाप कर्म कटते हैं। हमने तो आगमों में ऐसे ही पढ़ा है। शुक्लध्यान के तीसरे चरण में योग निरोध के साथ पुण्य का आस्रव रुक जाता है, किन्तु चौदहवें गुणस्थान के अन्त तक उत्कृष्ट अनुभाग का उदय चलता रहता है। यात्रा पूरी होने पर पुण्य प्रकृतियाँ पूर्ण हो जाती हैं, काटने का साधन तो पाप ही है। **जो लोग पुण्य को हेय कह रहे हैं, वे कृपया तेरहवें गुणस्थान के अन्त तक के सम्यग्दृष्टि जीव के शुभयोग-शुभ आस्रव रोकने का तरीका या विधि बतायें।** पतन को छोड़ उत्थान में, प्रत्येक गुणश्रेणी में, शुभयोग और प्रशस्त लेश्या ही तो रहती है। शुभ योग के अभाव में भी, उत्कृष्ट संक्लेश में भी जीव के स्वभाव से पुण्य प्रकृतियाँ बन्धती हैं, किन्तु वहाँ पुण्य प्रकृतियों का अनुभाग हीन या जघन्य होता है।

जहाँ पर संक्लेश सर्वाधिक है, योग पूरी तरह अशुभ हैं। पाप प्रकृतियों के बन्ध योग्य का अनुभाग उत्कृष्ट है। पुण्य प्रकृतियों की स्थिति एकेन्द्रियादि जीवों के बन्ध अनुसार उत्कृष्ट है, किन्तु बन्ध योग्य अनुभाग जघन्य है। इसके विपरीत इन-इन जीवों के उत्कृष्ट

विशुद्धि के समय एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक उत्कृष्ट स्थिति से थोड़ी कम (पल का असंख्यातवाँ भाग) तथा नारकी, देव अन्त:कोटाकोटि सागर स्थिति के साथ अपने-अपने प्रायोग्य पाप का जघन्य अनुभाग और पुण्य का उत्कृष्ट अनुभाग बाँधते हैं।

सभी जीवों में कषाय की कमी होने पर उनका उत्थान होता है। शुभयोग से ये जीव ऊपर उठते हैं। सातवीं नरक जैसी निकृष्ट स्थिति वाले भी अपने योग्य उत्कृष्ट विशुद्धि में मनुष्य गति प्रायोग्य बन्ध करते हैं।

उत्कृष्ट विशुद्धि में क्षपक श्रेणी करने वाला जीव सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान के अन्त में 14 पाप और 3 पुण्य की प्रकृतियाँ बाँधता है। पाप का अनुभाग जघन्य होता है, स्थिति भी जघन्य होती है जबकि पुण्य का अनुभाग उत्कृष्ट होने के साथ स्थिति जघन्य होती है।

यह तो नवीन बन्ध की चर्चा हुई, पर इस विशुद्धि से पहले बाँधी हुई सत्ता में अवस्थित प्रकृतियों में बन्ध की 1 आवलिका बीतने के पश्चात् परिवर्तन होता है, संक्रमण हो सकता है। **पाप प्रकृतियों की स्थिति और अनुभाग कम होता है। पुण्य प्रकृतियों की स्थिति कम होती है, अनुभाग बढ़ता है।** अबध्यमान पाप प्रकृतियाँ बध्यमान पुण्य प्रकृतियों में संक्रान्त होती हैं।

आयु कर्म अनेक विशेषताओं से कुछ भिन्न प्रकार का है। शेष 7 कर्मों की प्रकृतियाँ कषाय बढ़ने पर स्थिति बन्ध अधिक अधिक करती हैं। पाप का अनुभाग बढ़ता है, पुण्य का अनुभाग घटता है। यह जीव के लिए अशुभ है, पापकारी है अत: कहा-'अशुभ: पापस्य' अर्थात् अशुभ योग पाप का आस्रव करता है। चूँकि **पुण्य और पाप का निर्धारक तत्त्व अनुभाग है। अस्तु, पाप का अनुभाग बढ़ना और पुण्य का अनुभाग घटना यह अशुभ योग की देन है।**

शुभ योग, कषाय के घटने पर होता है। कषाय का घटना विशुद्धि है। यह विशुद्धि 7 कर्मों की उत्तर प्रकृतियों की स्थिति कम-कम कराती है, पाप का अनुभाग घटाती है, पुण्य का अनुभाग बढ़ाती है। अस्तु, पुण्य संसार घटाता है और घटे हुए संसार को अच्छा बनाता है। पुण्य से संसार बढ़ता है यह जिनवाणी का अपलाप है, कर्म सिद्धान्त की अवहेलना है।

अयोग अवस्था 12वें, 13वें गुणस्थान में अशुभ योग की पूर्ण समाप्ति होने पर ही मिल सकती है। क्षपक श्रेणी में 8वें गुणस्थान से ही अशुभ योग की पूरी छुट्टी हो जाती है। कषायों के समूल नाश की तैयारी प्रारम्भ हो जाती है तब 8वें गुणस्थान के छठे भाग में 29 पुण्य प्रकृतियाँ अपने उत्कृष्ट वैभव के साथ, उत्कृष्ट अनुभाग की बँधती हैं। उस समय उनकी स्थिति अन्त:कोटाकोटि (1 करोड़ सागर से ऊपर) की बँधती है। इतनी लम्बी स्थिति जीव को कहीं नहीं अटकाती। इस भव की आयु पूर्ण होने के साथ पूरी हो ही जाती है। अन्तर्मुहूर्त से लेकर देशोन क्रोड़ पूर्व में सारी स्थिति पूरी हो ही जाती है। किन्तु अनुभाग उत्कृष्ट कायम ही रहता है, सत्ता समाप्ति पर पूरा उत्थान करा कर ही अलग होता है।

आगे बढ़ने पर साता वेदनीय 12 मुहूर्त की जब दसवें गुणस्थान के अन्त में बँधती है तब वह साता वेदनीय स्वयं तो उत्कृष्ट अनुभाग की होती ही है, असाता को साता में संक्रमित करती है, असाता की स्थिति घटाती है, अनुभाग घटाती है। पहले बन्धी साता की स्थिति घटाती है, अनुभाग बढ़ाती है।

अब देखिये, यदि उस जीव की आयु 12 मुहूर्त्त से अधिक शेष रही है तो यहाँ बँधी साता की स्थिति तो पूरी हो जाती है, उसका अनुभाग स्थिति पूर्ण होने पर पूरा हो ही जाएगा, किन्तु पहले बाँधे हुए का जो अनुभाग इसने बढ़ाया वह उत्कृष्ट अनुभाग चौदहवें गुणस्थान तक कायम रहेगा।

शुभयोग कभी भी संसार बढ़ा ही नहीं सकता, क्योंकि शुभयोग स्थिति घटाता है। पूर्व में विगत दिनों में स्पष्ट कर ही चुके हैं कि **पुण्य से प्राप्त सामग्री का दुरुपयोग, उसकी ममता, उसका गर्व, उसकी आसक्ति उसमें जीवन बुद्धि आदि पाप तत्त्व हैं, पुण्य**

नहीं, अशुभ हैं, संसार बढ़ाने वाले हैं।

'जिणवयणे अणुरत्ता' की प्रेरणा है-जिनके जीवन से प्रेरित हों, उनकी साधना-आराधना से अनुप्राणित हों। प्रत्येक तीर्थङ्कर दीक्षा के पूर्व एक वर्ष तक वर्षीदान देते ही हैं, किन्तु इनसे पूर्व भी वे सामग्री के सदुपयोग में सदा तत्पर रहते ही हैं। उत्तराध्ययन के 18वें अध्याय में विपुल सामग्री प्राप्त 10 चक्रवर्ती, 4 प्रत्येक बुद्ध सहित अनेक राजा-महाराजाओं की चर्चा हुई। जिन्होंने पूर्व के पुण्य के फलस्वरूप प्राप्त सामग्री का सदुपयोग कर, उससे अपने को ऊपर उठाकर पुण्य को उत्कृष्ट किया और संसार का अन्त किया।

एक बार उत्कृष्ट होने के बाद पुण्य की वह उत्कृष्टता 14वें गुणस्थान तक कायम ही रहने वाली है। **केवलज्ञान से पूर्व 32 पुण्य प्रकृतियों का अनुभाग उत्कृष्ट होना अनिवार्य है।** मनुष्यायु, तिर्यञ्चायु, आतप, उद्योत का उत्कृष्ट अनुभाग पहले गुणस्थान में, मनुष्य द्विक, औदारिक द्विक, वज्रऋषभनाराच संहनन का चौथे गुणस्थान में और देवायु का सातवें गुणस्थान में होता है। इन 10 पुण्य प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग के बिना भी जीव क्षपक श्रेणी चढ़ सकता है। देव एवं नरक गति से आकर मोक्ष जाने वाले तीर्थङ्कर, चक्रवर्ती आदि के वहाँ के भव में मनुष्यद्विक, औदारिकद्विक, वज्रऋषभ नाराच संहनन मनुष्य पंचक का उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध भी हो सकता है। ऐसे मोक्ष जाने वाले जीव के 37 प्रकृतियों का उत्कृष्ट अनुभाग होता है।

युवाचार्य श्री ने फरमाया-ऊपर उठने से पुण्य कटता ही नहीं है। कम्मपयडी में कहा-'सम्मदिट्ठी णो हणइ सुभाणुभागे' सम्यग्दृष्टि शुभ का अनुभाग नहीं घातता अर्थात् सम्यग्दृष्टि जीव पुण्य को नहीं काट सकता। दशवैकालिकसूत्र के चौथे अध्ययन की 20वीं गाथा में-

जया संवरमुक्किट्ठं, धम्मं फासे अणुत्तरं।
तया धुणइ कम्मरयं, अबोहिकलुसं कडं।।

अर्थात् जब साधक उत्कृष्ट संवर रूप अनुत्तर धर्म का स्पर्श करता है तब अबोधिरूप पाप (कलुष) द्वारा किए हुए (सञ्चित) कर्मरज को (आत्मा से) झाड़ देता है (पृथक् कर देता है)। दशवैकालिक सूत्र के अध्ययन 6 की गाथा 68 में-

खवेंति अप्पाणममोहदंसिणो,
तवे रया संजम अज्जवे गुणे।
धुणंति पावाइं पुरेकडाइं,
नवाइं पावाइं ण ते करेंति।।

अर्थात् व्यामोह रहित तत्त्वदर्शी तथा तप, संयम और आर्जव गुण में रत रहने वाले वे साधु अपने शरीर को क्षीण (कृश) कर देते हैं। वे पूर्वकृत पापों का क्षय कर डालते हैं और नए पाप नहीं करते।

श्रावक जी का सम्यक् समाधान हुआ। वे पुनः पुनः क्षमायाचना करके भावविभोर हुए। पुण्य खुटाने से मोक्ष नहीं मिलता, पाप खुटाने से मोक्ष मिलता है। पाप को खुटाकर पुण्य तो आयु पूर्ण होने के साथ स्वतः खुट जाता है।

तत्त्वार्थसूत्र में पण्डित सुखलालजी संघवी भी फरमा रहे हैं-योग के शुभत्व और अशुभत्व का आधार भावना की शुभाशुभता है। शुभ उद्देश्य से प्रवृत्त योग शुभ और अशुभ उद्देश्य से प्रवृत्त योग अशुभ है।

'कार्य-कर्मबन्ध की शुभाशुभता पर योग की शुभाशुभता अवलम्बित है।' ऐसा मानने से सभी योग अशुभ ही कहे जाएँगे, कोई शुभ कहा न जा सकेगा; क्योंकि शुभयोग भी आठवें आदि गुणस्थानों में अशुभ ज्ञानावरणीय आदि कर्मों के बन्ध का कारण होता है। हिंसा, चोरी, अब्रह्म आदि कायिक व्यापार अशुभ काययोग और दया, दान, ब्रह्मचर्य पालन आदि शुभ काययोग हैं। सावद्य भाषण, मिथ्या भाषण, कठोर भाषण आदि अशुभ वाग्योग और निरवद्य सत्य भाषण, मृदु तथा सभ्य आदि भाषण शुभ वाग्योग है। दूसरों की बुराई का तथा उनके वध का चिन्तन आदि करना अशुभ मनोयोग है और दूसरों की भलाई का चिन्तन तथा उनका उत्कर्ष देखकर प्रसन्न होना आदि शुभ मनोयोग है। शुभ

योग का कार्य पुण्य प्रकृति का बन्ध और अशुभ योग का कार्य पाप प्रकृति का बन्ध है। ऐसा प्रस्तुत सूत्रों का विधान आपेक्षिक है, क्योंकि कषाय की मन्दता के समय होने वाला योग शुभ और कषाय की तीव्रता के समय होने वाला योग अशुभ कहलाता है। जैसे अशुभ योग के समय प्रथम आदि गुणस्थानों में ज्ञानावरणीय आदि सभी पुण्य, पाप प्रकृतियों का यथासम्भव बन्ध होता है वैसे ही छठे आदि गुणस्थानों में शुभयोग के समय भी सभी पुण्य, पाप प्रकृतियों का यथासम्भव बन्ध होता ही है। फिर शुभयोग का पुण्य के बन्धकारण रूप से और अशुभ योग का पाप के बन्ध कारण रूप से अलग-अलग विधान कैसे सङ्गत हो सकता है।

इसलिये प्रस्तुत विधान को मुख्यतया अनुभाग बन्ध की अपेक्षा से समझना चाहिए। **शुभयोग की तीव्रता के समय पुण्य प्रकृतियों के अनुभाग रस की मात्रा अधिक और पाप प्रकृतियों के अनुभाग की मात्रा हीन निष्पन्न होती है। इससे उलटा अशुभ योग की तीव्रता के समय पाप प्रकृतियों का अनुभाग बन्ध अधिक और पुण्य प्रकृतियों का अनुभाग बन्ध अल्प होता है।** इसमें जो शुभयोग जन्य पुण्यानुभाग की अधिक मात्रा और अशुभयोग जन्य पापानुभाग की अधिक मात्रा है, उसका प्राधान्य मानकर सूत्रों में अनुक्रम से शुभयोग को पुण्य का और अशुभ योग को पाप का बन्धकारण कहा है। शुभयोगजन्य पापानुभाग की हीनमात्रा और अशुभयोगजन्य पुण्यानुभोग की हीन मात्रा विवक्षित नहीं है; क्योंकि लोक की तरह शास्त्र में भी प्रधानता से व्यवहार करने का नियम प्रसिद्ध है।

भक्ति, विनय, बहुमान सङ्ग,
प्रभु वीर वाणी रमता चलूँ
श्रुत का पठन, चिन्तन गहन,
उपसर्ग परीषह सहता चलूँ
वृत्तियाँ हों कम, मिट जाए गम,
मुक्ति का साधन और कहाँ।

श्रावक की कतिपय विशेषताएँ

कोमल जैन

1. एक श्रेष्ठ श्रावक प्रातःकाल जल्दी उठकर सामायिक करता है, स्वाध्याय करता है तथा परिवार के सदस्यों को भी प्रार्थना, वन्दना, सामायिक आदि से जोड़ता है।
2. वह प्रतिदिन नवकार महामन्त्र का जाप अपने परिवार के साथ घण्टा-आधा घण्टा करने का लक्ष्य रखता है।
3. श्रावक सप्त कुव्यसनों का त्यागी, 15 कर्मादान, 18 पाप स्थानों को त्यागकर राग से वैराग्य की ओर, भोग से योग की ओर, संसार के दंश से परमात्मा के अंश की ओर तथा कर्मसत्ता की कठोर मार से बचने के लिए धर्मसत्ता की निर्मल, पवित्र, कोमल राह पर अपने क़दम बढ़ाता है।
4. एक श्रेष्ठ श्रावक में सुपात्रदान की भावना कूट-कूट कर भरी होती है। वह साधु-साध्वियों के लिए हितकारी एवं लाभकारी भावना का समावेश रखकर सुपात्रदान की उत्तम भावना भाता है।
5. सांसारिक कार्यों में जहाँ भी धर्म का पोषण हो, अनर्थ दण्ड का पाप लगता हो, ऐसे कार्यों से तुरन्त पीछे हट जाना और ऐसे कार्यों की अनुमोदना भी नहीं करना।
6. त्याग-तपस्या आदि के निमित्त से उपहार, भेंट प्राप्त करने की लालसा मन में नहीं रखना, क्योंकि धर्माराधना का वास्तविक लक्ष्य ही आत्मा का पोषण करना है न कि शारीरिक सुख-सुविधाओं को पोषित करना।
7. एक उत्तम श्रावक की एक श्रेष्ठ निशानी होती है कि वह साधु-साध्वियों की धर्माराधना एवं तपश्चर्या में सहायक बनता है, उनको सांसारिक कर्मकाण्डों के बारे में बता कर पाप का भागी नहीं बनाता है।

10 मार्च 2022
जिनवाणी 26
ISSN 2249-2011

प्रवचन

पंजाब और राजस्थान के सन्तों का मधुर व्यवहार

विद्वद्वर्य श्री जयमुनिजी म.सा.

विद्वद्वर्य श्री जयमुनिजी म.सा. जब तपस्वी श्री प्रकाशमुनिजी म.सा. के साथ जोधपुर पधारे थे, तब उनके द्वारा सामायिक-स्वाध्याय भवन, घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.) में 10 मार्च, 2009 को फरमाये गये प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सहसम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता द्वारा किया गया था। -सम्पादक

आज होली चौमासी का दिन है। यद्यपि आगमों में होली शब्द का कहीं कोई जिक्र नहीं मिलता, पर फिर भी चौमासी का जिक्र है। चौमासी तीन होती हैं। आषाढ़ी चौमासी, कार्तिक चौमासी और आज की यह फाल्गुनी चौमासी। इन तीनों चौमासियों में सामान्य मानव को पहचान कराने के लिए इस चौमासी को होली चौमासी कह दिया। आषाढ़ी चौमासी और कार्तिकी चौमासी तो चातुर्मास में आती हैं। आषाढ़ी चौमासी से चातुर्मास प्रारम्भ होता है, कार्तिकी चौमासी पर चातुर्मास उठता है। इन दो चौमासियों का श्रावक-श्राविकाओं को लाभ मिल जाता है। दोनों चौमासियों में श्रावक-श्राविकाओं में उत्साह होता है। पर, तीनों चौमासियों का लाभ मिले, इसलिए कई संघ विनति करते हैं। पूज्य तपस्वीराज ब्यावर पधार रहे थे तब पाली श्रीसंघ होली चौमासी की विनति लेकर आया। पूज्य श्री ने स्वीकृति नहीं दी। क्योंकि उनका यहाँ जोधपुर करने का भाव था। इस क्षेत्र से महाराज श्री के मन में बहुत पहले से एक धार्मिक लगाव रहा। यहाँ का संघ जिन महापुरुषों की आराधना कर रहा है उन इतिहास मार्तण्ड, सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज साहब से हमारा पुराना सम्बन्ध रहा है। हमारा इस संघ से प्रेम रहा है। वैसे साधु बिना आत्मीयता-प्रेम के रहता नहीं, हमारा सबके साथ प्रेम है, लेकिन आपका और हमारा हृदय का प्रेम कुछ अधिक रहा है। जरूरत है कि प्रेम किसी से करें तो उसका इजहार भी करें। महाराज श्री ने जोधपुर को केन्द्र बिन्दु बनाया और घोड़ों के चौक में होली चौमासी करनी है, भावना व्यक्त की। एक दिन महाराज श्री ने फरमाया था कि घोड़ों के चौक, जोधपुर से धर्म के नाते ही नहीं, संसार के नाते भी सम्बन्ध रहा है। महाराज श्री की सांसारिक दादी घोड़ों के चौक की बेटी थी, फिर वे बहू चाँदनी चौक की बनी। उस परिवार का पूछा तो महाराजश्री ने कहा-मुझे पता नहीं। महाराज श्री सांसारिक सम्बन्धों को बहुत ज्यादा याद नहीं रखते। इस व्यक्तित्व में कितनी वीतरागता है? निर्लेपता है? महाराज श्री यहाँ पधार गये हैं, आप भी इनका दीदार कर रहे हैं, प्रवचन श्रवण का लाभ लें।

हमारा विषय चल रहा है-छह आवश्यक। पहला आवश्यक है-सामायिक। दूसरा चउवीसत्थव, तीसरा है वन्दना। घोड़ों के चौक में आने के बाद में हम इसी विषय का विवेचन कर रहे हैं। वन्दना से विनय धर्म की जागरणा होती है। यह सभ्यता का मूल है। आप पिता का विनय करते हैं तो आपका विनय घरेलू सभ्यता को बताता है। विद्यार्थी शिक्षक का विनय करता है, प्रजा राजा का विनय करती है तो यह व्यवस्था-सञ्चालन का खूबसूरत तरीका है। आगम में कहा-यदि संघधर्म निभाना है तो उसे गुरु के पास आना होता है। एक श्रावक ही नहीं, छोटे-से-छोटा बच्चा भी जब धर्म के निकट आता है तो

वह सामायिक, प्रतिक्रमण, आलोचना आदि नहीं जानता, उसे सबसे पहले वन्दन का व्यवहार सिखाया जाता है। सिर झुकाना, माथा टेकना, वन्दन व्यवहार है। जैन का हर बच्चा नमस्कार महामन्त्र और तिक्खुत्तो का पाठ जन्मघूँटी में लेकर आता है। शायद आपको याद नहीं होगा कि आपने नमस्कार मन्त्र और तिक्खुत्तो का पाठ कब सीखा था? अन्य-अन्य पाठों के बारे में कह सकते हैं कि यह पाठ उस गुरु से सीखा, प्रतिक्रमण उस गुरु के पास बैठकर याद किया, लेकिन नवकार मन्त्र और तिक्खुत्तो का पाठ तो बचपन में कब सीखा कहा नहीं जा सकता। इसलिये कहा जाता है कि ये दो पाठ तो बच्चा जन्मघूँटी से सीखकर आता है।

नमस्कार महामन्त्र और तिक्खुत्तो का पाठ हमारा प्राण तत्त्व है, जिन्दगी है, संस्कृति है, सभ्यता है। हम इन पाठों की मर्यादा समझें। वन्दन भी एक विधि है, एक भाव है। विधि के पहले भाव आना चाहिये। भाव है तो विधि भी आ जायेगी।

एक बार हमारे स्थविर महाराज आचार्यप्रवर हस्तीमलजी महाराज के चरणों में मेड़ता में विराजमान थे, तब धर्म चर्चा में एक प्रसङ्ग आ गया। पंजाब के साधु घुटने टेककर वन्दन करते हैं, इधर खड़े होकर बैठकर वन्दन करते हैं। आचार्यश्री से पूछा-आप किसी विधि को सही मानते हैं?

आचार्यश्री ने कमाल कर दिया। तुरन्त फरमाया-दोनों विधियाँ शुद्ध हैं, सही हैं। आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. ने पंजाब-राजस्थान के संयुक्त संस्कारों को अपने जीवन में गुजारा था।

हमारी दोनों परम्पराओं के महापुरुषों का मिलना हुआ। पूज्य श्री मयारामजी महाराज का संयुक्त चातुर्मास आचार्य श्री विनयचन्द्रजी महाराज के साथ 1887 में इसी जोधपुर की आहोर की हवेली में था। रत्नसंघ के श्री कनीरामजी महाराज पंजाब-दिल्ली-हरियाणा पधारे थे। हमारे आचार्य श्री अमरसिंहजी महाराज के चादर समारोह पर रत्नसंघीय श्री कनीरामजी महाराज विराजमान थे। हमारी परम्पराओं के बहुत पुराने सम्बन्ध रहे हैं।

दोनों परम्पराएँ शुद्ध हैं। मैं चाहे बैठकर प्रवचन करूँ या खड़े होकर, उसमें कोई फर्क नहीं पड़ता। 1933 में अजमेर में सम्मेलन होना था। उधर से पूज्य काशीरामजी, व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलालजी, गणी श्री उदयचन्दजी महाराज राजस्थान की धरती पर पधारे थे। किशनगढ़ में आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज से प्रेम जुड़ गया था तो साथ-साथ अजमेर पधारे। अजमेर में जोधपुर का श्रीसंघ पहुँचा। जोधपुर श्रीसंघ ने विनति रखी, हम उपाध्याय श्री आत्मारामजी महाराज एवं व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलालजी महाराज का चातुर्मास चाहते हैं। यह बात सन् 1933 एवं विक्रम सम्वत् 1990 की है।

जोधपुर श्री संघ की भाव भरी विनति से उपाध्याय श्री आत्मारामजी महाराज एवं व्याख्यान वाचस्पति श्री मदनलालजी महाराज पधारे तो हवाओं में नई तरंग-उमंग जगी। उपाध्याय श्री पुष्करमुनिजी मेड़ता-पीपाड़ पधारे। पीपाड़ पूज्य आचार्यश्री हस्तीमल जी महाराज का जन्म स्थान है वहाँ पर इकट्ठे प्रवचन हुए। पीपाड़ में आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज के सन्त श्री लक्ष्मीचन्दजी महाराज अस्वस्थ हो गये। रियां के बुजुर्ग श्रावक वैद्य थे, उन्हें बुलाया गया। उपचार से स्वास्थ्य ठीक हुआ तब आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज सन्तों के साथ जोधपुर पधारे। जोधपुर में भव्य चातुर्मास हुआ। उन महापुरुषों की परस्पर श्रद्धा देखकर जोधपुर वासी भाव विभोर हो जाते थे। दो परम्पराओं के दो टोले होते हुए भी किसी को यह अहसास नहीं हुआ कि ये अलग-अलग परम्पराओं के सन्त हैं जिनकी समाचारी अलग, परम्परा अलग, पर जहाँ उदारता होती है तो वहाँ परम्परा और समाचारी गौण हो जाती है।

सन् 1933 में व्याख्यान वाचस्पति पूज्य श्री मदनलालजी महाराज का चातुर्मास सिंहपोल हुआ। सन् 1953 में छह महामुनियों का जोधपुर में संयुक्त चातुर्मास हुआ। सिंहपोल के स्थानक में बिच्छु बहुत थे, पर चार महीने तक किसी सन्त को एक बार भी बिच्छु का प्रकोप नहीं सताया। यह महापुरुषों की कृपा है। लोग जिन बिच्छुओं से डरते, उनसे मुनिराजों को कोई डर नहीं। मुनिराजों में वीतरागता है, निर्भयता है इसलिए कोई उनका बाल-बांका नहीं कर सकता।

सन् 1933 में जोधपुर चातुर्मास में उपाध्याय श्री आत्मारामजी प्रवचन में फरमाते, प्रवचन की जिम्मेदारी श्री मदनलालजी महाराज की थी। आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज ने अपने बड़े सन्त भोजराजजी महाराज, लक्ष्मीचन्दजी महाराज को उपाध्याय श्री और व्याख्यान वाचस्पति श्री के साथ पाली तक भेजा। जोधपुर से पाली करीब अस्सी किलोमीटर है। इतनी दूर तक भेजा, आज तो स्थानक से नीचे छोड़ने जायें तो लोगों को नहीं, कई सन्तों को समाचारी का पसीना छूट जाता है। पर उन महापुरुषों की उदारता देखिये। उन महापुरुषों की उदारता ने समाज का निर्माण किया। सादड़ी सम्मेलन में उन महापुरुषों का मिलन हुआ। सोजत में मन्त्री मण्डल के मुनियों का सम्मेलन हुआ। सोजत के बाद व्याख्यान वाचस्पति जी महाराज जयपुर की ओर पधार रहे थे। किशनगढ़ के आगे दूदू के रास्ते में पड़ासोली गाँव जहाँ हम इस बार होकर आए वहाँ पर जोधपुर समाज के श्रावक पहुँचे। जोधपुर के श्रावकों ने पूज्य श्री मदनलालजी महाराज के श्रीचरणों में विनति रखी कि आपके बिना जोधपुर का चातुर्मास अधूरा रह जायेगा। श्रावकों की पुरजोर विनति के कारण उन्हें वापस लौटना पड़ा।

सन् 1953 का चातुर्मास पुराने श्रावकों को याद है। उस समय छह महामुनियों का यहाँ चातुर्मास था। चातुर्मास में बीस-बीस हजार लोग व्याख्यान सुनने आते थे। इतनी विशाल जनमेदिनी को वे ही सुना सकते हैं, जिनकी आवाज बुलन्द होती है। मेरे जैसे पाँच सौ को सुना दें तो बहुत है।

हम इतिहास में झाँक कर देखते हैं आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज जब श्रमण संघ में थे तब दिल्ली पधारे। विक्रम सम्वत् 2015 में जैसे ही आचार्यश्री महरौली पधारे। उस समय व्याख्यान वाचस्पतिजी दिल्ली विराज रहे थे, उन्होंने अपने दो सन्तों को सामने भेजा जो चाँदनी चौक तक लेकर पधारे। श्री रामप्रसादजी महाराज ने रास्ते में आहार-विहार की सारी व्यवस्था की। हमारे पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शनलालजी महाराज आठ साल से वहाँ विराज रहे थे। वे अपने दादा गुरु जग्गूमलजी म.सा. की सेवा में थे। हमारी परम्परा के सन्त उन्हें बाबाजी महाराज बोलते थे। उस समय पूज्य तपस्वी श्री प्रकाशमुनिजी महाराज जो आपके सामने विराजमान हैं इनकी दीक्षा हो चुकी थी। आप सन्तों की गोचरी की सेवा का लाभ उठाते थे। सब घर दिखाने साथ-साथ जाते थे। श्रद्धेय श्री अमरचन्दजी म.सा. की सेवा में रात को बैठते थे। अपूर्व आनन्द आता था।

हमारा कई बार मिलना हुआ। वन्दना कैसे करना, इस प्रश्न के उत्तर में आचार्यश्री हस्तीमलजी महाराज ने कहा-वन्दना दोनों तरह से की जा सकती है। तीन बार वन्दना करने का विधान है, वह ज्ञान-दर्शन-चारित्र की प्राप्ति के लिए है। तीन बार वन्दना मन-वचन-काया से की जाती है। आप वाणी के साथ काया से वन्दन करें, मन से वन्दन करें फिर देखें कितना आनन्द आता है?

नमंति फलिनो वृक्षाः नमन्ति गुणिनो जनाः।
शुष्कवृक्षाश्च मूर्खाश्च न नमन्ति कदाचन।।

जो झुकता है समझना चाहिये वह गुणवान है। फल आने पर पेड़ झुकता है, ठूँठ क्या झुकेगा? इसी तरह गुणवान झुकता है।

जो बड़ों का विनय करता है, वह आयु, विद्या, यश और बल की वृद्धि करता है। इन चारों की वृद्धि करना है तो विधियुक्त भावपूर्वक वन्दना करें। कई हैं जो कहते हैं-'मत्थएण वंदामि।' यह सबसे छोटी वन्दना है।

वन्दना भी तीन तरह की होती है। एक है जघन्य वन्दना, एक मध्यम और एक उत्कृष्ट। मत्थएण वंदामि जघन्य वन्दना है। तिक्खुत्तो के पाठ से जो वन्दना की जाती है वह मध्यम वन्दना है और इच्छामि खमासमणो के पाठ से वन्दना की जाती है वह उत्कृष्ट वन्दना है। मूर्तिपूजक समाज में इच्छामि खमासमणो के पाठ से वन्दना की जाती है, पर वे शुरु-शुरु के दो-तीन अक्षर बोलते हैं और वन्दन मान लेते हैं। इच्छामि खमासमणो का पाठ गजब का है।

'इच्छामि खमासमणो वंदिउं' मैं आपकी वन्दना करना चाहता हूँ। आप जहाँ ध्यान-मौन करते हैं, उसमें मुझे थोड़ी-सी जगह की इजाजत दीजिये। हे गुरुदेव! मैं आपकी काया का चरणों का स्पर्श करूँगा। गुरुदेव! मैं आपके चरणों का स्पर्श करूँगा तो आपको दिक्कत होगी, आप मुझे क्षमा कर देना। आपका पूरा दिन, पूरी रात सातापूर्वक गुजर गई होगी, आपकी धर्म यात्रा ठीक चल रही होगी। आपका जाप ठीक चल रहा होगा। जाप क्या है? अठारह पापों को मन-वचन-काया से हटाना जाप है। हे गुरुदेव! मुझसे कोई दोष लगा हो तो क्षमायाचना करता हूँ। मैंने आपकी कोई आशातना की है तो उसके लिए क्षमायाचना करता हूँ। दशाश्रुत स्कन्ध में आता है गुरुदेव के बराबर नहीं बैठना, गुरुदेव के आगे नहीं बैठना। गुरु के बिना आज्ञा के नहीं बैठना। बिना आज्ञा के प्रश्नोत्तर भी नहीं करना, स्वाध्याय भी बिना आज्ञा नहीं करना। आशातना मन से, वचन से, काया से की है तो उसके लिए क्षमायाचना करना। क्रोध-मान-माया-लोभ की वजह से आशातना की हो उसके लिए क्षमायाचना।

गुरु चरणों में आते वक्त वन्दन करें और जाते वक्त भी वन्दन करें। वन्दन का पाठ हमारे जीवन को उज्ज्वल बनाता है। वन्दन में विधि-विधान का उतना महत्त्व नहीं, महत्त्व है श्रद्धा का। महत्त्व है भावों का।

पंजाब सम्प्रदाय के पूज्य काशीरामजी महाराज के पहले आचार्यश्री सोहनलालजी महाराज हुए। उस वक्त उनकी शासन व्यवस्था थी। चारित्र चूड़ामणि पूज्य श्री मयारामजी महाराज ने हिन्दुस्तान में धर्म का प्रचार किया। राजस्थान, मारवाड़, मेवाड़, हरियाणा, पंजाब को सींचा।

एक बार राजस्थान का लम्बा विचरण करने के पश्चात् पूज्य श्री मयारामजी महाराज पंजाब पधारे। पंजाब में उस वक्त एक उच्चकोटि के सन्त थे-श्री लालचन्दजी महाराज। किसी कारण से आचार्य श्री सोहनलालजी महाराज ने लालचन्दजी महाराज का वन्दन-व्यवहार, आहार-पानी अलग कर दिया। आचार्य श्री सोहनलालजी महाराज धुन के पक्के थे। पूज्य मयारामजी महाराज पंजाब पधारे। आचार्य श्री सोहनलालजी महाराज उस समय अमृतसर विराज रहे थे। आचार्य श्री सोहनलालजी महाराज को एहसास हो गया कि श्री मयारामजी महाराज की बात को टाला नहीं जा सकता। श्री मयारामजी महाराज उनके चरणों में पहुँचे। आचार्यश्री पाट पर विराजमान थे। श्री मयारामजी महाराज ने वन्दना की, उन्होंने मुँह फेर लिया। श्री मयारामजी महाराज ने यह नहीं सोचा कि मैं तो भावपूर्वक वन्दना कर रहा हूँ, आचार्यश्री ने मुँह फेर लिया। वे वहाँ से उठते हैं आचार्यश्री का जिधर मुँह था फिर वन्दन करते हैं। आचार्यश्री आँख से आँख नहीं मिलाना चाहते थे, इसलिए मुँह फेर लिया। मयाराम जी फिर सामने गये, वन्दना शुरु की। आज किसी की वन्दना न झेले तो सामने वाला कुम्भला जाता

है। आचार्य श्री बार-बार मुँह फेरते गये और मयारामजी भावपूर्वक वन्दन करते गये। आचार्यश्री ने देखा मैंने चारों तरफ चक्कर काट लिया, लेकिन मयारामजी महाराज के भावों में कोई अन्तर नहीं आया। आचार्यश्री बोले-क्या चाहते हो?

मयारामजी महाराज ने कहा-आपने जो फैसला लिया, उस पर पुनर्विचार कर लीजिये।

आचार्यश्री सोहनलालजी महाराज कहने लगे-जो तूं कहता है वह ठीक। जब हालात कठोर हो जाय, ट्रेफिक जाम हो जाय उस समय भावपूर्वक की गई वन्दना समस्या का समाधान कर देती है। आचार्य श्री कहने लगे-ऐसा विनयशील नहीं देखा। मेरे पूज्य गुरुदेव संघशास्ता श्री सुदर्शनलालजी म.सा. का जीवन भी विनय से लबालब भरा था। उनके चरणों में एक गीत के कुछ बोल हैं-

जीवन है इक पहेली, संसार इक झमेला।
हल और समाधि देने वाला था तू अकेला।।

जीना कितना यहाँ पर.....

(तर्ज :: उम्र थोड़ी-सी हमको मिली थी...)

श्री त्रिलोकचन्द जैन

जीना कितना यहाँ पर, करे कौन तय।
हर समय ही तो रहता, है मरने का भय।।
सूर्य उगता सुबह, शाम को वो ढले।
यूँ ही घूम रहा, उम्र का यह वलय।।टेर।।

धन कमाने की धुन भी, ऐसी लगी,
सात पीढ़ी की दौलत, सिरहाने पड़ी।
रात आई वही, भोर जिसकी नहीं,
प्राण छूटे अचानक, हुआ जो प्रलय।।1।।

इस तन को दिखाने की, भ्रमणा बहुत,
भोग को भोगने की, तमन्ना बहुत।
रुह भी रूठ के, नेह को तोड़ के,
खाली करके चली, देखो देह निलय।।2।।

कौन पुरजन परिजन, या स्वजन मेरे,
मोह ममता या स्वार्थ में, सब जन घिरे।
सब बदलते हैं रंग, कौन है अपने सङ्ग,
टूटता एक दिन, सूत का यह प्रणय।।3।।

ज़िन्दगी कितनी जी है, ये गिनती न कर,
यह पल ही है सत्य, न आगामी पल।
श्वास है बेवफ़ा, क्या करेगी वफ़ा,
मौत जिनकी महोत्सव, उन्हीं की विजय।।4।।

-37/67, रजत पथ, मानसरोवर, जयपुर-302020

झुका नहीं करता

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'

सौभाग्य जब साथ में मेरे नहीं रहता,
मैं कर्म से होकर विरत, तब भी नहीं रहता।
मैं समय के सीने पर देता हूँ दस्तकें,
दुर्भाग्य के आगे, कभी झुका नहीं करता।।

जिओ और जीने दो का भाव है मन में,
मैं किसी के भी मरने की दुआ नहीं करता।
आये जो सामने विपत्ति, लड़ता हूँ उससे,
वीर का वंशज हूँ, कभी झुका नहीं करता।।

बढ़ रही ताकत तुम्हारी जानता हूँ मैं,
तुम्हें होगी जरूरत, मैं कभी परवाह नहीं करता।
ताकतें किसकी रहीं स्थिर जमाने में,
आत्म बल वाला हूँ मैं, झुका नहीं करता।।

आने वाले आते हैं, तो आने दो उन्हें,
जाने वाले जाते हैं, तो जाने दो उन्हें।
जो स्वयं की शक्ति से है खड़ा पैरों पर,
आतंक के आगे, कभी झुका नहीं करता।।

डरने वाले डराते हैं, ताकत से जमाने को,
मैं नहीं डरूँ तो, कोई डरा नहीं सकता।
मरने वाले से बड़ा है बचाने वाला,
मैं समय के साथ हूँ, झुका नहीं करता।।

-महारानी फार्म, जयपुर-302019 (राज.)

10 मार्च 2022
जिनवाणी 31
ISSN 2249-2011

प्रवचन

राग त्याज्य, अनुराग उपादेय

श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के शिष्य श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. द्वारा 31 अगस्त, 2021 को राता उपासरा पीपाड़सिटी में फरमाये गये प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया।

-सम्पादक

अहिंसा-अनेकान्त-अपरिग्रह के उपदेशक, धर्म-संघ के प्रतिष्ठापक, अनन्त-अनन्त उपकारी तीर्थेश प्रभु महावीर को वन्दन। आस्था के धाम, समाधि के आयाम, अनन्त उपकारी आचार्य भगवन्त को वन्दन-नमन। वासना के वातावरण में से निकलकर, उपासना के उपाश्रय में उपस्थित होकर ऊपर उठने का उपदेश देने वाले रत्नाधिक मुनिपुंगवों को वन्दन-नमन।

धर्मप्रेमी सज्जनों!

हमारा विषय चल रहा है-''जल्दी और देर से।'' आज हम राग और वैराग्य पर चिन्तन करेंगे। देखिए, आदमी राग जल्दी करता है और वैराग्य-भाव लाने में देरी करता है। राग की आग से सम्पूर्ण संसार दहकता है तो वैराग्य के बाग से सम्पूर्ण जीवन महकता है।

राग और द्वेष ये दो कर्म-बीज हैं। जब तक बीज हरा-भरा रहता है तो वृक्ष भी हरा-भरा रहेगा। उस वृक्ष के पत्ते-फूल-टहनियाँ सब हरी-भरी रहेंगी। राग ज्यों-ज्यों बढ़ता है त्यों-त्यों व्यक्ति की गृद्धि-आसक्ति बढ़ती है। राग की आग में व्यक्ति क्या करता है? ज्ञानीजन कहते हैं कि आग में गिरा व्यक्ति बच जाय, यह सम्भव है, पर राग में पड़ा हुआ व्यक्ति बच नहीं सकता।

आपको राग और वैराग्य का स्वरूप समझना है तो आपको राग से अनुराग में आना होगा और अनुराग से वैराग्य-भाव की ओर चलना होगा। आप इस विषय पर चिन्तन करें तो आपको शरीर और संसार का स्वरूप देखना होगा। तत्त्वार्थसूत्र कहता है-''**जगत्काय-स्वभावौ च संवेगवैराग्यार्थम्।**'' (अध्ययन 7, सूत्र 7) आचार्यश्री उमास्वाति कहते हैं-चाम और चीर देखोगे तो राग होगा और चाम को चीरकर देखोगे तो वैराग्य होगा।

यह हमारा शरीर है। व्यक्ति शरीर पर मान करता है, पर भला क्या यह शरीर सदा एक-सा रहेगा? शरीर में बदलाव होता रहता है। बच्चा बड़ा होकर बूढ़ा बन जाता है और बूढ़े की इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं। आपको खोज करनी चाहिए। जैसे आप भोजन करते हैं और भोजन पचता नहीं, तो अजीर्ण होगा। भगवान ने ऊनोदरी-तप इसीलिए बताया है। फिर, शरीर पर राग क्यों? बात यह है कि राग आता बहुत जल्दी से है, लेकिन वैराग्य-भाव देर से आता है।

शरीर परिवर्तनशील है तो संसार में भी परिवर्तन होता रहता है। आप शरीर का मूल्याङ्कन करें तो आपको लगेगा कि वय सम्पन्नता में जब इन्द्रियाँ शीतल और शिथिल हो जाती हैं तो अशुचि के निवारण में भी मुश्किल आती है। शरीर की तरह से संसार के परिवर्तन को भी रोका नहीं जा सकता।

पुण्यधरा पीपाड़ में प्राय: हर दिन प्रवचन की धारा प्रवाहित होती रही है। यहाँ सन्त-मुनिराजों का या महासतियाँजी म.सा. का आना-जाना होता रहता है। आप भक्ति-भाव से प्रवचन सुनते हैं और जिनवाणी क्या कहती है, आपको समझ में भी आता है। सुनकर-समझकर आचरण में लाने पर ही सुनी-सुनाई बात कारगर होती है।

आपको याद होगा-श्रद्धेयश्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने कुछ दिनों पहले फरमाया था कि आचार्य भगवन्त का चातुर्मास है तो जिनमें शक्ति है वे

मासक्षपण-तप की साधना करें और यदि तप करने की शक्ति नहीं तो क्रोध-कषाय का त्याग करें। मैं यहाँ नाम लेकर कह रहा हूँ भाई दिलखुशजी बरड़िया ने क्रोध-कषाय का त्याग किया है। क्रोध का त्याग करने वाले अन्य कषायों का त्याग भी करें। त्याग से वैराग्य-भाव आता है। जितना अच्छा वैराग्य हमें शरीर सिखाता है उतना अच्छा वैराग्य न सन्त सिखा सकते हैं और न ही ग्रन्थ। अजीर्ण होने पर हमें शरीर सिखाता है। भोजन में राग से अति मात्रा में आहार किया-अजीर्ण होने पर शरीर में रोग आया, इसलिए राग का त्याग होना ही चाहिए। जगत् और काया के स्वभाव का चिन्तन करने से संवेग रूप वैराग्य-भाव जागृत होता है। न शरीर बुरा है, न संसार। बुरा है तो शरीर और संसार के प्रति रहा हुआ राग। आप जब राग-मुक्त होने का प्रयास करेंगे तो धीरे-धीरे ही सही वैराग्य-भाव से जुड़ना होगा।

वैराग्य-भाव देर से आता है जबकि राग तुरन्त आ जाता है। किसी के अच्छे वस्त्र या आभूषण देखें तो उन पर राग हो जाता है। किसी का अच्छा मकान देखा, वैसा मकान बनाने की भावना होती है।

बन्धुओं! राग विनाशी है, अनुराग अविनाशी। आपको सन्त-सतीवृन्द पर राग होता है तो भी आपको सावधान हो जाना चाहिए। सन्त-सती पूजनीय हैं, उनके प्रति राग नहीं, अनुराग होना चाहिए। आप श्रावक हैं, श्रावक की गुरु भगवन्तों के प्रति अटूट आस्था और अगाध भक्ति होती है। भक्ति भी ऐसी कि वह हड्डी-मांस तक पहुँचे। यह नहीं कि आपको महाराज अच्छे लगते हैं तो आप उन पर राग करें। महाराज के साथ महाराज के महाव्रत अच्छे लगते हैं तो वह राग नहीं, अनुराग है। गुणवान के प्रति राग अनुराग में बदलना चाहिए। आप नमोत्थु णं का पाठ बोलते हैं उसमें आता है-तिन्नाणं-तारयाणं। आप यदि रागी हैं तो आपका राग अनुराग में तब्दील होगा तो ही आपको साधु के महाव्रत अच्छे लगेंगे, नहीं तो साधु के साथ केवल राग डूबाणं-डूबियाणं में परिवर्तित हो सकता है। आप श्रमणोपासक हैं, अतः साधु के साथ साधु के महाव्रत-पालन को भी अच्छा मानना चाहिए।

बन्धुओं! व्यक्ति को संसार में राग जल्दी होता है। आप अभी यहाँ धर्म-सभा में बैठे हैं। रोज जिस जगह बैठते हैं, उस जगह से यदि राग है तो वह भी दुःख का कारण होगा। मान लें, आपकी जगह कोई अन्य बैठ गया तो आप विचार में पड़ जायेंगे कि मेरी जगह यह क्यों बैठा?

राग दुःखदायी होता है जबकि अनुराग में दुःख नहीं होता। क्योंकि अनुराग में राग की तरह न जुड़ाव होता है, न लगाव। यहाँ हमें समझना है कि राग जल्दी क्यों होता है? व्यक्ति-वस्तु-परिस्थिति से हमारा लगाव है तो उसका कारण है अनादिकाल के हमारे राग के संस्कार। आगमकार कहते हैं-राग जगे तब सोचना है कि यह मेरा नहीं है और द्वेष जगे तब सोचना है कि सब मेरे हैं। दशवैकालिकसूत्र की गाथा कहती है-

न सा महं नो वि अहं पि तीसे।
इच्चेव ताओ विणएज्ज रागं।।

देखिए, राग बढ़ाने के सूत्र हैं तो राग घटाने के सूत्र भी हैं। राग का काम होता है-दूर वालों को नजदीक लाना। द्वेष का काम है-नजदीक वालों को दूर करना। आप जानते हैं, कई मानते भी हैं कि मोक्ष-मार्ग में बाधक कारण है तो वह राग है। पशुओं में बाघ, पक्षियों में काग, उरपरिसर्प में नाग, त्यौहारों में फाग, जीवन में दाग और मोक्ष-मार्ग में राग बाधक कारण है। आप सुज्ञ हैं, इसलिये लम्बी-चौड़ी व्याख्या करने का न तो अभी समय है और न ही अवसर, फिर भी आपको इतना जरूर कहना है कि राग के भी तीन प्रकार हैं। 1. काम-राग, 2. स्नेह-राग, 3. दृष्टि-राग। सबसे पहले दृष्टि-राग होता है। जब दृष्टि में स्नेह का सम्बन्ध स्थापित हो जाता है तो उसे आप स्नेह-राग कह सकते हैं। स्नेह-राग ही काम-राग में बदलता है। यह क्रम है। इसी क्रम में संसार की भूमिका प्रारम्भ होती है।

राग त्याज्य है। छोड़ने में सबसे पहले काम-राग

छोड़ा जाता है, फिर स्नेह-राग और अन्त में दृष्टि-राग। यह क्रम पहले के क्रम से उल्टा है। काम-राग को घटाने का सूत्र है-विजातीय का संघट्टा नहीं करना। हम सन्त किसी बहन के कपड़े का पल्ला तक नहीं छूते और साध्वी है तो वह किसी पुरुष का संघट्टा नहीं करती। काम-राग छूटने या छोड़ने का पहला सूत्र है-विजातीय का संघट्टा नहीं करना। दूसरा है-स्नेह-राग। इसे घटाने का सूत्र है कि विजातीय की कथा नहीं करें। दृष्टि-राग घटाने का सूत्र है-विजातीय का चित्र तक नहीं देखें।

जहाँ भी स्थानक में विजातीय चित्र है वहाँ साधु-साध्वी निवास नहीं करते। इसके पीछे कारण है कि विजातीय का चित्र देखने से दृष्टि-राग उत्पन्न हो सकता है। व्यक्ति सामने नहीं है, परन्तु उसका चित्र सामने है तो उस स्थिति में दृष्टि-राग उत्पन्न हो सकता है।

देखिए, राग जल्दी आता है, वैराग्य-भाव लाने में देर होती है। हाँ, वैरागी पहले रागी होता है और राग से अनुराग में ढलते-ढलते वीतरागता की ओर बढ़ा जा सकता है।

आप आज के सूत्र को न केवल सुनें, अपितु समझें और आचरण में भी उतारने का प्रयास करें। राग-अनुराग में ढले, अनुराग में वैराग्य पले, वैराग्य वीतराग की ओर चले तो अनन्त सौख्य का पराग खिले, इसी मंगल मनीषा के साथ.....।

84वाँ जन्म-दिवस

शुद्ध संयम के पर्याय : आचार्यश्री हीरा

श्रीमती अंशु संजय सुराणा

गुरुवर हस्ती का पाया सान्निध्य,
अन्तर में प्रकटाई संयम की ज्योति।
हर्षित होकर आज्ञा दे दी,
माँ मोहिनी और पिता मोती।।

मिल गया अवसर उत्तम,
छोड़ उसे अब क्यों भरमाना।
कर लिया निश्चय हीरा ने,
अब आगे ही बढ़ते है जाना।।

जीवन का बस अब एक ही लक्ष्य,
रत्नत्रयी की आराधना।
गुरु कृपा से वृद्धि को पाई,
आत्म भावों की साधना।।

गुरु मन को भा गए हीरा,
सेवा और स्वाध्याय से।
हस्ती ने फिर जोड़ा संघ को,
एक नये अध्याय से।।

गुरु चरणों को माना हीरा ने,
सदा ही सबसे उत्तम शरण।
पद सौंपा गुरुवर ने तीसरा,
देखकर सम्यक्त्व आचरण।।

रत्नसंघ के सिरमौर हैं,
गुणगाथा की आपकी न ओर है न छोर है।
सबको उजाला देती ऐसी सुहानी भोर है,
पिछली अवस्था में भी तप संयम का अद्भुत जोर है।।

स्वास्थ्य में समाधि रहे,
अन्तर से मंगल कामना।
तव चरणों में भक्तगण सारे,
भाते यही शुभ भावना।।

त्यागा संसार छोड़े रिश्ते, जिस सिद्धत्व को पाने को।
निश्चय मञ्ज़िल शीघ्र मिलेगी, मुक्ति के दीवाने को।।

-महावीर नगर, टोंक रोड़, जयपुर-302018 (राज.)

ISSN 2249-2011

84वाँ जन्म-दिवस

'विज्जाचरण-पारगा' परमाराध्य आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आचार्य पदग्रहण के तीन दशक[1]

श्री हस्तीमल गोलेछा

महान् योगी, युगमनीषी, इतिहास मार्तण्ड, पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. के प्रमुख शिष्य एवं रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. विद्या एवं आचरण में पारङ्गत हैं। वे आगमों के ज्ञाता भी हैं और आचारनिष्ठ भी। पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. के महाप्रयाण के पश्चात् ज्येष्ठ कृष्णा 5 विक्रम सम्वत् 2048 को आप आचार्यपद से अलङ्कृत हुए। आपके 30 चातुर्मास (अब 31 चातुर्मास) पूर्ण हो गए हैं, जो अनेक उपलब्धियों से परिपूर्ण रहे हैं। राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक आदि प्रान्तों में पादविहार कर आपने स्थानक में आकर सामायिक करने की सार्थक प्रेरणा की है। अनेक ग्राम-नगरों में जैन-अजैन बन्धु व्यसनमुक्त होकर पारिवारिक, आर्थिक एवं सामाजिक संकटों से मुक्त हुए हैं तथा धर्म के मार्ग पर अग्रसर हुए हैं। स्वाध्याय की आप सतत प्रेरणा करते हैं। आप प्रतिवर्ष बहुसंख्य आजीवन-शीलव्रती बना रहे हैं। निस्पृहता, स्वाध्यायशीलता, आचार की दृढ़ता आदि अनेक गुणों से सम्पन्न होकर आप जिनशासन के गौरव बने हुए हैं।

साधु के अनेक करणीय कार्यों में दो कार्य मुख्य हैं एक सेवा दूसरा स्वाध्याय। स्वाध्याय में तो आपश्री निशदिन विनय और बहुमानपूर्वक तत्पर रहते हैं। ठाणाङ्गसूत्र के 5वें ठाणे के दूसरे उद्देशक में आचार्य, उपाध्याय के पाँच अतिदेश बताए हैं। आचार्य, उपाध्याय इच्छा होवे तो अपने आज्ञानुवर्ती सन्तों की सेवा करे, इच्छा नहीं हो तो नहीं करे। किन्तु आपने सेवा से भी अत्यन्त प्रेरणादायी मिशाल कायम की है।

आचार्य पद ग्रहण करने के पश्चात् के विशिष्ट ज्ञातव्य-

1. विक्रम सम्वत् 2048 का आचार्यप्रवर और उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा. का संयुक्त चातुर्मास घोड़ों का चौक जोधपुर में हुआ। उस वर्ष जोधपुर में लू का प्रकोप बहुत अधिक था। सन्तों का स्वास्थ्य अनुकूल नहीं होने के कारण आप स्वयं ने श्रद्धेय श्री ज्ञानमुनिजी, श्रद्धेय श्री दयामुनिजी, श्रद्धेय श्री कैलाशमुनिजी म.सा. की सेवा की। रायपुर हवेली से श्रद्धेय श्री जौहरीमुनिजी, श्रद्धेय वीरपुत्र पण्डित रत्न श्री घेवरचन्दजी म.सा. ने पधारकर स्वयं ने सेवा का रूप देखा और प्रसन्नता प्रकट की।
2. विक्रम सम्वत् 2049 में बालोतरा चातुर्मास महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. जो स्वयं सेवाभावी (अब भावी आचार्य) हैं, उनका स्वास्थ्य अनुकूल नहीं होने के कारण आचार्य भगवन्त स्वयं गोचरी पधारते। संघ में शान्ति रहे, इसके कारण पाठशाला के शिलापट्ट के लिए भी श्रावकों को लगाने से मना किया।
3. विक्रम सम्वत् 2050 में लाल भवन, चौड़ा रास्ता-जयपुर में श्रावकों का उत्साह हर आत्म-जागरण में अनूठा ही दृष्टिगोचर हुआ।
4. विक्रम सम्वत् 2051 का चातुर्मास विजयनगर में

1. सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा 30 मई, 2021 को 'आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. एवं उनके संघनायकत्व के तीन दशक' विषय पर आयोजित ऑन लाइन वेबिनार में प्रस्तुत वक्तव्य का लिपिबद्ध रूप।

खुला लेकिन पण्डित रत्न श्री शुभेन्द्रमुनिजी म.सा. के स्वास्थ्य सम्बन्धी कारणों के चलते सेवा कार्य हेतु चातुर्मास विजयनगर नहीं कर नेहरु पार्क जोधपुर में किया। गुरुभक्त श्री मूलचन्दजी, प्रसन्नचन्दजी बाफना का सर्वतोभावेन विशेष योगदान रहा। श्री नौरतनजी मेहता ने प्रवचन लेखन का कार्य किया।

5. विक्रम सम्वत् 2052 का चातुर्मास-विजयनगर में हुआ। संघ की भक्ति हर क्षेत्र में क़ाबिल-ए-तारीफ़ रही। पण्डितरत्न श्री शुभेन्द्रमुनिजी म.सा. का भोपालगढ़ चातुर्मास था। स्वास्थ्य अधिक खराब होने के कारण चातुर्मास में तपस्वी श्री प्रकाशमुनिजी म.सा. को विजयनगर से भोपालगढ़ के लिए विहार करवाया। सौभाग्य से मुझे विहार सेवा का लाभ मिला। तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. ने अग्लान भाव से सेवा, समर्पणता द्वारा पण्डितरत्न मुनिश्री को संलेखना संथारा कराकर पण्डित मरण में सहयोग किया और ग्यारह दिन का संथारा आया।

6. विक्रम सम्वत् 2053 अजमेर चातुर्मास में बारह व्रत ग्रहण करने हेतु आपश्री की प्रेरणा से तीन सौ से अधिक श्रावक-श्राविका बारह व्रती बने। संघ मन्त्री श्री जीतमलजी चौपड़ा द्वारा प्रवचन में हमेशा नयी पद्य रचना से स्तुति की गई। अजमेर संघ के साथ श्री रतनलालजी रांका की भक्ति उल्लेखनीय रही।

7. विक्रम सम्वत् 2054 का चातुर्मास पीपाड़सिटी में हुआ, जो आचार्यभगवन्त श्री हस्ती-हीरा की जन्मस्थली तथा आचार्य हीरा की दीक्षा भूमि भी है। संघ-संरक्षक सेवा-शिरोमणि श्री मोफतराजजी मुणोत की जन्मभूमि होने से वे स्वयं भी पीपाड़ विराजे। सेवाभावी श्राविकारत्न श्रीमती शरदचन्द्रिकाजी मुणोत ने समझकर सम्यक् धर्म ग्रहण किया, जिसका लन्दन में अन्तिम श्वासोच्छ्वास तक पालन किया।

8. विक्रम सम्वत् 2055 में मदनगंज-किशनगढ़ के संयुक्त चातुर्मास में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की योजना बनी। इसी चातुर्मास के पश्चात् किशनगढ़ शहर में किसी घटना को लेकर आपने फरमाया था 'ऐसा व्यवहार करो बाहर में किसी की इज्जत नहीं जाये और भीतर में अवगुण नहीं रहे।'

9. विक्रम सम्वत् 2056 के नागौर-चातुर्मास पूर्व आप बीकानेर पधारे। उस समय मैं विहार में था। देशनोक में फरमाया 20 वर्ष बाद जन-जीवन की क्या हालत होगी? उन्हीं का सजीव रूप अभी प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हुआ। कोरोना की पहली लहर की समाप्ति पर अनन्य भक्त भाई श्री महावीरजी मकाणा को भी मैंने यह बात कही थी। चातुर्मास में तत्कालीन बहन पुष्पाजी बाघमार को महासती श्री जागृतिप्रभाजी म.सा. के दीक्षा के वरघोड़े को देखकर वैराग्य उत्पन्न हुआ। सम्प्रति महासती श्री मुदितप्रभाजी म.सा. के रूप में जिनशासन की प्रभावना कर रही हैं। नागौर संघ के उत्साह के साथ में सुश्रावक श्री उमरावमलजी, श्री डूँगरमलजी का समर्पण विशेष रहा।

10. विक्रम सम्वत् 2057 में जलगाँव में आचार्य-उपाध्याय भगवन्त का संयुक्त चातुर्मास हुआ। स्थानकवासी समाज में किसी आचार्य के द्वारा प्रेरणा करने पर श्रावकों की सामायिक हेतु 'भाऊ मण्डल की स्थापना' हुई। जलगाँव संघ के प्रयत्न एवं संघ के मेढ़ीभूत संघरत्न श्री रतनलाल सी. बाफना की विशेष प्रेरणा से सामायिक करने वालों की संख्या 700 तक पहुँची। जलगाँव पधारने वाले किसी भी परम्परा के सन्त-सती हों उनके लिए यह रविवारीय सामायिक आकर्षण बन गई जो बदस्तूर आज भी जारी है। सम्वत्सरी प्रतिक्रमण के दिन आचार्यप्रवर ने दो प्रतिक्रमण करने वालों को अपने नेश्राय का अपना कमरा खाली कर उन्हें प्रतिक्रमण करने हेतु स्थान उपलब्ध कराकर बहुत बड़ी

उदारता का परिचय दिया।

11. विक्रम सम्वत् 2058 में धूलिया में पुन: संयुक्त चातुर्मास हुआ। अनन्य गुरुभक्त श्री कान्तिलालजी चौधरी ने संघ को साथ लेकर चातुर्मास को सफल बनाने में पूर्णरूपेण समर्पण किया। अपने सभी व्यापारिक प्रतिष्ठान बन्द कर सपरिवार सेवा में जुटे। उस क्षेत्र में उन्होंने लगभग 500 किलोमीटर तक की विहार सेवा की। यह सभी भगवन्त के अतिशय का परिणाम है।
12. विक्रम सम्वत् 2059 के बालकेश्वर, मुम्बई चातुर्मास के अन्तर्गत संघ उन्नति में हर तरह से योगदान रहा। आचार्य भगवन्त ने श्री आनन्दऋषिजी म.सा. के जन्मदिवस के उपलक्ष्य में ऋषि सम्प्रदाय का इतिहास एवं आचार्यश्री के गुणगान बहुत ही भावपूर्ण एवं विस्तारपूर्वक किए, जिनवाणी में उसके प्रकाशन पर डॉ. धर्मचन्दजी जैन ने स्वयं लिखा कि इस प्रकार अन्य परम्पराओं के प्रति विचार रखे जायें तो जिनशासन का महान् अभ्युदय होगा।
13. विक्रम सम्वत् 2060 का चातुर्मास इचलकरंजी में हुआ। प्रवचन के माध्यम से विशेष जाहोजलाली की। श्री पदमचन्दजी खाबिया का संघ को साथ लेकर चलने का विशेष समर्पण अवगत हुआ।
14. विक्रम सम्वत् 2061 का चातुर्मास बेंगलोर में हुआ। आतिथ्य सत्कार में सभी श्रावकों का उपस्थित होना गौरव की बात रही। सम्पूर्ण स्थानकवासी समाज को साथ लेकर चातुर्मास सम्पन्न हुआ। संघ प्रमुख श्री चेतनप्रकाशजी डूँगरवाल एवं संघ रत्न माननीय श्री गणेशमलजी भण्डारी की सेवा चिरस्मरणीय रहेगी।

    खरतरगच्छ के तत्कालीन उपाध्यायप्रवर श्री मणिप्रभसागरजी ने कहा कि इस वर्ष शूले-बेंगलोर में स्थानकवासी समाज के बहुत बड़े आचार्य विराज रहे हैं। वे सम्वत्सरी सम्बन्ध में जो निर्णय करें, वह मान्य है।

    रत्नसंघ के अलावा भाई लूणावतजी, किशनलालजी कोठारी, महावीरचन्दजी रूणवाल प्रभृति श्रावकों का समर्पण रहा।
15. विक्रम सम्वत् 2062 का चेन्नई चातुर्मास सभी स्थानकवासी समाज को साथ लेकर हुआ। मारवाड़ के भोपालगढ़, कोसाना, नाड्सर, नागौर आदि के प्रवासी यहाँ ज्यादा थे, जो अपने आराध्य को सुदूर अपनी कर्मभूमि में देखकर फूले नहीं समाते थे।

    अनन्य गुरुभक्त, स्वाध्याय रसिक, लब्ध प्रतिष्ठ अधिवक्ता श्री पी. शिखरमलजी सुराणा साहब का समर्पण तो देखते ही बना। वे क्रियात्मक पक्ष में प्रतिदिन प्रतिक्रमण, सामायिक, रात्रि-चौविहार त्याग करने लगे। आगे चलकर आपने सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष पद को सुशोभित किया। संघ की गतिविधि में सतत सक्रिय चरणानुरागी गुरुभक्त श्री गौतमचन्दजी हुण्डीवाल की सेवाओं को भुलाया नहीं जा सकता जो आज तक बदस्तूर जारी है।
16. विक्रम सम्वत् 2063 का चातुर्मास बंगारपेट में हुआ। घोर आश्चर्य, चौदह घरों के संघ में सफल चातुर्मास आपकी पुण्यशालिता है। बंगारपेट संघ के साथ भाई श्री सुनीलजी-अनिलजी नाहटा का समर्पण इतिहास बनाए जैसा था।
17. विक्रम सम्वत् 2064 का बीजापुर चातुर्मास अपने आपमें अनूठा चातुर्मास रहा। रूणवाल-बोथरा परिवार संघ को साथ लेकर अग्रसर थे तो भाई महावीरचन्दजी पारख द्वारा सभा सञ्चालन अनूठा रहा। कार्तिक सुदी षष्ठी दीक्षा दिवस के दिन आपने फरमाया कि मेरे नाम के आगे किसी भी प्रकार का विशेषण नहीं लगाया जाय। आपकी विशेषणों के प्रति निस्पृहता का उदाहरण प्रस्तुत हुआ।
18. विक्रम सम्वत् 2065 का कान्दिवली, मुम्बई चातुर्मास अविस्मरणीय रहा। इतने बड़े महानगर में मारवाड़ से भी अधिक सुन्दर व्यवस्था। संघसेवा शिरोमणि दानवीर भामाशाह श्री मोफतराजजी

मुणोत ने अपने विशाल परिसर में साध्वाचार की विशुद्ध समाचारी के अनुसार जो व्यवस्था की वह क़ाबिले तारीफ़ थी। श्री सुमेरसिंहजी बोथरा, श्री कैलाशचन्दजी हीरावत की पुनः पुनः उपस्थिति संघसेवा हेतु होती रही। एक दिन प्रवचन में फरमाया-''संघ-विकास के योगदान में सभी का सहयोग होने से ही उन्नति होती है। हाथ की पाँच अंगुलियाँ मिले तो कार्य आसानी से होता है। संघ में छोटे से छोटे कार्यकर्त्ता की सेवा को भी झुठलाया नहीं जा सकता।''

19. विक्रम सम्वत् 2066 का अहमदाबाद चातुर्मास विशिष्ट रहा। अनन्य गुरु भक्त श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक श्री पदमचन्दजी कोठारी अपने संघ प्रतिनिधि मण्डल के साथ बहुत समय से चातुर्मास के लिए प्रयासरत रहे। आखिर चिर प्रतीक्षित अभिलाषा पूर्ण हुई। चातुर्मास काल में गुरुदेव पालड़ी स्थानक में विराजे। कोठारी जी ने छोटे से छोटा कार्य करने में भी अपनी गुरुभक्ति समझी। पालड़ी संघ के साथ रत्नसंघ के सभी परिवारों को साथ लेकर रामभक्त हनुमान जैसा परिचय दिया। यहाँ उल्लेख करना चाहूँगा कि इसके बाद भी जब-जब रणसीगाँव में श्रद्धेय आचार्य भगवन्त पधारे, जितने दिन विराजे, सपरिवार आपने गाँव में रहकर सेवा की।

20. विक्रम सम्वत् 2067 का पाली-मारवाड़ चातुर्मास हुआ। गुरुदेव का दस वर्ष के लम्बे अन्तराल के पश्चात् राजस्थान पधारना हुआ। जोधपुर संघ कई वर्षों से निरन्तर चातुर्मास के लिए प्रयासरत था। साध्वीप्रमुखा, शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. भी वहाँ विराजमान थे। परन्तु पाली संघ का अहोभाग्य रहा जो चातुर्मास पाली में हुआ। माननीय श्री रूपकुमारजी चौपड़ा एवं अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के तत्कालीन अध्यक्ष भाई श्री राजकुमारजी गोलेच्छा प्रभृति श्रावकों के विशेष सद्प्रयास से और पालीसंघ के सभी परिवारों के उत्साह से चातुर्मास सानन्द सम्पन्न हुआ।

21. विक्रम सम्वत् 2068 में जोधपुर को सोलह वर्षों के पश्चात् चातुर्मास प्राप्ति हुई एवं लम्बे अन्तराल के बाद जोधपुर पधारने के कारण सम्पूर्ण जोधपुर संघ बहुत उत्साहित था। पूज्य आचार्यप्रवर पावटा स्थित श्री झूमरमलजी बाघमार सामायिक-स्वाध्याय भवन विराजे। संघ की रीति-नीति के अनुरूप उल्लेखनीय उपलब्धि रही श्री पारसमलजी गिड़िया पावटा के प्राण साबित हुए।

22. विक्रम सम्वत् 2069 का चातुर्मास जयपुर को मिला। विक्रम सम्वत् 2055 के पश्चात् बहुत लम्बे समय के बाद चातुर्मास का योग मिला। आचार्य भगवन्त राजकँवर-केवलमल लोढ़ा सामायिक-स्वाध्याय भवन, महावीर नगर विराजे। पर्युषण पर्वाराधन हेतु लाल भवन तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. आदि ठाणा विराजे। सम्पूर्ण जयपुर संघ में उत्साह का वातावरण था। सुज्ञ गुरुभक्त श्री विमलचन्दजी डागा का प्रवचन सभा सञ्चालन अद्वितीय रहा।

वीर परिवारों के सम्मान-सत्कार करने हेतु विशेष अधिवेशन हुआ। चातुर्मास-व्यवस्था समिति के संयोजक आदरणीय श्री कैलाशचन्दजी हीरावत, संरक्षक श्री सुमेरसिंहजी बोथरा एवं लोढ़ा परिवार की सेवा अविस्मरणीय रही।

23. विक्रम सम्वत् 2070 का सवाईमाधोपुर चातुर्मास चिर स्मरणीय रहेगा। सम्पूर्ण पोरवाल समाज का मुख्य नगर, भक्तों का रेला, हर कार्य में आराध्य के प्रति अर्घ्य चढ़ाने को तत्पर, भक्ति की पराकाष्ठा तो देखते ही बनती थी। सैकड़ों की तादाद में रात्रि संवर करने वाले भाई, प्रार्थना से लेकर सायंकालीन प्रतिक्रमण तक उपस्थिति सराहनीय रही। श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक श्री रामदयालजी सर्राफ एवं श्री सौभाग्यमलजी जैन, कुस्तला का चातुर्मास पर्यन्त संवर में रहना एक विशेष उपलब्धि रही। पोरवाल सम्भाग के अद्वितीय उत्साह के साथ श्री

राधेश्यामजी गोटेवाला की भक्ति उल्लेखनीय रही।

24. विक्रम सम्वत् 2071 का कोटा में स्थानकवासी परम्परा के आचार्य का प्रथम चातुर्मास था। संघ में बहुत उत्साह था। सवाईमाधोपुर मूल के अनेक परिवार कोटा में होने से और भी चार चाँद लग गये। परम गुरुभक्त श्री बुद्धिप्रकाशजी जैन आदि श्रावकों का सवाईमाधोपुर से ही विहार सेवा में उपस्थित रहना एवं चातुर्मास पर्यन्त अपने साथी सदस्यों के साथ मुस्तैदी से खड़े रहना उल्लेखनीय है।।

25. विक्रम सम्वत् 2072 का चातुर्मास हिण्डौनसिटी में हुआ। यह पल्लीवाल क्षेत्र का प्रधान नगर है। आचार्य भगवन्त का प्रथम चातुर्मास होने से अदम्य उत्साह देखा गया। हिण्डौनसिटी के प्रतिनिधि मण्डल के सदस्य सवाईमाधोपुर से विनति के साथ ही विहार में संलग्न हो गए। हिण्डौन चातुर्मास एक तरह से पूरे पल्लीवाल क्षेत्र का चातुर्मास माना गया। पूरे क्षेत्र की भक्ति अतुलनीय रही। युवारत्न बन्धु भाई श्री राहुलजी जैन की हर एक के साथ हर समय उपस्थिति दृष्टिगोचर हुई।

26. विक्रम सम्वत् 2073 का चातुर्मास आचार्यश्री हस्ती की पुण्यभूमि निमाज में हुआ। गुरुकृपापात्र क्षेत्र, स्थानीय घरों की संख्या बहुत कम, प्रवासी भक्तों की भक्ति पूर्व में आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमलजी म.सा. के समय भी फलित हुई थी। इस बार पुनः भक्ति का प्रतिफल मिला। निमाज ग्राम के बाहर रहने वाले सभी आबालवृद्ध निमाज में घर खोलकर रहे। सकल संघ निमाज की भक्ति सराहनीय रही। भाई श्री तेजराजजी भण्डारी ने अपना समर्पण बदस्तूर जारी रखा। भाई श्री गणेशमलजी भण्डारी एवं भाई श्री विमलचन्दजी धोका की सेवा का परिचय श्री गौत्तमचन्दजी भण्डारी एवं भाई श्री सुभाषजी धोका ने कायम रखा।

27. विक्रम सम्वत् 2074 का भोपालगढ़ चातुर्मास क्रियोद्धार भूमि, रत्नसंघ का एकनिष्ठ क्षेत्र, साधन सम्पन्नता के साथ साधना सम्पन्न भक्तों का निवास। श्री नेमीचन्दजी कर्णावट का सभा सञ्चालन और समस्त प्रवासी भोपालगढ़वासियों का अपने ग्राम में आना तथा चातुर्मास के हर कार्य में बढ़-चढ़कर समर्पण रखना आनन्ददायक रहा। भोपालगढ़ आचार्यश्री हस्ती का कृपापात्र क्षेत्र तो है ही। पण्डित रत्न श्री शुभेन्द्रमुनिजी म.सा. के विक्रम सम्वत् 2052 के चातुर्मास में इसका विशिष्ट परिचय मिला, पण्डित मुनिश्री की रूग्णावस्था में संघ का समर्पण एवं आतिथ्य सत्कार उच्चकोटि का था। मुनि श्री नन्दीषेणजी म.सा. की भाँति तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. की सेवा का भी मुकाबला नहीं था।

28. विक्रम सम्वत् 2075 का चातुर्मास मेड़तासिटी में हुआ। यहाँ पर भी आचार्य भगवन्त का लम्बे अरसे के बाद पधारना हुआ। पूरा मेड़ता श्रीसंघ उत्साहित नज़र आया। प्रार्थना, प्रवचन, वाचनी, प्रतिक्रमण में सराहनीय उपस्थिति रही। युवकों का उत्साह तो देखते ही बनता था। भाई श्री हस्तीमलजी डोसी का सञ्चालन के साथ सेवा देने वालों में भाई श्री भीकमचन्दजी श्रीमाल एवं भाई श्री गौतमराजजी सुराणा की सेवाएँ भी अविस्मरणीय है। सम्वत्सरी के दिन श्री जतनराजजी मेहता से कृत क्षमायाचना से आपका बहुत बड़ा बड़पन्न लगता है।

29. विक्रम सम्वत् 2076 का चातुर्मास पाली को मिला। यहाँ पर भी पाली के भाग्य की सराहना किये बिना नहीं रह सकता। आचार्य भगवन्त का स्वास्थ्य समीचीन नहीं होने के कारण एवं पाली संघ की विनति जयगच्छीय उपाध्याय श्री गुणवन्तचन्दजी म.सा. की थी। उनका चातुर्मास ब्यावर संघ को मिल जाने के कारण सामायिक-स्वाध्याय भवन चातुर्मास की अपेक्षा खाली था। संघ अध्यक्ष भाई श्री छगललालजी लोढ़ा, मन्त्री भाई श्री रजनीशजी कर्णावट के साथ-साथ पूरा पाली संघ चातुर्मास के लिए तत्पर था। भक्तों के

वश में भगवान होते हैं देखने को मिला। भाई श्री रूपकुमारजी चौपड़ा और भाई श्री लाभचन्दजी गोलेच्छा की सेवा-उपस्थिति नियमित रही।

30. विक्रम सम्वत् 2077 का चातुर्मास कोसाना में हुआ। छोटा-सा ग्राम, भक्त पीढ़ियों के धोरी श्रावक, भाग्य योग से आचार्य भगवन्त का पधारना हुआ। आपने स्वास्थ्य सम्बन्धी कारणों के चलते चलकर पहुँचने की स्थिति में प्राथमिकता कोसाना चातुर्मास देने की बात फरमायी। कम घर होते हुए भी पूरा कोसाना गाँव सेवा में अग्रणी था। कोरोना महामारी के कारण सरकारी गाइड लाइन से चातुर्मास सम्पन्न हुआ। कोसाना मूल के बोहरा परिवार से रत्नसंघ सजोड़े दीक्षित श्रद्धेय श्री दर्शनमुनिजी म.सा. एवं महासती श्री सुभद्राजी म.सा. जिनशासन की महती सेवा कर रहे हैं। बाघमार परिवार एवं बोहरा परिवार का समर्पण तहेदिल से रहा।*

उपर्युक्त भगवन्त के चातुर्मासों में प्रायः साध्वी-सिंघाड़ों का भी चातुर्मास साथ रहा। विक्रम सम्वत् 2067 के पाली चातुर्मास में विद्वद् संगोष्ठियों का आयोजन भी प्रायः सभी चातुर्मासों में हुआ।

दशाश्रुत स्कन्ध में वर्णित चौथी दशा आठ सम्पदा को तो आप अक्षरशः धारण करने वाले तो हैं ही, ठाणाङ्गसूत्र के छठे ठाणे के प्रथम उद्देशक में गणधारण के छह सूत्र बताए गए हैं-1. श्रद्धावान, 2. सत्यवादी, 3. मेधावी, 4. बहुश्रुत, 5. शक्तिमान, 6. अल्पाधिकरण। ये सभी गुण भी आप में विद्यमान हैं।

जैसा पूज्य श्री कुशलोजी म.सा. का पूज्य आचार्य श्री जयमलजी म.सा. के प्रति समर्पण था, वैसे ही आपकी पूज्य उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा. के प्रति थी। सम्प्रति श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. (भावी आचार्यश्री) की आपके प्रति है।

पूज्य आचार्य भगवन्त श्री गुमानचन्द्रजी म.सा. ने 'वीरत्थुई' स्वाध्याय सुनते-सुनते वैराग्य प्राप्त किया, आपश्री भी विनय और बहुमान पूर्वक स्वाध्यायरत रहते हैं। पूज्य आचार्य भगवन्त श्री रत्नचन्द्रजी म.सा. जैसी निस्पृहता आप में है। जोधपुर महाराजा श्री मानसिंहजी के पधारने पर जो तटस्थता थी वो ही आप में भी राजस्थान के मुख्यमन्त्री श्री अशोकजी गहलोत के आने पर रहती है।

पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हमीरमलजी म.सा. जैसा समर्पण यानी गुरुभक्ति के आप उदाहरण हैं। आपने एक भी चातुर्मास पूज्य श्री रत्नचन्द्रजी म.सा. से अलग नहीं किया। आपने विक्रम सम्वत् 2044 का नागौर चातुर्मास के सिवाय एक भी चातुर्मास पूज्य गुरुदेव से अलग नहीं किया।

पूज्य आचार्य भगवन्त श्री कजोड़ीमलजी म.सा. जैसी शरीर सम्पदा, ओजस्वी वाणी, प्रवचन प्रभावकता। पूज्य आचार्य भगवन्त श्री विनयचन्दजी म.सा. जैसा वात्सल्य। वर्ष 2020 में पीपाड़शहर में मूर्तिपूजक परम्परा का कार्यक्रम था आपने अपना प्रवचन बन्द रखा।

पूज्य आचार्य भगवन्त श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. जैसी जीवन-निर्माण की कला एवं आध्यात्मिक संस्कार की प्रेरणा के आप निदर्शन हैं। पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमलजी म.सा. की तो आप प्रतिकृति हैं।

ऊँचाई पर पहुँचने के बाद सरलता, सादगी मुश्किल से रहती है। आपने भोपालगढ़ चातुर्मास में श्रद्धेय श्री रवीन्द्रमुनिजी म.सा. को कहा-दो रुपये वाली बॉलपेन लाना। यह सादगी की बहुत बड़ी मिशाल है।

भोपालगढ़ के आस-पास के क्षेत्र विचरण में भोलारामजी की देवरी, हीरादेसर, कूड़ी आदि ग्रामों में जैनेतर समाज के लोगों को अमल खाना छुड़ाना,

* 31वाँ चातुर्मास विक्रम सम्वत् 2078 का चातुर्मास जन्मभूमि पीपाड़सिटी को प्राप्त हुआ। तप-त्याग, धर्म-साधना में पीपाड़ के श्रावकों की भक्ति चातुर्मास दौरान कोरोना काल में भी प्रभावी रही। -सम्पादक

आपके व्यसन-मुक्ति अभियान की पराकाष्ठा है।

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के प्रथम अध्यक्ष श्री सोहननाथजी मोदी थे, जो न्यायमूर्ति थे तो सम्प्रति न्यायमूर्ति श्री प्रकाशचन्दजी टाटिया संघ के अध्यक्ष हैं। न्यायमूर्ति श्री जसराजजी चौपड़ा, न्यायमूर्ति श्री दलवीरजी भण्डारी, न्यायमूर्ति श्री राजेन्द्रमलजी लोढ़ा संघ संरक्षक हैं। संघ संरक्षक मण्डल के संयोजक संघ सेवा शिरोमणि श्री मोफतराजजी मुणोत हैं। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष श्री चंचलमलजी बच्छावत (अब श्री आनन्दजी चौपड़ा) हैं, यही संघ की ऊँचाई का परिचय है। डॉ. धर्मचन्दजी जैन जैसे विद्वद्वर्य जिनवाणी के सम्पादक हैं।

इस दरबार में आने वाला हर कोई भक्त नहीं होता, परन्तु यहाँ से जाने वाला हर कोई भक्त बनकर जाता है।

आपको गुरु आम्नाय हेतु निवेदन करने पर श्री अजीत कुमारजी बिरानी और मुझे गुरु आम्नाय करायी नहीं, यह आपकी निस्पृहता है, परन्तु हमने निश्चय किया कि हमारे शरीर में एक खून का कतरा भी रहेगा वहाँ तक आप ही गुरु रहेंगे।

मेरे साथी भाई श्री महावीरजी मकाणा को भी गुरु आम्नाय नहीं करायी, फिर भी उनका अद्वितीय समर्पण देखते ही बनता है। हर 15 दिन में गुरुदर्शन के लिए उपस्थित होते हैं।

आचार्य बनते ही मुझे कहा था-''थारो पेट बिना पाप कर्‌या ही भर जाय।'' हुआ भी ऐसा ही। विक्रम सम्वत् 2054 में कृपा करके मेरे छोटे से गाँव गिरी को भगवान महावीर जन्म कल्याणक महोत्सव का लाभ दिया था। यह आपकी अपने भक्तों पर विश्वसनीयता है।

सारी घटनाएँ सुनी हुई या कहीं से पढ़ी हुई नहीं हैं। सभी घटनाओं का स्वयं मूकदर्शी हूँ, आँखों देखी हैं।

-4, शिवविला, नया बास, ढाबा गली, ब्यावर-305901, जिला-अजमेर (राजस्थान)

84वाँ जन्म-दिवस

हीरा गुरु की महिमा बड़ी महान्

श्री शान्तिलाल कुचेरिया

गुरु हीरा कहते हैं, छोटा मन मत करो।
मुस्कानों से भरी नई ऊर्जा तुम्हें दूँगा,
आकाश को भी छू सको, वही विश्वास तुम्हें दूँगा।

बहुत रो लिए, रोने-धोने की बातें छोड़ों,
रो-रोकर मत अपनी, रत्नों-सी आँखें फोड़ों,
मुस्कानों से भरा हुआ 'अमृतमय-मास' तुम्हें दूँगा।

दीन-हीन जीवन जीने से, अब इन्कार करो,
पतन, परभव की दुनिया, अब मत स्वीकार करो।
गौरव से जी सको, वही खुशी तुम्हें दूँगा।

कुछ करने के योग्य नहीं हो, छोड़ों इस भ्रम को,
असफलता ही मिली अभी तक, तोड़ो इस क्रम को।
छोटा मन मत करो, नई ऊर्जा तुम्हें दूँगा।
चरण सफलता चूम रही, आभास तुम्हें दूँगा।

भूल रहे हो तुम, ऋषियों की परम्पराओं को,
सिद्धि साधना से, पाने वाली क्षमताओं को,
घबराओ मत, वही अमर इतिहास तुम्हें दूँगा।

छोटा मन मत करो, नई ऊर्जा तुम्हें दूँगा।
जब सुषुप्त-देवत्व तुम्हारा, तुममें जागेगा,
स्वर्ग, धरा पर आने की, अनुमतियाँ माँगेगा,
आशीषों के आञ्चल में आवास तुम्हें दूँगा।

छोटा मन मत करो, नई ऊर्जा तुम्हें दूँगा।
श्री जैन रत्न-पुत्रों!, तुम 'रत्नयुग' के आराधक हो,
और लोकमंगल के, 'हीरा' संकल्पी साधक हो,
तुम मेरे हो, जो है मेरे पास, तुम्हें जरूर दूँगा।
छोटा मन मत करो, मुस्कानों से भरी ऊर्जा दूँगा।

-2/471, जवाहर नगर, जयपुर-302004

10 मार्च 2022
जिनवाणी 41
ISSN 2249-2011

शोधालेख

अभय की साधना का स्तोत्र भक्तामर

डॉ. दिलीप धींग

श्रमण परम्परा, भारतीय संस्कृति और संस्कृत भाषा के अमर भक्ति काव्य भक्तामर स्तोत्र में अपने समय, समाज, संस्कृति, राजनीति और परिवेश के अनेक बिम्ब और प्रतिबिम्ब अनेक रूपों में गुम्फित हुए हैं। स्तोत्र के रचनाकार आचार्य मानतुंग तीर्थंकर परमात्मा के अनन्य भक्त होने के साथ ही जैनदर्शन और भारतीय दर्शनों के प्रकाण्ड मनीषी, उत्तम कवि, मन्त्रविद्, भाषाविद्, समाजशास्त्री और लोकमन के गहरे पारखी थे। भक्तामर स्तोत्र के माध्यम से उनकी अनेक अर्हताएँ, क्षमताएँ और विशेषताएँ उजागर हुई हैं। जिनके कारण ही उनका कृतित्व 'भक्तामर स्तोत्र' एक सर्वस्पर्शी कालजयी काव्य बन सका है।

भक्तामर स्तोत्र में श्लोक क्रमांक 38 से 47 तक, दस श्लोकों में आचार्यश्री आठ भयस्थानों का उल्लेख करते हैं। ये आठ भयस्थान हैं-(1) उन्मत्त हाथी, (2) भयानक सिंह, (3) भयंकर दावानल, (4) भयानक सर्प, (5) महासंग्राम, (6) समुद्री यात्रा में विप्लव, (7) जलोदर रोग और (8) कारागृह बन्धन। ये आठ ही भयस्थान तत्कालीन समाज, राजनीति, लोकजीवन और प्रकृति की स्थिति दर्शाते हैं। आचार्यश्री उन दुर्धर्ष भयों के बीच अभय की अडिग साधना का अमर सन्देश देते हैं। वे कहते हैं कि जिनेन्द्र भगवान का उपासक किसी भी प्रकार के भय, कष्ट, परीषह या उपसर्ग से भयभीत नहीं होता है। वह भयानक आतंक में भी अविचलित रहते हुए अभय की साधना करता है और अन्तत: वह अपनी भक्ति और आत्मशक्ति के बल से उन भयों से पार हो जाता है, मुक्त हो जाता है। 47वें श्लोक में सभी भयों से मुक्ति का सन्देश है।

जैनागमों में वर्णित इहलोक भय आदि सात भय और आलेख में वर्णित आठ भयस्थानों को तुलनात्मक रूप में समझते हुए भक्तामर में वर्णित आठ भयस्थानों का विवेचन किया गया है।

सप्तभय

'भय-मोहनीय' कर्म के उदय से होने वाले आत्मा के उद्वेग रूप परिणाम-विशेष को भय कहते हैं। ठाणांग सूत्र[1] में सात भयस्थान बताए गए हैं-इहलोक भय, परलोक भय, आदान भय, अकस्मात् भय, वेदना भय, मरण भय और अश्लोक (अपकीर्ति) भय। आवश्यक सूत्र में सप्तभय के अन्तर्गत वेदना भय के स्थान पर आजीविका भय को गिनाया गया है।[2] एक दृष्टि से बेरोजगारी बहुत बड़ी वेदना है, जिससे व्यक्ति ही नहीं, परिवार, समाज और देश भी पीड़ित होते हैं। वर्तमान में बेरोजगारी, अस्वस्थ व्यावसायिक स्पर्धा, दुर्भिक्ष, बाढ़ आदि प्रकोप तथा अन्य कारणों से जीवन-निर्वाह की चिन्ता यानी आजीविका भय बढ़ गया है। इस भय से ग्रस्त कोई-कोई आत्महत्या जैसा अवाञ्छनीय कदम तक भी उठा लेते हैं। इस भय से अन्य भयस्थानों का अन्त:सम्बन्ध है। कवि बनारसीदास का सात भय का दोहा इस प्रकार है-

इहभव-भय परलोक-भय, मरन-वेदना-जात।
अनरच्छा अनगुप्त भय, अकस्मात भय सात।[3]

इसमें कवि ने अरक्षा और अगुप्त भय; भिन्न नाम दिये हैं, जिनका समावेश अन्य भय में कर सकते हैं।

अष्ट भयस्थान

आचार्य मानतुंग लोकमन के गहरे पारखी थे। उन्होंने तत्कालीन परिवेश और लोकजीवन को ध्यान में रखकर भक्तामर स्तोत्र में आठ भय और भयस्थानों का अलंकारिक चित्रण किया, जिनका वर्णन इस प्रकार है-

उन्मत्त हाथी (श्लोक 38)

सामान्य हाथी भी गुस्से में आदमी को पछाड़ सकता है। आचार्यश्री यहाँ उन्मत्त हाथी के सर्वाधिक भयावह स्वरूप का वर्णन करते हैं। वे कहते हैं कि झरते हुए मद से जिसके गण्डस्थल चञ्चल हो रहे हैं। उन गण्डस्थल पर उन्मत्त भौंरे तेज आवाज के साथ भ्रमण करते हुए हाथियों को अधिक उत्तेजित कर रहे हैं। ऐसे इन्द्र के ऐरावत हाथी के समान भीमकाय, भयानक, निरंकुश और आक्रामक हाथी को देखकर भी प्रभु के भक्त को बिलकुल डर नहीं लगता है। सच्चे भक्त को अभय का ऐसा ही वरदान मिलता है। विनम्र भक्त के सामने अहंकार हार जाता है।

भयानक सिंह (श्लोक 39)

यहाँ भी कुपित सिंह का भयानक वर्णन है। एक ऐसा सिंह, जिसने विदीर्ण किये हुए हाथियों के मस्तकों से गिरते हुए रक्त से रंजित उज्ज्वल मोतियों से भूमि को सजा दिया है। आक्रमण के लिए छलांग भरता सिंह भी आपके चरणों का आश्रय लेने वाले मनुष्य पर आक्रमण नहीं करता है। सामने मौत खड़ी है, लेकिन प्रथम जिनेन्द्र भगवान आदिनाथ का अनन्य भक्त निश्चिन्त, निर्द्वन्द्व और निर्भय है। क्षमावान भक्त के समक्ष क्रोध पराजित हो जाता है।

भयंकर दावानल (श्लोक 40)

उस जमाने में वन्यजीव प्रचुर थे तो वन्यजीवों के आवास वन भी बहुत थे। वनों में आग भी लग जाया करती थी। आग में वन की आग (दावानल) सर्वाधिक भयानक होती है। आचार्यश्री कहते हैं कि जंगल में आग प्रज्वलित हो और प्रलयकाल की तेज हवाएँ चलने लगे तो उसका बीभत्स रूप सर्वभक्षी बन जाता है। तड़तड़ाती तेज चिनगारियों के साथ ऊपर उठती हुई बड़ी-बड़ी लपटों वाली धधकती वह दावाग्नि भी भगवान ऋषभदेव के नाम के कीर्तन रूपी जल से शान्त हो जाती है। यहाँ अग्नि के सबसे अधिक विनाशी रूप का उदाहरण देकर आचार्यश्री कहना चाहते हैं कि जब परमात्मा के कीर्तन से धधकता दावानल शान्त हो जाता है तो फिर अग्नि के अन्य प्रकोप तो शान्त हो ही जाएँगे। सच्चा भक्त वही है जो आग बुझाने का कार्य करे।

भयानक सर्प (श्लोक 41)

साँप आदमी के डर का बहुत बड़ा कारण रहा है। स्तुतिकार ने ऐसे भयानक काले नाग का वर्णन किया है, जिसकी आँखें क्रोध से लाल हो रही हैं और वह फण उठाकर डसने को तैयार है। आचार्यश्री कहते हैं कि जिसके हृदय में परमात्मा के नाम की नागदमनी जड़ी है, वह भक्त ऐसे भयानक नाग को भी निर्भय होकर लाँघ जाता है। सच्चा भक्त भक्ति के प्रभाव से विष को भी निर्विष कर देता है, उसे पीयूष में बदल देता है। मीरा ने अपनी एकनिष्ठ भक्ति के प्रभाव से ज़हर को अमृत में परिणत कर दिया था। जैन कथा साहित्य में 'श्रीमती' नामक सती की भक्ति की शक्ति से विषधर नाग भी सुरभित पुष्पहार हो जाता है।

महासंग्राम (श्लोक 42 एवं 43)

भक्तामर के दो श्लोकों में आचार्यश्री युद्ध का वर्णन करते हैं। यह वर्णन तत्कालीन समय की राजनैतिक स्थिति का चित्रण करता है। दो राजाओं की लड़ाई में न जाने कितने-कितने सैनिकों को अपनी जान गँवानी पड़ती थी। आचार्यश्री राजाओं और सैनिकों को भी भक्ति का वरदान देते हैं। आचार्यश्री समरभूमि का जीवन्त चित्रण करते हैं। 42वें श्लोक में वे कहते हैं कि जैसे सूर्योदय से अन्धकार नष्ट हो जाता है, वैसे ही भयानक संग्राम में अरिहंत प्रभु के नाम-कीर्तन से बड़े से बड़ा सैन्यबल भी भाग छूटता है या परास्त हो जाता है। अगले श्लोक में संग्राम के वर्णन को अधिक बीभत्स और भयंकर बताया गया है। कवि कहता है कि जिस युद्धभूमि में पानी की तरह रक्त बह रहा हो, उसमें तैरने के लिए आतुर योद्धा के समक्ष भी प्रभु का भक्त आसानी से विजयश्री का वरण कर लेता है। इन श्लोकों में हिंसा पर अहिंसा की विजय दर्शाई गई है।

समुद्री–यात्रा (श्लोक 44)

जिस युग में भक्तामर स्तोत्र की रचना हुई, उस युग में व्यापार के लिए देश–विदेश की समुद्री यात्राएँ होती थीं। उन जोखिमभरी साहसिक यात्राओं में जहाज तूफान, चक्रवात, झंझावात और वडवानल से घिर जाया करते थे। आचार्यश्री कहते हैं कि भीषण घड़ियालों, पाठीन एवं पीठ जाति की मछलियों और विकराल वडवाग्नि से क्षुभित समुद्र में उछलती हुईं तरङ्गों के शिखर पर जिनके जहाज स्थित हैं, उन भक्तों के जहाज भी वीतराग प्रभु के नाम स्मरण से तिर जाते हैं। यह श्लोक जल, थल और वायु मार्ग की सभी प्रकार की यात्राओं के सभी खतरों से भक्त को निर्भय होने का विश्वास दिलाता है। परमात्मा का भक्त स्वयं तिरता है और दूसरों को भी डूबने से बचाता है, दूसरों को तिराता है।

जलोदर रोग (श्लोक 45)

प्रसिद्ध सूक्ति है–'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।' शरीर धर्मसाधना का मुख्य आधार है। शरीर स्वस्थ होगा तो धर्म साधना भी होगी। 'चउवीसत्थव' (लोगस्स) में भी बोधि के साथ आरोग्य की कामना की गई है– **आरुग्गबोहिलाभं।** आचार्य मानतुंग 45वें श्लोक में भयानक जलोदर रोग का उल्लेख करते हैं। वे कहते हैं कि इस महारोग के कारण जो कुरूप और विद्रूप हो गये हैं तथा जीने की आशा छोड़ चुके हैं, ऐसे मरणासन्न रोगी भी यदि आपके चरण–कमलों के रजोमृत को अपनी देह पर लगाएँ तो वे स्वस्थ, सामान्य और रूपवान हो सकते हैं। इस रोगमुक्ति के माध्यम से आचार्यश्री कहते हैं कि जिनेन्द्र परमात्मा की स्तुति से सभी बीमारियाँ खत्म हो सकती हैं। परमात्मा का सच्चा भक्त स्वयं स्वस्थ रहता है और दूसरों को भी स्वस्थ करने तथा रखने में मददगार बनता है।

कारागृह बन्धन (श्लोक 46)

स्तुतिकार आचार्य मानतुंग पूर्ण निर्दोष होने के बावजूद कारागृह में बन्द कर दिये गये। परन्तु वे तनिक भी विचलित नहीं हुए। वे कारागृह में ही भक्तामर स्तोत्र की रचना करते हैं, भगवान आदिनाथ की स्तुति करते हैं। वे बन्धन में मुक्ति की साधना का सन्देश देते हैं। वे कहते हैं कि जो पैरों से लेकर गले तक बेड़ियों से जकड़ा हुआ है, बेड़ियों से जिनकी जंघाएँ छिल गई हैं, ऐसा मनुष्य भी जिनेन्द्र प्रभु के नाम रूपी मंत्र का लगातार स्मरण करता है तो वह स्वत: ही बंधन के भय एवं बंधन से मुक्त हो जाता है।

जिस समय जिसके जो दु:ख या विपदा होती है, उस समय उसके लिए वह सबसे बड़ी होती है। हर व्यक्ति कष्टों और समस्याओं से बचना चाहता है। आचार्यश्री अपने समय के सर्वाधिक डराने वाले आठ भय बताते हैं। वे परम्परा से हटकर अपने कविधर्म का पालन करते हैं। वे भक्तामर स्तोत्र में विशिष्ट अष्टभयों का उल्लेख करते हैं। उक्त आठ भय अथवा भयस्थानों के व्यावहारिक पक्ष को देखें तो अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्य उजागर होते हैं।

ठाणांगसूत्र के सातवें स्थान में सात भयस्थानों का वर्णन है–**1. इहलोक भय**–अपनी ही जाति के प्राणी से डरना। जैसे मनुष्य का मनुष्य से, तिर्यञ्च का तिर्यञ्च से भय। **2. परलोक भय**–दूसरी जाति वाले प्राणी से डरना। जैसे मनुष्य का देव, तिर्यञ्च आदि से भय। **3. आदान भय**–अपनी वस्तु आदि की रक्षा के लिए चोर आदि से डरना। **4. अकस्मात् भय**–जीवन में अचानक कब, कहाँ, क्या दुर्घटना हो जाए, इस प्रकार सशंक होकर अचानक भयभीत होना। **5. वेदना भय**–रोग, बीमारी आदि शारीरिक दु:खों और कष्टों का भय। **6. मरण भय**–मृत्यु का भय। **7. अश्लोक भय**–अपयश की आशंका से भय।

शास्त्र में वर्णित प्रसिद्ध सात भयों में भक्तामर स्तोत्र के ये आठ भयस्थान अपेक्षा से गर्भित हो जाते हैं। महासंग्राम एवं कारागृह बन्धन इन दो भयस्थानों में मानव को मानव से भय होने के कारण इन्हें इहलोक भय में गर्भित कर सकते हैं। उन्मत्त हाथी, भयंकर सिंह और भयानक सर्प का परलोक भय में समावेश हो जाता है।

कारागृह बन्धन का सम्बन्ध आदान भय से जुड़ जाता है। हाथी, सिंह, सर्प और समुद्री यात्रा के दौरान संकट आदि आकस्मिक भय के रूप हैं। जलोदर रोग के उल्लेख में सभी प्रकार के रोगों का संकेत और उनमें वेदना भय समाविष्ट है। आठवें भय को छोड़कर शेष सात भय, मरण के तात्कालिक प्रत्यक्ष भयस्थान हैं। आठवें कारागृह बन्धन में भी प्राणों पर संकट बना रहता है। कारागृह बन्धन में अपकीर्ति का भय दर्शाया गया है।

जैव विविधता का युग

हाथी, सिंह और सर्प नामक भय यह सिद्ध करते हैं कि उस समय प्रचुर जीव और वन्यजीव इस धरती पर थे। पर्यावरण अच्छा था। जैव विविधता थी। दावाग्नि (जंगल की आग) का भय यह दर्शाता है कि उस समय घने जंगल थे तो कभी-कभी उनमें आग भी लग जाया करती थी। अच्छे पारिस्थितिकी सन्तुलन के उस जमाने में कई प्रकार के जीव-जन्तुओं का भय भी मानव को रहता ही था। आजीविका, यात्रा आदि उद्देश्यों के लिए आदमी को जंगल में आना-जाना पड़ता या वन-पथ से गुजरना पड़ता था। उसके लिए खूंखार वन्यजीवों का भय बना रहता था। जंगल तथा जंगली जानवरों और ज़हरीले तथा आक्रामक प्राणियों से जुड़े इन बहुप्रचलित बड़े भयों के उल्लेख में सम्बन्धित सभी छोटे-बड़े भय समाविष्ट हो जाते हैं।

प्राणिरक्षा का सन्देश

हाथी और सिंह को वन्यजीवों के प्रतिनिधि प्राणी कह सकते हैं। यहाँ हाथी और शेर के माध्यम से सभी प्रकार के वन्यजीवों के भय से मुक्त रहने का आश्वासन दिया गया है। इसी प्रकार सर्प के माध्यम से भक्त को सभी प्रकार के ज़हरीले और सरीसृप जन्तुओं के भय से मुक्त रहने का सन्देश दिया गया है। भक्त का आभामण्डल ही ऐसा पवित्र बन जाएगा कि न तो वह किसी प्राणी को नुकसान पहुँचाएगा और न ही कोई प्राणी उसे नुकसान पहुँचाएगा। किसी प्राणी को मारे बगैर उससे अपनी सुरक्षा करने का यह सन्देश वन, वन्यजीवों और अन्यजीवों के संरक्षण का बहुत बड़ा सन्देश है। आचार्यश्री परमात्मा की अखण्ड तथा अनन्य भक्ति के माध्यम से अहिंसा, मैत्री और निर्वैर की साधना में आगे बढ़ते हैं और भक्तों को भी आगे बढ़ने का साहस देते हैं।

जैनधर्म, जनधर्म

इन भयों के उल्लेख में अनेक तथ्य समाविष्ट हैं। भक्तामर का रचनाकाल 7वीं या 10वीं सदी का माना जाता है। उन शताब्दियों में जैनधर्म जनधर्म था और जन-जन का धर्म था। सभी वर्गों के लोग जैन धर्म के प्रति आस्थावान थे। वनवासी और आदिवासी जंगलों में रहते थे तो अन्य सामान्य व्यक्ति अपने कामकाज के लिए जंगलों पर निर्भर रहते थे। लकड़ी, गौंद, वनौषधियाँ, वन-उपज तथा कई जरूरी चीजों के लिए आदमी जंगलों पर निर्भर था। अपने धंधे के लिए सामान्य आदमी जंगल में आता-जाता था। इसके अलावा खेत; नगर और वन के सीमांत पर हुआ करते थे। वहाँ भी वन्य और अन्य जीवों का भय रहता ही था। सह-अस्तित्वपूर्ण जीवनशैली के साथ हिंसक प्राणियों से सावधान भी रहना होता था।

ऐसे समय में आचार्य मानतुंग जन सामान्य को जिनेन्द्र-भक्ति का उत्तम सहारा देते हैं। भक्ति के माध्यम से उन्हें अभय, अहिंसा और वीरता का वरदान देते हैं। व्यस्त और जन साधारण के लिए भक्ति का मार्ग सरल और अनुकूल होता है। तत्त्वज्ञान की बातों और दर्शन की गुत्थियों से परे वह श्रद्धा एवं समर्पण के साथ नित्य प्रभु की उपासना करना चाहता है। एक किसान को सुबह-सुबह खेत पर जाना होता है। मेहनत करनी होती है। वह भक्तामर जैसे स्तोत्र या किसी लोकभाषा में बने भक्तिगीत को गाता-गुनगुनाता अपने व्यस्त दिन को मस्ती से गुजार लेता है। निश्चित ही, वह अपनी भक्ति की शक्ति से खतरों और खतरनाक जीव-जन्तुओं के बीच भी निर्विघ्न रूप में अपने जीवन और परिवार का रक्षण एवं पालन-पोषण कर लेता है। स्तुतिकार ने आम आदमी की जिन्दगी के इस पहलू पर ध्यान दिया है।

दुर्गम विहार–पथ

वन, वन्यजीवों और साँप, गोह आदि प्राणियों से खतरों का एक पहलू यह भी है कि उस समय जैन साधु–साध्वियों के विहार–पथ भयानक वन–पथ से होकर गुजरते थे। अनेक श्रमण तो वन में ही साधना करते थे। भक्तामर स्तोत्र उन्हें भी निर्भय होकर विहार तथा प्रवास करने और अहिंसा की साधना का सम्बल देता है। आचार्य मानतुंग कहते हैं कि परमात्मा का सच्चा भक्त इन क्रोधी, हिंसक और विषैले प्राणियों पर भी वार नहीं करता है। प्राय: कोई भी प्राणी बिना कारण मानव पर हमला नहीं करता है। हर प्राणी अपनी स्वभावगत मर्यादा में रहता है। इस स्थिति में विश्वास करना चाहिये कि अहिंसा तथा अभय के उपासक भक्त को तो ये प्राणी किञ्चित् भी नुकसान नहीं पहुँचाते हैं। परमात्मा के भक्त के समक्ष हिंसक प्राणी भी अहिंसक और निर्वैर हो जाते हैं। तीर्थङ्कर भगवान के समवसरण में तो अहिंसा, अभय, निर्वैर–भाव, मैत्री और समता का अलौकिक वातावरण होता है। उन्हीं तीर्थङ्कर परमात्मा के उपासक के आसपास भी अभय एवं मैत्री का आलोक व्याप्त हो जाता है।

अहिंसा की विजय

इन आठ भयों में आचार्यश्री दो श्लोकों (क्रमांक 42 एवं 43) में भीषण युद्ध का चित्रण करते हैं और भक्त को युद्धभय से मुक्ति के साथ ही युद्ध में विजय का विश्वास दिलाते हैं। युद्धों का यह वर्णन तत्कालीन राजतन्त्र और उनमें होने वाले आपसी युद्धों की ओर बहुत बड़ा संकेत है। यहाँ यह सुस्पष्ट संकेत भी है कि उस समय अनेक राजा और बहुसंख्यक सैनिक भी जैन धर्मावलम्बी थे। यह तथ्य है कि जैन धर्म की साधना और इसके प्रचार–प्रसार में क्षत्रिय वर्ग की ऐतिहासिक भूमिका रही है। आचार्यश्री उन्हें भी जिनेन्द्र–भक्ति का अमोघ अस्त्र थमाते हैं। इन दो श्लोकों में आचार्यश्री भक्त को अपने आप से युद्ध करने का सन्देश भी देते हैं। उत्तराध्ययनसूत्र[4] में भी अपने आप से युद्ध करने को श्रेयस्कर बताया गया है। इस तरह ये श्लोक हिंसा पर अहिंसा की विजय का सन्देश देने के साथ ही युद्ध में अयुद्ध का दर्शन भी प्रस्तुत करते हैं।

निर्विघ्न व्यवसाय में समुद्री भय के उल्लेख से तत्कालीन समय में होने वाली कठिन समुद्री यात्राओं का पता चलता है। ये समुद्री यात्राएँ और विदेश यात्राएँ मुख्यत: व्यापारिक उद्देश्य से होती थीं। यह श्लोक कहता है कि सभी प्रकार के बड़े और छोटे व्यापारी तथा वैश्य वर्ग के लोग जैनधर्म के प्रति आस्थावान थे। आगम ग्रन्थों में उनके लिए सार्थवाह, गाथापति आदि नाम मिलते हैं। आचार्यश्री समुद्र की यात्रा करने वाले साहसी भक्त को श्रद्धा का सम्बल और निरापद यात्रा की आश्वस्ति देते हैं। आजीविका और जीवन–यात्रा के हर कठिन मोड़ और कठिनाई पर परमात्मा की भक्ति भक्त को निर्भय और साहसी बनाती है।

पापी को पवित्र बनाएँ

राजहठ के कारण कारागृह में बन्द कर दिये गये आचार्य मानतुंग पूर्ण निर्दोष थे। वे अतुलनीय थे। यहाँ हम सामान्य कैदी की दृष्टि से विचार करें। अपने जाने–अनजाने किसी पाप या अन्य किसी भी कारण से कोई व्यक्ति जब कारागृह में बन्द कर दिया जाता है तो यह उसके लिए अत्यन्त वेदनाजन्य होता है। विपत्ति की उन विकट घड़ियों में भक्तामर स्तोत्र प्रायश्चित्त के साथ प्रभु की एकनिष्ठ उपासना की प्रेरणा देता है। जैन धर्म कहता है कि घृणा पाप से हो, पापी से नहीं। परमात्मा की भक्ति में पापी को पवित्र बना देने की शक्ति है। जब कोई पवित्र बन जाता है तो वह मुक्त होने जैसा हल्का महसूस करता है और अन्तत: मुक्त भी हो जाता है।

आरोग्य का लाभ

जलोदर रोग के उल्लेख के माध्यम से आचार्यश्री सन्देश देते हैं कि रोगमुक्ति में श्रद्धा एवं भक्ति के बल का अचिन्त्य प्रभाव होता है। रोग होने पर रोने–धोने या आर्तध्यान करने की बजाय निर्दोष चिकित्सा के साथ प्रभु भक्ति का सहारा लेना चाहिये। भक्ति की शक्ति से

दवा भी अधिक प्रभावकारी बन जाएगी। कभी-कभी तो श्रद्धा, भक्ति और पवित्र भावनाएँ भी दवा बन जाती हैं। उनसे महामारियाँ तक मिट जाती हैं।

सबसे बड़ा भय

आचार्य मानतुंग अपने आठ भयों में मरण के दर्दनाक निमित्तों और मारणान्तिक कष्टों को दर्शाते हैं तथा उनसे पार हो जाने का विश्वास दिलाते हैं। इन आठ भयों में कुछ खतरे, भय या भयस्थान ऐसे हैं, जिनमें प्रत्यक्ष रूप में मौत सामने खड़ी होती है। कुछ खतरों के परिणामस्वरूप व्यक्ति तत्काल मृत्यु को प्राप्त हो सकता है। इसके अलावा खतरे और भय ये आठ ही नहीं, जीवन में पग-पग पर अनेक कष्ट और संकट हैं। देशकाल के अनुसार कई प्रकार के नये संकट भी पैदा हो जाते हैं। जब कोई इतने बड़े भयों में भी अभय रह सकता है तो छोटे भयों के समक्ष उसका सहज और निडर रहना बहुत आसान है। इस प्रकार भक्तामर सभी प्रकार के भयों से लड़ने की क्षमता और विवेक देता है और भक्त को अभय का साधक बनाता है।

सभी प्रकार के भयों में प्राणियों के लिए मृत्यु का भय सर्वाधिक भयानक होता है। इसीलिए अभयदान यानी जीवनदान को सभी दानों में सर्वश्रेष्ठ बताया गया है। भक्तामर स्तोत्र भक्त को अभयदान देता है और भक्त अन्य प्राणियों को। 'भक्तामर' शब्द ही 'भक्त' और 'अमर' शब्दों के योग से बना है। भक्तामर स्तोत्र में आचार्यश्री भक्त को अमरता की साधना करने और अमर होने के लिए भक्ति का वरदान देते हैं। मृत्यु को जीतने का मार्गदर्शन देते हैं। भक्तामर के 23वें श्लोक में बताया गया है कि परमात्मा की सम्यक् आराधना में मृत्यु को जीतने का रहस्य छुपा हुआ है। श्लोक में कहा गया है-**त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं**-यानी तुम्हें सम्यक् रूप में उपलब्ध कर मृत्यु को भी जीता जा सकता है।

अन्तर के भय

आठ भय के बारे में सिद्धान्त या निश्चय की भाषा में कहें तो आचार्य मानतुंग जीवन-व्यवहार और लोकजीवन के जीवन्त उदाहरणों के जरिये मानव के भीतर के जंगलीपन, भीतर की आग, भीतर के विष, भीतर के युद्ध, भीतर की यात्रा के संघर्ष, भीतर के रोग और भीतर के बन्धनों को चुनौती दे रहे हैं। भक्त बाहर के भयों को चुनौती देता हुआ अन्तर के भयों को भी मिटाने लगता है और अन्तर के भयों को परास्त करता हुआ बाहर के भयों के समक्ष भी अडिग होकर खड़ा हो जाता है। यहाँ राग-द्वेष, मोह, ईर्ष्या, कषाय आदि अन्तर के भय या भयस्थान हैं।

अभय की साधना

भय और भय के स्थानों को व्यवहार और निश्चय, दोनों दृष्टियों से समझना जरूरी है। वस्तुतः सम्यग्दर्शन जीवन का दर्शन है और आत्मा का दर्शन भी। सम्यग्दर्शन देह की नश्वरता और आत्मा की अमरता का बोध कराता है। यह आत्मबोध व्यक्ति में अनोखे आत्मविश्वास को जगाता है। भक्ति इस विश्वास को प्रबल बनाती और पुष्ट करती है। ऐसा आत्मविश्वासी साधक अहिंसा एवं अभय की श्रेष्ठ साधना कर पाता है।

भगवान महावीर के जीवन को देखें तो उनकी सम्पूर्ण जीवन-साधना, अभय की अनुत्तर साधना है। जिनेश्वर भगवान की मुद्रा भी अभय-मुद्रा होती है। उनके पास किसी भी प्रकार का शस्त्र या अस्त्र नहीं होता है। शस्त्र-अस्त्र की जरूरत उन्हें ही होती है, जिन्हें किसी से भय हो या जो किसी को भयभीत करना चाहता हो। जिनेन्द्र परमात्मा तो स्वयं भयमुक्त होते हैं और दूसरों को भी भयमुक्त करते हैं। प्रणिपात सूत्र में अरिहन्त भगवान को 'अभयदयाणं' (अभय प्रदान करने वाले) कहा गया है तथा 'णमो जिणाणं, जिय भयाणं' पद से समस्त भयों को जीतने वाले जिनेश्वर भगवान को नमस्कार किया गया है।

सन्दर्भ

1. सत्त भयट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा - इहलोगभए, परलोगभए, आदाण भए, अकम्हाभए, वेयणभए, मरणभए, असिलोगभए - ठाणांग सूत्र, सातवाँ स्थान, 27वाँ सूत्र।

2. युवाचार्य मधुकरमुनि के संयोजन में पं. शोभाचन्द्र भारिल्ल द्वारा सम्पादित एवं श्री आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर से प्रकाशित आवश्यक सूत्र, पृष्ठांक 50
3. समयसार नाटक, निर्जरा द्वार, 48
4. जो सहस्सं सहस्साणं, संगामे दुज्जए जिए। एगं जिणेज्ज अप्पाणं, एस जे परमो जओ। - भयंकर युद्ध में हजारों-हजार दुर्दान्त शत्रुओं को जीतने की अपेक्षा अपने आप को जीत लेना ही सबसे बड़ी विजय है। - उत्तराध्ययनसूत्र (9/34)

-निदेशक : अन्तरराष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन व शोध केन्द्र, 7 अय्या मुदली स्ट्रीट, साहुकारपेट, चेन्नई-600001 (तमिलनाडु)

जिनवाणी पर अभिमत

हर आलेख-रचना पठनीय

दिसम्बर, 2022 की जिनवाणी के सम्पादकीय लेख 'साधु जीवन की चुनौतियाँ' पढ़कर लगा कि साधु-जीवन कितना चुनौतीपूर्ण है, धन्य है उनको जो साधु-जीवन अङ्गीकार कर रहे हैं और जो साधु-जीवन जी रहे हैं। जिनवाणी के आलेखों में वन्दनीय सन्तों के प्रवचन पढ़कर जिनवाणी का लाभ मिल जाता है, लेखक महानुभावों का दिल से धन्यवाद। 'सामायिक की वेशभूषा-क्यों आवश्यक?' कई श्रावकों की धारणा को बदलने में सहायक सिद्ध होगी। जिनवाणी का हर आलेख और रचनाएँ पठनीय हैं, सम्पादक मण्डल का प्रयास सराहनीय है।

-श्री पारसचन्द जैन, देवली-304804, टोंक

अच्छे आलेखों का समावेश

जनवरी की पूरी जिनवाणी पत्रिका में अच्छे-अच्छे आलेखों, प्रसङ्गों, प्रवचनों का समावेश हुआ है- (1) 'नवदीक्षित सन्त-सतियों का 15 दिसम्बर को छेदोपस्थापनीय चारित्र में प्रवेश' के अन्तर्गत भावी संघनायक पूज्यश्री ने बहुत ही सूक्ष्मता से विवेचन किया है। (2) 'आओ मिलकर कर्मों को समझें (17)' श्री धर्मचन्दजी जैन द्वारा स्त्यानर्द्धि निद्रा के बारे में विश्लेषण मुझे जीवन में प्रथम बार पढ़ने को मिला। बहुत ही ज्ञानवर्द्धक जानकारी है। (3) 'महामनस्वी कविप्रवर श्री तिलोकऋषिजी म.सा. की पावन स्मृति' में श्री एस. सी. कटारिया साहब ने बहुत अच्छी जानकारी प्रदान की। महापुरुषों की जीवनी, उनके प्रसङ्ग एवं संस्मरण पढ़ने से बड़ी प्रसन्नता अनुभव होती है। (4) व्यावहारिक जीवन के नीतिवाक्य-12 में क्रमांक 46 से 50 बहुत शिक्षाप्रद हैं। (5) 'निज अनुभव से पढ़ा इंसानियत का पाठ' श्री गौतमजी पारख द्वारा लिखित बहुत ही हृदयस्पर्शी है।

-श्री अभय कुमार जैन (श्रीश्रीमाल), 44, तृप्ति बन्दा रोड़, भवानीमण्डी (राज.)

जिनवाणी लेखक-सम्मान योजना

जिनवाणी का फरवरी-2022 का अंक मिला। इसमें जिनवाणी लेखक सम्मान का समाचार भी देखा। जिनवाणी लेखकों को महत्त्व देती है। विज्ञप्ति में लिखा गया है कि जिनवाणी की श्रेष्ठता का श्रेय लेखकों एवं रचनाकारों को जाता है। याद आता है कि पहले भी आपने जिनवाणी में लिखा था कि लेखकों से, अच्छी रचनाओं से जिनवाणी दीप्तिमान होती है।

इसी अंक में श्री नथमलजी हीरावत पर श्रद्धाञ्जलि लेख में पृष्ठ 69 पर रत्नसंघ का कथन है- ''संघ समाज में विद्वानों, साहित्यकारों, लेखकों, कवियों, समाज सुधारकों, स्वाध्यायियों एवं साधकों का सम्मान बढ़े, इस हेतु आप सदैव प्रयासरत रहे।'' रत्नसंघ और जिनवाणी की यह दृष्टि महत्त्वपूर्ण है।

इसके विपरीत कुछ पत्र-पत्रिकाएँ शायद यह मानती हैं कि वे किसी लेखक की रचना का प्रकाशन करके उस पर एहसान कर रही हैं। वस्तुत: यह पारस्परिकता का विषय है। आज जैनविद्या विषय में अच्छे लेखकों और बढ़िया मौलिक रचनाओं का अभाव नज़र आता है। श्रेष्ठ सृजन के लिए अध्ययन, अनुप्रेक्षा और साधना की अपेक्षा रहती है। अत: जिनवाणी लेखक सम्मान योजना की बहाली अनुमोदनीय है। इससे नये लेखकों, कार्यकर्त्ताओं और सेवाभावी गुणीजनों के तैयार होने का मार्ग प्रशस्त होता है।

-डॉ. दिलीप धींग
7 अय्या मुदली स्ट्रीट, साहुकारपेट, चेन्नई-

ISSN 2249-2011

तत्त्व-चर्चा

आओ मिलकर कर्मों को समझें (19)

(वेदनीय कर्म)

श्री धर्मचन्द जैन

जिज्ञासा– वेदनीय कर्म किसे कहते हैं?

समाधान–जो कर्म इन्द्रिय एवं मन के विषयों का अनुभव अर्थात् वेदन कराने में सहायक बने, उसे वेदनीय कर्म कहते हैं। दूसरे शब्दों में आत्मा को जो सुख-दु:ख का अनुभव होता है, वह अनुभव इन्द्रिय एवं मन के विषयों से उत्पन्न सुख-दु:ख रूप समझना चाहिए। आत्मा को अपने स्वरूप से सम्बन्धित जो आनन्द, सुख की अनुभूति होती है, वह किसी भी कर्म के उदय से नहीं होती है। वेदनीय कर्म से उत्पन्न सुख-दु:ख की अनुभूति थोड़े काल की होती है।

जिज्ञासा– वेदनीय कर्म की कौन-कौनसी उत्तर प्रकृतियाँ होती हैं?

समाधान–वेदनीय कर्म की दो उत्तर प्रकृतियाँ होती हैं- 1.साता वेदनीय और 2. असाता वेदनीय।

जिस कर्म के उदय से आत्मा को इन्द्रिय एवं मन के विषय सम्बन्धी सुख का अनुभव हो, उसे साता वेदनीय कहते हैं। जिस कर्म के उदय से आत्मा को प्रतिकूल इन्द्रिय विषयों की प्राप्ति में दु:ख का अनुभव होता है, उसे असाता वेदनीय कहते हैं।

जिज्ञासा– साता-असाता वेदनीय को उदाहरण से किस प्रकार बतलाया गया है?

समाधान–साता-असाता वेदनीय को तलवार की धार पर लगे शहद को चाटने के समान उदाहरण से बतलाया गया है। शहद लगी तलवार की धार को चाटने से क्षणिक सुख का अनुभव होता है, उसे साता वेदनीय कहा है तथा शहद चाटते समय तलवार की धार से जीभ कटने पर दु:ख का अनुभव होता है, उसे असाता वेदनीय कहा गया है।

इस उदाहरण से यह सूचित किया गया है कि इन्द्रिय विषयों से मिलने वाला सुख, दु:खमिश्रित होता है। सुख के बाद दु:ख एवं दु:ख के बाद सुख का चक्र चलता रहता है। उसमें स्थायीपना नहीं होता, निराकुलता नहीं होती और शान्ति की अनुभूति भी नहीं होती।

जिज्ञासा– सातावेदनीय का अधिक उदय किन जीवों को रहता है?

समाधान–चार गतियों की अपेक्षा कथन करें तो सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि देवों और मनुष्यों को प्राय: सातावेदनीय कर्म का उदय रहता है। प्राय: का तात्पर्य यह है कि उनके कभी-कभी असातावेदनीय का उदय भी हो सकता है। चाहे वह थोड़े रूप में ही हो, परन्तु उसकी सम्भावना रहती है।

अधिकांश रूप में देवता दिव्य भौतिक ऋद्धि, वैभव, पुण्यशालिता आदि का उपभोग करते हैं, किन्तु उनमें भी कतिपय देवों में एक दूसरे की ऋद्धि, वैभव, पद-प्रतिष्ठा आदि देखकर ईर्ष्या, मत्सरता, द्वेषभावना आदि आ जाती है, तब वे अपने आप को हीन, दु:खी एवं असहाय अनुभव करने लग जाते हैं। मनुष्यों में मनोनुकूल साधन, सुविधाएँ प्राप्त होने पर साता जन्य सुखों का अनुभव देखा ही जाता है, किन्तु इष्ट का वियोग, अनिष्ट का संयोग आदि होने पर असाता जन्य दु:ख का अनुभव करते भी देखा जाता है। तिर्यञ्चों में प्राय: असाता वेदनीय का उदय अधिक रहता है। सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास, पराधीनता आदि का दु:ख बना ही रहता है, किन्तु तिर्यञ्चों में किन्ही-किन्हीं हाथी, घोड़े, कुत्ते आदि पालतू जानवरों एवं पक्षियों को बड़े लाड़-

प्यार से रखा जाता है। सारी सुख-सुविधा के साधन उपलब्ध कराये जाते हैं, तो वे साता का अनुभव भी करते हैं।

नारकी जीवों को असाता के उदय की बहुलता-प्रचुरता रहती है। क्षेत्रवेदना, परमाधर्मी देवकृत वेदना, परस्पर उदीरित वेदना लगातार मिलती ही रहती है, किन्तु कभी-कभी मित्र देवों का आगमन हो, तीर्थङ्करों के जन्म आदि कल्याणक के प्रसङ्ग हों, तब नारकी जीवों को क्षणिक साता की अनुभूति भी होती है।

जिज्ञासा- असाता वेदनीय नारकी जीवों को अधिक होती है अथवा निगोदिया जीवों को?

समाधान-नारकी जीवों को प्रकट रूप वाली असाता वेदनीय अधिक होती है, वे रोते हैं, चिल्लाते हैं, भागते हैं, बचने की कोशिश करते हैं, किन्तु बच नहीं पाते हैं। निगोदिया जीवों को, एकेन्द्रिय जीवों को अव्यक्त वेदना बहुत अधिक होती है। जन्म-मरण रूप अनन्त गुणी वेदना उनको बार-बार भुगतनी पड़ती है।

आगम के अनुसार एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जीवों में एक मुहूर्त्त में 65,536 बार तक जन्म-मरण हो सकते हैं। एक श्वासोच्छ्वास में 17 से अधिक बार तक जन्म-मरण हो सकते हैं। यह कथन क्षुल्लक भव अर्थात् सबसे छोटे भव (256 आवलिका का भव) की अपेक्षा से समझना चाहिए।

जिज्ञासा- सातावेदनीय कर्मबन्ध के कर्मग्रन्थ में कौन-कौन से कारण बतलाये हैं?

समाधान-कर्मग्रन्थ भाग-1 में सातावेदनीय कर्म बन्ध के कारण बतलाते हुए कहा है कि गुरु भक्ति, क्षमा, करुणा, व्रत, योग, कषाय-विजय, दान करना और धर्म में स्थिर रहने से साता वेदनीय कर्म का बन्ध होता है।

(A) गुरुजनों (माता-पिता, धर्माचार्य, ज्ञान सिखाने वाले धर्म गुरु, लौकिक शिक्षा देने वाले गुरु, बड़े भाई-बहिन आदि) की सेवा करना, आदर करना, सत्कार करना, सम्मान करना गुरु-भक्ति कहलाती है। इससे साता वेदनीय कर्म बन्धता है।

(B) क्षमा अर्थात् शक्ति-सामर्थ्य होते हुए भी सामने वाले के प्रतिकूल बर्ताव को क्षमा कर देना। क्रोधादि के प्रसङ्ग उपस्थित होने पर भी क्षमा भाव, समता भाव रूप सहनशीलता का भाव रखना क्षमाशीलता है। इस क्षमाशीलता से जीव साता वेदनीय कर्म का उपार्जन करता है।

© सभी जीवों पर करुणा का भाव, दया, अनुकम्पा का भाव रखना, उनके दु:खों को दूर करने का यथाशक्य प्रयत्न करना भी दयालुता है। दयालुता के आचरण से जीव साता वेदनीय कर्म का बन्ध करता है।

(D) माया, निदान तथा मिथ्यादर्शन शल्यों से निवृत्त होते हुए विरति को धारण करना। अणुव्रतों अथवा महाव्रतों का पालन करना, ऐसी व्रतयुक्तता से भी जीव साता वेदनीय कर्म का बन्ध करता है।

(E) साध्वाचार का, पञ्चाचार का, महाव्रत-समिति-गुप्ति का पालन करना, दस प्रकार की सामाचारी का पालन करना, ये सब संयम-योग, श्रेष्ठ-योग कहलाते हैं, इनसे भी साता वेदनीय कर्म बन्धता है।

(F) क्रोध, मान, माया, लोभ आदि कषायों को जीतने का प्रयत्न करना, कारण उपस्थित होने पर भी इनमें समता रखना कषाय-विजय है। कषाय-विजय करने से भी साता वेदनीय कर्म का बन्ध होता है।

(G) सुपात्र को निर्दोष वस्तु आदि का दान देना, रोगी को औषधि देना, भयभीत को अभय बनाना, ज्ञान-प्राप्ति का साधन सुलभ कराना, जरूरतमन्द को आहारादि सामग्री उपलब्ध कराना तथा ऐसे ही अन्य सत्कार्यों के करने से जीव सातावेदनीय कर्म का बन्ध करता है।

(H) सम्यग्ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप में अपने आप को लगाना, स्थिर करना, अपने जीवन को न्याय-नीति, ईमानदारी, प्रामाणिकता से चलाना।

तीर्थङ्कर भगवन्तों की वाणी में दृढ़ आस्था रखना इत्यादि कार्यों से जीव साता वेदनीय कर्म का बन्ध करता है।

जिज्ञासा– तत्त्वार्थ सूत्र में साता वेदनीय कर्म बन्ध के कौन–कौनसे कारण बतलाये हैं?

समाधान–तत्त्वार्थ सूत्र के छठे अध्याय में सातावेदनीय कर्म बन्ध के छह कारण इस प्रकार बतलाये हैं–

1. प्राणि–मात्र पर अनुकम्पा करना।
2. देशव्रतियों तथा सर्वव्रतियों पर विशेष अनुकम्पा, आदर भाव रखना।
3. अपनी वस्तु दूसरों को विनम्र भाव से अर्पित करना।
4. सराग संयम, संयमासंयम, अकामनिर्जरा और बालतप में यथोचित प्रवृत्ति करना।
5. धार्मिक दृष्टि से क्रोधादि दोषों का शमन करना।
6. लोभवृत्ति पर विजय प्राप्त करना।

जिज्ञासा– भगवतीसूत्र में सातावेदनीय कर्म–बन्ध के कौनसे कारण बतलाये हैं?

समाधान–भगवतीसूत्र शतक 7, उद्देशक 6 में साता वेदनीय कर्म बन्ध के कारण इस प्रकार बतलाये हैं–(1) **प्राण–**द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जीवों पर अनुकम्पा करने से। (2) **भूत**–वनस्पतिकायिक जीवों पर अनुकम्पा करने से। (3) **जीव**–पञ्चेन्द्रिय जीवों पर अनुकम्पा करने से। (4) **सत्त्व**–पृथ्वी, अप्, तेजस्, वायुकायिक जीवों पर अनुकम्पा करने से। (5) बहुत प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों पर अनुकम्पा करने से। (6) उन्हें शोक नहीं उपजाने से। (7) खेदित नहीं करने से। (8) वेदना (पीड़ा) नहीं उपजाने से। (9) नहीं पीटने से और (10) परिताप नहीं उपजाने से। इन दस कारणों से जीव साता वेदनीय कर्म बाँधता है।

–रजिस्ट्रार, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर (राजस्थान)

जिनवाणी हिन्दी मासिक पत्रिका का विवरण

(फार्म 2 नियम 8 देखिए)

1.	**प्रकाशन स्थान**	::	जयपुर
2.	**प्रकाशन अवधि**	::	मासिक
3.	**मुद्रक का नाम**	::	डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, जयपुर
4.	**प्रकाशक का नाम**	::	अशोक कुमार सेठ
	राष्ट्रीयता	::	भारतीय
	पता	::	सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर–302003 (राज.)
5.	**सम्पादक का नाम**	::	डॉ. धर्मचन्द जैन
	राष्ट्रीयता	::	भारतीय
	पता	::	आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान ए 9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर–302015 (राज.)
6.	**उन व्यक्तियों के नाम व पते जिनका पत्र पर स्वामित्व है**	::	सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर–302003 (राज.)

मैं, अशोक कुमार सेठ, मन्त्री–सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिया गया विवरण सत्य है।

हस्ताक्षर–**अशोक कुमार सेठ**

मार्च 2022 **प्रकाशक**

ISSN 2249-2011

जीवन-व्यवहार

व्यावहारिक जीवन के नीति वाक्य (14)

श्री पी. शिखरमल सुराणा

54. जो मन से हार नहीं मानता, उसे दुनिया की कोई ताकत हरा नहीं सकती। वास्तव में हमारी जीत का आधार हमारे अपने विश्वास से शुरू होता है। किसी भी कार्य को करने से पहले यदि मन में उसको सफलतापूर्वक सम्पन्न करने का विचार एवं संकल्प हो तो उस कार्य में सफल होना निश्चित है। इसके विपरीत यदि शुरुआत करने से पहले ही आपने किसी कार्य के होने में अड़चनों और परेशानियों की सम्भावनाएँ देख लीं, तो उस कार्य का सम्पन्न होना लगभग असम्भव ही हो जाता है। अतः यदि सफलता हासिल करनी है तो पहले उसके लिए अपने मन, विचार एवं कर्म में सकारात्मकता के साथ दृढ़ संकल्प लेकर विजय तथा सफलता के मनोबल के साथ कार्य प्रारम्भ करें।

55. मन प्रायः अशान्त रहता है और उसे नियन्त्रित करना अत्यन्त कठिन है। लेकिन निरन्तर अभ्यास से इसे वश में किया जा सकता है। यदि सब कुछ अच्छा हो रहा है, अपने मन के मुताबिक हो रहा है, तो भी कोई न कोई जाना-अनजाना सा भय मन को अशान्त रखता है ...और कुछ नहीं तो यह अपने अच्छे समय के समाप्त होने की आशंका से ही व्यथित होकर अशान्त होने लगता है। इसके विपरीत जब भी कभी परिस्थितियाँ अपने मन के मुताबिक तथा अपनी योजना के अनुरूप न हों तो मन का व्यथित एवं अशान्त होना स्वाभाविक है। किन्तु जिसने अच्छी और बुरी, दोनों परिस्थितियों में स्वयं को नियन्त्रित कर लिया, अपने मन और विचारों को शान्त रखते हुए सभी सम्भावनाओं एवं अवस्थाओं को एक-रूपता से स्वीकार करने योग्य बना लिया, वास्तव में वह ही सार्थक साधक है।

56. आपकी मनोवृत्ति ही आपकी महानता को निर्धारित करती है। अर्थात् आपके मन के विचार, आपका दृष्टिकोण, आपकी सोच एवं आपके संस्कार ही आपके जीवन-स्तर का निर्धारण करेंगे। आपका वर्तमान एवं भविष्य, दोनों का निर्माण स्वयं आपके अपने हाथों में है। जीवन के प्रति जैसा आपका दृष्टिकोण तथा जैसे विचार होंगे, वैसी ही आपकी कार्यप्रणाली एवं नीतियाँ हो जायेंगी। यही आपके जीवन की दिशा तथा दशा का निर्धारण करेंगी। दूसरों के प्रति अपने दृष्टिकोण एवं सोच को सदैव सकारात्मक एवं उच्च स्तर का रखें। निर्मल तथा निष्पाप विचार, समाज में उचित सम्मान प्रदान करते हैं। याद रहे, आपके व्यक्तित्व द्वारा अर्जित महानता आपके जीवन-काल के बाद भी निरन्तर बनी रहती है।

57. आप एक कप में चाय पी रहे हैं, कोई आता है आपसे टकराता है और चाय गिर जाती है। सवाल है चाय क्यों गिरी? आप कहेंगे वो टकराया इसलिए। जवाब है-इसलिए गिरी क्योंकि आपके कप में चाय थी, अगर कॉफी होती तो कॉफी गिरती। इसी तरह आपके जीवन में कोई न कोई घटना आपसे टकराएगी तो दुर्घटना होनी ही है। क्या छलकेगा ...यह इस पर निर्भर करता है कि आपके कप में यानी आपके अन्तर में क्या है? क्रोध, अहंकार, घृणा, ईर्ष्या या समझदारी, प्रेम, संयम? वही छलकेगा जो भीतर होगा। ये घटनाएँ एक तरह से आपकी ही परीक्षा है। भीतर झाँकिये..क्या है आपके भीतर?

पूज्य कुशलगणी की जय

।। श्री महावीराय नमः ।।

।। जय गुरू हस्ती ।।

श्री कुशलरत्न गजेन्द्रगणिभ्यो नमः

परम्श्रद्धेय जैनाचार्य श्री 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. के सुशिष्य

आचार्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की जय

श्री श्वे. स्था. जैन चतुर्विध संघ के हितार्थ प्रमुख मुनियों द्वारा स्वीकृत

पाक्षिक पत्र विक्रम सम्वत् 2079

वीर सम्वत् 2548-49 (निर्णय सागर पंचाग से सम्पादित) सन् 2022-2023

क्र. सं.	मास-पक्ष	तिथिवार	पक्खी दिनांक	घड़ी पल	क्षय तिथि	वृद्धि तिथि	रोहिणी नक्षत्र	पुष्य नक्षत्र
1	चैत्र सुदि	14 शुक्र	15.04.2022	50-18	-	-	5 बुध	9 रवि
2	वैशाख वदि	30 शनि	30.04.2022	49-40	8 शनि	-	-	-
3	वैशाख सुदि	14 रवि	15.05.2022	17-05	-	3 बुध	प्र.3 मंगल	7 रवि
4	ज्येष्ठ वदि	14 रवि	29.05.2022	22-43	2 मंगल	-	-	-
5	ज्येष्ठ सुदि	14 सोम	13.06.2022	38-03	11 शुक्र	6 सोम	1 मंगल	5 शनि
6	आषाढ़ वदि	द्वि.14 मंगल	28.06.2022	00-03	4 शुक्र	14 मंगल	प्र.14 सोम	-
7	आषाढ़ सुदि	15 बुध	13.07.2022	45-23	14 मंगल	-	-	2 शुक्र
8	श्रावण वदि	30 गुरु	28.07.2022	43-18	-	-	11 रवि	-
9	श्रावण सुदि	14 गुरु	11.08.2022	11-05	-	-	-	1 शुक्र
10	भाद्रपद वदि	14 शुक्र	26.08.2022	15-13	1 शुक्र	12 बुध	9 शनि	13 गुरू
11	भाद्रपद सुदि	15 शनि	10.09.2022	22-38	10 सोम	-	-	-

विशेष विवरण

- आयंबिल ओली प्रारम्भ चैत्र सुदि 7 शुक्रवार 08.04.2022।
- भगवान महावीर जन्म कल्याणक चैत्र सुदि 13 गुरुवार 14.04.2022।
- आयंबिल ओली पूर्ण चैत्र सुदि 15 शनिवार 16.04.2022।
- अक्षय तृतीया (वर्षीतप पारणा) वैशाख सुदि 3 मंगलवार 03.05.2022।
- आचार्य भगवंत पूज्य गुरुदेव 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. की 31वीं पुण्य तिथि वैशाख सुदि 8 सोमवार 09.05.2022।
- भगवान महावीर केवल कल्याणक वैशाख सुदि 10 बुधवार 11.05.2022।
- संघ स्थापना दिवस वैशाख सुदि 11 गुरुवार 12.05.2022।
- आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 32वाँ आचार्य पद दिवस, ज्येष्ठ वदि 5 शुक्रवार 20.05.2022।
- परम्परा के मूल पुरुष श्री कुशल चन्द्र जी म.सा. की 239वीं पुण्य तिथि, ज्येष्ठ वदि 6 शनिवार 21.05.2022।
- क्रियोद्धारक पूज्य आचार्य श्री रतनचन्द्र जी म. सा. की 177वीं पुण्य तिथि, ज्येष्ठ सुदि 14 सोमवार 13.06.2022।
- 226वाँ क्रियोद्धारक दिवस आषाढ़ वदि 2 गुरुवार 16.06.2022।
- आर्द्रा नक्षत्र प्रारम्भ आषाढ़ वदि 9 बुधवार 22.06.2022, इसके पश्चात् गाज बीज होने पर सूत्र की असज्झाय नहीं रहेगी।
- चातुर्मास प्रारम्भ (चातुर्मासी पक्खी) आषाढ़ सुदि 15 (पूर्णिमा) बुधवार 13.07.2022।
- पूज्य आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. की 96वीं पुण्यतिथि श्रावण वदि 30 गुरुवार 28.07.2022।
- पर्युषण महापर्व प्रारम्भ भाद्रपद वदि द्वि.12 बुधवार 24.08.2022।
- संवत्सरी महापर्व भाद्रपद सुदि 4 बुधवार 31.08.2022।

12	आश्विन वदि	30 रवि	25.09.2022	52-13	-	-	7 शनि	11 बुध
13	आश्विन सुदि	15 रवि	09.10.2022	49-28	13 शुक्र	-	-	-
14	कार्तिक वदि	14 सोम	24.10.2022	26-45	-	6 रवि	5 शुक्र	8 मंगल
15	कार्तिक सुदि	15 मंगल	08.11.2022	24-00	5 शनि	-	-	-
16	मार्गशीर्ष वदि	30 बुध	23.11.2022	53-20	14 मंगल	8 गुरु	2 गुरु	7 मंगल
17	मार्गशीर्ष सुदि	द्वि.14 बुध	07.12.2022	01-50	9 गुरु	14 बुध	15 गुरु	-
18	पौष वदि	14 गुरु	22.12.2022	29-28	-	-	-	4 सोम
19	पौष सुदि	15 शुक्र	06.01.2023	52-48	3 रवि	-	13 बुध	-
20	माघ वदि	30 शनि	21.01.2023	47-10	14 शुक्र	2 सोम	-	प्र.2 रवि
21	माघ सुदि	15 रवि	05.02.2023	41-25	-	-	10 मंगल	15 रवि
22	फाल्गुन वदि	14 रवि	19.02.2023	22-38	10 बुध	4 शुक्र	-	-
23	फाल्गुन सुदि	14 सोम	06.03.2023	23-10	2 मंगल	11 शुक्र	9 मंगल	12 शनि
24	चैत्र वदि	30 मंगल	21.03.2023	40-18	13 रवि	-	-	-

- आयंबिल ओली प्रारम्भ आसोज सुदि 6 शनिवार 01.10.2022।
- पूज्य आचार्य श्री भूधरजी म.सा. की पुण्यतिथि आसोज सुदि 10 बुधवार 05.10.2022।
- आयंबिल ओली पूर्ण आसोज सुदि 15 रविवार 09.10.2022।
- स्वाति नक्षत्र प्रारम्भ कार्तिक वदि 14 सोमवार 24.10.2022, इसके पश्चात् गाज बीज होने पर सूत्र की असज्झाय रहेगी।
- खण्ड ग्रास सूर्यग्रहण कार्तिक वदि 30 मंगलवार 25.10.2022।
- भगवान महावीर निर्वाण कल्याणक कार्तिक वदि 30 मंगलवार 25.10.2022।
- वीर संवत् 2549 प्रारम्भ एवं गौतम प्रतिपदा कार्तिक सुदि 1 बुधवार 26.10.2022।
- ज्ञान पंचमी कार्तिक सुदि 4 (पंचमी क्षय के कारण) शनिवार 29.10.2022।
- आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 60वाँ दीक्षा दिवस कार्तिक सुदि 6 रविवार 30.10.2022।
- चातुर्मासिक पक्खी (चातुर्मास पूर्ण) कार्तिक सुदि 15 मंगलवार 08.11.2022।
- वीर लोकाशाह जयंती कार्तिक सुदि 15 मंगलवार 08.11.2022।
- आचार्य पूज्य 1008 श्री विनयचन्दजी म.सा. की 107वीं पुण्यतिथि, मार्गशीर्ष वदि 12 सोमवार 21.11.2022।
- मौन एकादशी मार्गशीर्ष सुदि 11 शनिवार 03.12.2022।
- भगवान पार्श्वनाथ जन्म कल्याणक पौष वदि 10 रविवार 18.12.2022।
- फाल्गुनी चातुर्मासी पर्व (चातुर्मासी पक्खी) फाल्गुन सुदि 14 सोमवार 06.03.2023।
- भगवान आदिनाथ जन्म कल्याणक एवं आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 85वाँ जन्मदिवस चैत्र वदि 8 बुधवार 15.03.2023।

गुरु हस्ती के दो फरमान-सामायिक स्वाध्याय महान्

गुरु हीरा का यह सन्देश-व्यसन मुक्त हो सारा देश

प्रिय महानुभावों! शुद्ध चित्त से दोनों समय प्रतिक्रमण करने से निर्जरा होती है। उत्कृष्ट रसायन आने से तीर्थंकर गौत्र की उपार्जना होती है। अतः दोनों समय प्रतिक्रमण अवश्य करना चाहिये। यदि प्रमाद वश न हो सके तो पक्खी का तो अवश्य करना चाहिये। पांचवें आवश्यक के काउस्सग में देवसिय को 4, पक्खी को 8, चौमासी को 12, और सम्वत्सरी को 20 लोगस्स का चिन्तन करना अजमेर सम्मेलन का नियम है। सामायिक स्वाध्याय का घर-घर प्रचार करें। ब्रह्मचर्य का पालन करें व व्यसनों का त्याग करें।

10 मार्च 2022
जिनवाणी 54
ISSN 2249-2011

शोधालेख

भारतीय दर्शनों में अनेकान्तवाद के तत्त्व : एक ऐतिहासिक विवेचन

प्रो. सागरमल जैन

(गताङ्क से आगे)

न्यायदर्शन और अनेकान्तवाद

न्यायदर्शन में न्यायसूत्रों के भाष्यकार वात्स्यायन ने **न्यायसूत्र** (1.1.41) के भाष्य में अनेकान्तवाद का आश्रय लिया है। वे लिखते हैं–''**एतच्च विरुद्धयोरेक-धर्मिस्थयोर्बोधव्यं, यत्र तु धर्मिसामान्यगतौ विरुद्धौ धर्मौ हेतुत: सम्भवत: तत्र समुच्चय: हेतुतोऽर्थस्य तथाभावोपपत्ते:।**'' अर्थात् जब एक ही धर्मी में विरुद्ध अनेक धर्म विद्यमान हों तो विचारपूर्वक ही निर्णय लिया जाता है, किन्तु जहाँ धर्मी सामान्य में (अनेक) धर्मों की सत्ता प्रामाणिक रूप से सिद्ध हो, वहाँ पर तो उसे समुच्चय रूप अर्थात् अनेक धर्मों से युक्त ही मानना चाहिये। क्योंकि वहाँ पर तो वस्तु उसी रूप में सिद्ध है। तात्पर्य यह है कि यदि दो धर्मों में आत्यन्तिक विरोध नहीं है और वे सामान्य रूप से एक ही वस्तु में अपेक्षा भेद से पाये जाते हैं तो उन्हें स्वीकार करने में न्याय दर्शन को आपत्ति नहीं है।

इसी प्रकार जाति और व्यक्ति में कथंचित् अभेद और कथंचित् भेद मानकर जाति को भी सामान्य-विशेषात्मक माना गया है। भाष्यकार वात्स्यायन **न्यायसूत्र** (2.2.66) की टीका में लिखते हैं–''**यच्च केषांचिदभेदं कुतश्चिद् भेदं करोति तत्सामान्यविशेषो जातिरिति।**''

यह सत्य है कि जाति सामान्य रूप भी है, किन्तु जब यह पदार्थों में कथंचित् अभेद और कथंचित् भेद करती है तो वह जाति सामान्य-विशेषात्मक होती है। यहाँ जाति को जो सामान्य की वाचक है सामान्य-विशेषात्मक मानकर अनेकान्तवाद की पुष्टि की गई है। क्योंकि अनेकान्तवाद व्यष्टि में समष्टि और समष्टि में व्यष्टि का अन्तर्भाव मानता है। व्यक्ति के बिना जाति की और जाति के बिना व्यक्ति की कोई सत्ता नहीं है। उनमें कथंचित् भेद और कथंचित् अभेद है। सामान्य में विशेष और विशेष में सामान्य अपेक्षा भेद से निहित रहते हैं, यही तो अनेकान्त है।

मीमांसादर्शन और अनेकान्तवाद

जिस प्रकार अनेकान्तवाद के सम्पोषक जैन धर्म में वस्तु को उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यात्मक माना है, उसी प्रकार मीमांसादर्शन में भी सत्ता को त्रयात्मक माना है। उसके अनुसार उत्पत्ति और विनाश तो धर्मों के हैं, धर्मी तो नित्य है, वह उन धर्मों की उत्पत्ति और विनाश के भी पूर्व है अर्थात् नित्य है। वस्तुत: जो बात जैनदर्शन में द्रव्य की नित्यता और पर्याय की अनित्यता की अपेक्षा से कही गई है, वही बात धर्मी और धर्म की अपेक्षा से मीमांसादर्शन में कही गई है। यहाँ पर्याय के स्थान पर धर्म शब्द का प्रयोग हुआ है। स्वयं कुमारिल भट्ट **मीमांसाश्लोकवार्तिक** (21-23) में लिखते हैं–

वर्द्धमानकभंगे च रुचक: क्रियते यदा।
तदा पूर्वार्थिन शोक: प्रीतिश्चाप्युत्तरार्थिन:।।
हेमार्थिनस्तु माध्यस्थं तस्माद् वस्तु त्रयात्मकम्।
नोत्पादस्थितिभंगानामभावे: स्यान्मतित्रयम्।।
न नाशेन विना शोको नोत्पादेन विना सुखं।
स्थित्या विना न माध्यस्थ्यं तेन सामान्यनित्यता।।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य रूप त्रिपदी की जो स्थापना जैनदर्शन में है, वही बात शब्दान्तर से उत्पत्ति, विनाश और स्थिति के रूप में मीमांसादर्शन में कही गई है। कुमारिल भट्ट के द्वारा पदार्थ

को उत्पत्ति, विनाश और स्थिति युक्त मानना, अवयवी और अवयव में भेदाभेद मानना, सामान्य और विशेष को सापेक्ष मानना आदि तथ्य इसी बात को पुष्ट करते हैं कि उनके दार्शनिक चिन्तन की पृष्ठभूमि में कहीं अनेकान्त के तत्त्व उपस्थित रहे हैं।

श्लोकवार्तिक वनवाद श्लोक 75-80 में तो वे स्वयं अनेकान्त की प्रमाणता सिद्ध करते हैं-

वस्त्वनेकत्ववादाच्च न संदिग्धाऽप्रमाणता।
ज्ञानं संदिह्यते यत्र तत्र न स्यात् प्रमाणता।।
इहानैकान्तिकं वस्त्वित्येवं ज्ञानं सुनिश्चितम्।

इसी अंश की टीका में पार्थसारथि मिश्र ने भी स्पष्टतः अनेकान्तवाद शब्द का प्रयोग किया है, यथा- **''ये चैकान्तिकं भेदमभेदं वाऽवयविनः समाश्रयन्ते तैरेवायमनेकान्तवाद।''**

मात्र इतना ही नहीं, उसमें वस्तु को स्व-स्वरूप की अपेक्षा सत्, पर स्वरूप की अपेक्षा असत् और उभयरूप से सदसत् रूप माना गया है यथा-**''सर्वं हि वस्तु स्वरूपतः सद्रूपं पररूपतश्चासद्रूपं यथा घटो घटरूपेण सत् पटरूपेणऽसन्।''** -अभावप्रकरण टीका

यहाँ तो हमने कुछ ही सन्दर्भ प्रस्तुत किये हैं। यदि भारतीय दर्शनों के मूलग्रन्थों और उनकी टीकाओं का सम्यक् परिशीलन किया जाये, तो ऐसे अनेक तथ्य परिलक्षित होंगे जो उन दर्शनों की पृष्ठभूमि में रही हुई अनेकान्त दृष्टि को स्पष्ट करते हैं। अनेकान्त एक अनुभूत्यात्मक सत्य है उसे नकारा नहीं जा सकता है। अन्तर मात्र उसके प्रस्तुतीकरण की शैली का होता है।

वेदान्तदर्शन और अनेकान्तवाद

भारतीय दर्शनों में वेदान्तदर्शन वस्तुतः एक दर्शन का नहीं, अपितु दर्शन समूह का वाचक है। ब्रह्मसूत्र को केन्द्र में रखकर जिन दर्शनों का विकास हुआ, वे सभी इस वर्ग में समाहित किये जाते हैं। इसके अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैत, द्वैत आदि अनेक सम्प्रदाय हैं। 'नैकस्मिन्नसम्भवात्' (ब्रह्मसूत्र 2.2.33) की व्याख्या करते हुए इन सभी दार्शनिकों ने जैनदर्शन के अनेकान्तवाद की समीक्षा की है। मैं यहाँ उनकी समीक्षा कितनी उचित है या अनुचित है, इस चर्चा में नहीं जाना चाहता हूँ, क्योंकि उनमें से प्रत्येक ने कमोबेश रूप में शंकर का ही अनुसरण किया है। यहाँ मेरा प्रयोजन मात्र यह दिखाना है कि वे अपने मन्तव्यों की पुष्टि में किस प्रकार अनेकान्तवाद का सहारा लेते हैं।

आचार्य शङ्कर को सृष्टिकर्ता ईश्वर के प्रसङ्ग में स्वयं ही प्रवृति-अप्रवृति रूप दो परस्पर विरोधी गुण स्वीकार हैं। **ब्रह्मसूत्र**, शाङ्कर भाष्य 2/2/4 में वे स्वयं ही लिखते हैं-**''ईश्वरस्य तु सर्वज्ञत्वात्, सर्वशक्तिमत्वात् महामायत्वाच्च प्रवृत्त्यप्रवृत्ती न विरुध्यते।''**

पुनः माया को न ब्रह्म से पृथक् कहा जा सकता है और न अपृथक्; क्योंकि पृथक् मानने पर अद्वैत खण्डित होता है और अपृथक् मानने पर ब्रह्म माया के कारण विकारी सिद्ध होता है। पुनः माया को न सत् कह सकते हैं और न असत्। यदि माया असत् है तो सृष्टि कैसे होगी और यदि माया सत् है तो मुक्ति कैसे होगी? वस्तुतः माया न सत् है और न असत् तथा न ब्रह्म से भिन्न है और न अभिन्न। यहाँ अनेकान्तवाद जिस बात को विधि मुख से कह रहा है शङ्कर उसे ही निषेधमुख से कह रहे हैं। अद्वैतवाद की कठिनाई यही है कि वह माया की स्वीकृति के बिना जगत् की व्याख्या नहीं कर सकता है और माया को सर्वथा असत् या सर्वथा सत् अथवा ब्रह्म से सर्वथा भिन्न या सर्वथा अभिन्न ऐसा कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। वह परमार्थ के स्तर पर असत् और व्यवहार के स्तर पर सत् है। यहीं तो उनके दर्शन की पृष्ठभूमि में अनेकान्त का दर्शन होता है। शंकर इन्हीं कठिनाइयों से बचने हेतु माया को जब अनिर्वचनीय कहते हैं, तो वे किसी न किसी रूप में अनेकान्तवाद को ही स्वीकार करते प्रतीत होते हैं।

आचार्य शङ्कर के अतिरिक्त भी ब्रह्मसूत्र पर टीका लिखने वाले अनेक आचार्यों ने अपनी व्याख्याओं में अनेकान्त दृष्टि को स्वीकार किया है।

महामति भास्कराचार्य ब्रह्मसूत्र के **'तत्तु समन्वयात्'** (1.1.4) सूत्र की टीका में लिखते हैं-''**यदप्युक्तं भेदाभेदयोर्विरोध इति, तदभिधीयते अनिरूपित-प्रमाणप्रमेयतत्त्वस्येदं चोद्यम्। अतोभिन्नाभिन्नरूपं ब्रह्मेति स्थितम् ।।**''

संग्रह श्लोक, पृष्ठ 16-17-

कार्यरूपेण नानात्वमभेद: कारणात्मना।
हेमात्मना यथाऽभेद: कुण्डलाद्यात्मना भिदा।।

यद्यपि यह कहा जाता है कि भेद-अभेद में विरोध है, किन्तु यह बात वही व्यक्ति कह सकता है जो प्रमाण प्रमेय तत्त्व से सर्वथा अनभिज्ञ है।

इस कथन के पश्चात् अनेक तर्कों से भेदाभेद का समर्थन करते हुए अन्त में कह देते हैं कि अत: ब्रह्म भिन्नाभिन्न रूप से स्थित है यह सिद्ध हो गया। कारण रूप में वह अभेद रूप है और कार्य रूप में वह नाना रूप है, जैसे स्वर्ण कारण रूप में एक है, किन्तु कुण्डल आदि कार्यरूप में अनेक।

यह कथन भास्कराचार्य को प्रकारान्तर से अनेकान्तवाद का सम्पोषक ही सिद्ध करता है। अन्यत्र भी **भेदाभेद रूपं ब्रह्मेति समधिगतं** (2.1.22, टीका पृष्ठ 164) कहकर उन्होंने अनेकान्तदृष्टि का ही पोषण किया है।

भास्कराचार्य के समान यतिप्रवर विज्ञानभिक्षु ने **ब्रह्मसूत्र** पर विज्ञानामृत भाष्य लिखा है। उसमें वे अपने भेदाभेदवाद का न केवल पोषण करते हैं, अपितु अपने मत की पुष्टि में कूर्मपुराण, नारदपुराण, स्कन्दपुराण आदि से सन्दर्भ भी प्रस्तुत करते हैं, यथा-

त एते भगवद्रूपं विश्व-सदसदात्कम्।
-पृष्ठ 111

चैतन्यापेक्षया प्रोक्तं व्योमादि सकलं जगत्।
असत्यं सत्यरूपं तु कुम्भकुण्डाद्यपेक्षया।।
-पृष्ठ 63

ये सभी सन्दर्भ अनेकान्त के सम्पोषक हैं, यह तो स्वत: सिद्ध है।

इसी प्रकार निम्बार्काचार्य ने भी अपनी **ब्रह्मसूत्र** की **वेदान्त पारिजात सौरभ** नामक टीका में तत्तुसमन्वयात् (1.1.4) की टीका करते हुए पृष्ठ 2 पर लिखा है-''**सर्वभिन्नाभिन्नो भगवान् वासुदेवो विश्वात्मैव जिज्ञासाविषय इति।**''

शुद्धाद्वैत मत के संस्थापक आचार्य वल्लभ भी ब्रह्मसूत्र के श्रीभाष्य (पृष्ठ 115) में लिखते हैं-

सर्ववादानवसरं नानावादानुरोधि च।
अनन्तमूर्ति तद् ब्रह्म कूटस्थचलमेव च।।
विरुद्धसर्वधर्माणां आश्रयं युक्त्यगोचरम्।

अर्थात् वह अनन्तमूर्ति ब्रह्म कूटस्थ भी है और चल (परिवर्तनशील) भी है, उसमें सभी वादों के लिए अवसर (स्थान) है, वह अनेक वादों का अनुरोधी है, सभी विरोधी धर्मों का आश्रय है और युक्ति से अगोचर है।

यहाँ रामानुजाचार्य जो बात ब्रह्म के सम्बन्ध में कह रहे हैं, प्रकारान्तर से अनेकान्तवादी जैनदर्शन तत्त्व के स्वरूप के सम्बन्ध में कहता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि न केवल वेदान्त में भी अपितु ब्राह्मण परम्परा में मान्य छहों दर्शनों के दार्शनिक चिन्तन में अनेकान्तवादी दृष्टि अनुस्यूत है।

श्रमण परम्परा का दार्शनिक चिन्तन और अनेकान्त

भारतीय दार्शनिक चिन्तन में श्रमण परम्परा के दर्शन न केवल प्राचीन हैं, अपितु वैचारिक उदारता अर्थात् अनेकान्त के सम्पोषक भी रहे हैं। वस्तुत: भारतीय श्रमण परम्परा का अस्तित्व औपनिषदिक काल से भी प्राचीन है, उपनिषदों में श्रमणधारा और वैदिकधारा का समन्वय देखा जा सकता है। उपनिषद्-काल में दार्शनिक चिन्तन की विविध धाराएँ अस्तित्व में आ गई थीं, अत: उस युग के चिन्तकों के सामने मुख्य प्रश्न यह था कि इनके एकाङ्गी दृष्टिकोणों का निराकरण कर इनमें समन्वय किस प्रकार स्थापित किया जाये। इस सम्बन्ध में हमारे समक्ष तीन विचारक आते हैं-संजय वेलट्ठीपुत्त, गौतमबुद्ध और वर्द्धमान महावीर।

संजय वेलट्ठीपुत्त और अनेकान्त

संजय वेलट्ठीपुत्त बुद्ध के समकालीन छह तीर्थङ्करों में एक थे। उन्हें अनेकान्तवाद सम्पोषक इस अर्थ में माना जा सकता है कि वे एकान्तवादों का निरसन करते थे। संजयवेलट्ठीपुत्त के मन्तव्य का निर्देश बौद्धग्रन्थों में इस रूप में पाया जाता है-

1. है ? नहीं कहा जा सकता।
2. नहीं है ? नहीं कहा जा सकता।
3. है भी और नहीं भी ? नहीं कहा जा सकता।
4. न है और न नहीं है ? नहीं कहा जा सकता।

इस सन्दर्भ से यह फलित है कि वे किसी भी एकान्तवादी दृष्टि के समर्थक नहीं थे। एकान्तवाद का निरसन अनेकान्तवाद का प्रथम आधार बिन्दु है और इस अर्थ में उन्हें अनेकान्तवाद के प्रथम चरण का सम्पोषक माना जा सकता है। यही कारण रहा होगा कि राहुल सांकृत्यायन जैसे विचारकों ने यह अनुमान किया कि संजयवेलट्ठीपुत्त के दर्शन के आधार पर जैनों ने स्याद्वाद (अनेकान्तवाद) का विकास किया। किन्तु मेरी दृष्टि में उनका यह प्रस्तुतीकरण वस्तुतः उपनिषदों के सत्, असत्, उभय (सत्-असत्) और अनुभय का ही निषेध रूप से प्रस्तुतीकरण है। इसमें एकान्त का निरसन तो है, किन्तु अनेकान्त की स्थापना नहीं है। संजय वेलट्ठीपुत्त की यह चतुर्भंगी किसी रूप में बुद्ध के एकान्तवाद के निरसन की पूर्वपीठिका है।

प्रारम्भिक बौद्ध दर्शन और अनेकान्तवाद

गौतम बुद्ध का मुख्य लक्ष्य अपने युग के ऐकान्तिक दृष्टिकोणों का निरसन करना था, अतः उन्होंने विभज्यवाद को अपनाया। विभज्यवाद प्रकारान्तर से अनेकान्तवाद का ही पूर्व रूप है। बुद्ध और महावीर दोनों ही विभज्यवादी थे। सूत्रकृताङ्ग (1.1.4.22) में भगवान महावीर ने अपने भिक्षुओं को स्पष्ट निर्देश दिया था कि वे विभज्यवाद की भाषा का प्रयोग करें **(विभज्जवायं वागरेज्जा)** अर्थात् किसी भी प्रश्न का निरपेक्ष उत्तर नहीं दें। बुद्ध स्वयं अपने को विभज्यवादी कहते थे। विभज्यवाद का तात्पर्य है प्रश्न का विश्लेषणपूर्वक सापेक्ष उत्तर देना। **अंगुत्तरनिकाय** में किसी प्रश्न का उत्तर देने की चार शैलियाँ वर्णित हैं-1. एकांशवाद अर्थात् सापेक्षिक उत्तर देना, 2. विभज्यवाद अर्थात् प्रश्न का विश्लेषण करके सापेक्षिक उत्तर देना, 3. प्रतिप्रश्न पूर्वक उत्तर देना और 4. मौन रह जाना (स्थापनीय) अर्थात् जब उत्तर देने में एकान्त का आश्रय लेना पड़े वहाँ मौन रह जाना। हम देखते हैं कि एकान्त से बचने के लिए बुद्ध ने या तो मौन का सहारा लिया या फिर विभज्यवाद को अपनाया। उनका मुख्य लक्ष्य यही रहा कि परम तत्त्व या सत्ता के सम्बन्ध में शाश्वतवाद, उच्छेदवाद जैसी परस्पर विरोधी विचारधाराओं में से किसी को स्वीकार नहीं करना। त्रिपिटक में ऐसे अनेक सन्दर्भ हैं, जहाँ गौतम बुद्ध ने एकान्तवाद का निरसन किया है। जब उनसे पूछा गया-क्या आत्मा और शरीर अभिन्न हैं? वे कहते हैं-मैं ऐसा नहीं कहता। फिर जब यह पूछा गया-क्या आत्मा और शरीर भिन्नाभिन्न हैं? उन्होंने कहा-मैं ऐसा भी नहीं कहता हूँ। पुनः जब यह पूछा गया है-क्या आत्मा और शरीर अभिन्न हैं? उन्होंने कहा-मैं ऐसा भी नहीं कहता हूँ। जब उनसे यह पूछा गया-गृहस्थ आराधक होता है या प्रव्रजित? तो उन्होंने अनेकान्त शैली में कहा-यदि गृहस्थ और त्यागी मिथ्यावादी हैं तो वे आराधक नहीं हो सकते, यदि दोनों सम्यक् आचरण करने वाले हैं तो वे आराधक हो सकते हैं **(मज्झिमनिकाय 19)**। इसी प्रकार जब महावीर से जयन्ती ने पूछा, भगवन्! सोना अच्छा है या जागना? तो उन्होंने कहा-कुछ का सोना अच्छा है और कुछ का जागना, पापी का सोना अच्छा है और धर्मात्मा का जागना। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रारम्भिक बौद्धधर्म एवं जैनधर्म में एकान्तवाद का निरसन और विभज्यवाद के रूप में अनेकान्तदृष्टि का समर्थन देखा जाता है।

स्याद्वाद और शून्यवाद

यदि बुद्ध और महावीर के दृष्टिकोण में कोई अन्तर देखा जाता है तो वह यही कि बुद्ध ने एकान्तवाद

के निरसन पर अधिक बल दिया। उन्होंने या तो मौन रहकर या फिर विभज्यवाद की शैली को अपनाकर एकान्तवाद से बचने का प्रयास किया। बुद्ध की शैली प्रायः एकान्तवाद के निरसनपरक या निषेधपरक रही, परिणामतः उनके दर्शन का विकास शून्यवाद में हुआ, जबकि महावीर की शैली विधानपरक रही, अतः उनके दर्शन का विकास अनेकान्त या स्याद्वाद में हुआ।

इसी बात को प्रकारान्तर से माध्यमिक कारिका (2.3) में इस प्रकार भी कहा गया है-

न सद् नासद् न सदसत् न चानुभयात्मकम्।
चतुष्कोटिविनिर्मुक्तं तत्त्वं माध्यमिका विदुः।।

अर्थात् परमतत्त्व न सत् है, न असत् है, न सत्-असत् है और न सत्-असत् दोनों नहीं है।

यही बात प्रकारान्तर से विधिमुखशैली में जैनाचार्यों ने भी कही है-"**यदेव तत्तदेवातत् यदेवैकं तदेवानेकं, यदेव सत् तदेवासत्, यदेव नित्यं तदेवा-नित्यम्।**"

अर्थात् जो तत् रूप है, वही अतत् रूप भी है। जो एक है, वही अनेक भी है। जो सत् है, वही असत् भी है। जो नित्य है, वही अनित्य भी है।

उपर्युक्त प्रतिपादनों में निषेधमुख शैली और विधिमुख शैली का अन्तर अवश्य है, किन्तु तात्पर्य में इतना अन्तर नहीं है, जितना समझा जाता है। एकान्तवाद का निरसन दोनों का उद्देश्य है।

शून्यवाद और स्याद्वाद में मौलिक भेद निषेधात्मक और विधानात्मक शैली का है। एकान्त में रहा हुआ दोष शून्यवादी और स्याद्वादी दोनों ही देखते हैं। किन्तु जहाँ शून्यवादी उस एकान्त के दोष के भय से उसे अस्वीकार कर देता है, वहाँ अनेकान्तवादी उसके आगे स्यात् शब्द रखकर उस दूषित एकान्त को निर्दोष बनाने का प्रयत्न करता है।

शून्यवाद तत्त्व को चतुष्कोटिविनिर्मुक्त शून्य कहता है तो स्याद्वाद उसे अनन्तधर्मात्मक कहता है, किन्तु स्मरण रखना होगा कि शून्य और अनन्त का गणित एक ही जैसा है। शून्यवाद जिसे परमार्थसत्य और लोकसंवृतिसत्य कहता है उसे जैन दर्शन निश्चय और व्यवहार कहता है। तात्पर्य यह है कि अनेकान्तवाद और शून्यवाद की पृष्ठभूमि में बहुत कुछ समरूपता है।

उपसंहार

प्रस्तुत विवेचन से यह स्पष्ट है कि समग्र भारतीय दार्शनिक चिन्तन की पृष्ठभूमि में अनैकान्तिक दृष्टि रही हुई है। चाहे उन्होंने अनेकान्त के सिद्धान्त को उसके सम्यक् परिप्रेक्ष्य में ग्रहण न कर उसकी खुलकर समालोचना की हो। वस्तुतः अनेकान्त एक सिद्धान्त नहीं, एक पद्धति (Methodology) है और फिर चाहे कोई भी दर्शन हो 'बहुआयामी परमतत्त्व' की अभिव्यक्ति के लिए उसे इस पद्धति को स्वीकार करना ही होता है। चाहे हम सत्ता को निरपेक्ष मानें और यह भी मानलें कि उस निरपेक्ष तत्त्व की अनुभूति भी सम्भव है, किन्तु अभिव्यक्ति तो निरपेक्ष सम्भव नहीं है। निरपेक्ष अनुभूति की अभिव्यक्ति का जब भी भाषा के माध्यम से कोई प्रयत्न किया जाता है, वह सीमित और सापेक्ष बन कर रह जाती है। अनन्तधर्मात्मक परमतत्त्व की अभिव्यक्ति का जो भी प्रयत्न होगा वह तो सीमित और सापेक्ष ही होगा। एक सामान्य वस्तु का चित्र भी जब बिना किसी कोण के लेना सम्भव नहीं है, तो फिर उस अनन्त और अनिर्वचनीय के निर्वचन का दार्शनिक प्रयत्न अनेकान्त की पद्धति को अपनाये बिना कैसे सम्भव है? यही कारण है कि चाहे कोई भी दर्शन हो, उसकी प्रस्थापना के प्रयत्न में अनेकान्त की भूमिका अवश्य निहित है और यही कारण है कि सम्पूर्ण भारतीय दार्शनिक चिन्तन की पृष्ठभूमि में अनेकान्त का दर्शन रहा है।

सभी भारतीय किसी न किसी रूप में अनेकान्त को स्वीकृति देते हैं, इस तथ्य का निर्देश उपाध्याय यशोविजयजी ने (अध्यात्मोपनिषद् 1.45-49) किया है, हम प्रस्तुत आलेख का उपसंहार उन्हीं के शब्दों में करेंगे-

चित्रमेकमनेकं च रूपं प्रामाणिकं वदन्।
योगो वैशेषिको वापि नानेकांतं प्रतिक्षिपेत्।।
विज्ञानस्य मैकाकारं नानाकारं करंबितम्।
इच्छंस्तथागतः प्राज्ञो नानेकांतं प्रतिक्षिपेत्।।
जातिवाक्यात्मकं वस्तु वदन्ननुभवोचितम्।
भाट्टो वा मुरारिर्वा नानेकांतं प्रतिक्षिपेत्।।
अबद्धं परमार्थेन बद्धं च व्यवहारतः।
ब्रुवाणो ब्रह्मवेदान्ती नानेकांतं प्रतिक्षिपेत्।।
ब्रुवाणो भिन्न-भिन्नार्थन् नयभेदव्यपेक्षया।
प्रतिक्षिपेयुर्नो वेदाः स्याद्वादं सार्वतान्त्रिकं।।

-निदेशक, प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर (मध्यप्रदेश)

आजीविका

डॉ. रमेश 'मयंक'

आजीविका पाकर
प्रसन्नता-सन्तोष को पाऊँ,
आदर-न्याय के साथ-साथ
धन-यश का हो अर्जन ऐसी-जीवनशैली को
अपनाऊँ।
रहे प्रसन्नचित्त मन, आजीविका बने-
सेवा का माध्यम।
कर सकूँ जीवन पथ का निर्माण,
उत्पादन-वितरण में सन्तुलन
सेवा-कर्म का मिले सुखद परिणाम।
विलासिता-कुपथ लोभ से बने दूरी,
शान्ति-सुख ज्ञान संयम-साधना
आजीविका के अङ्ग हो जरूरी।
आजीविका के चयन में
भौतिक चकाचौंध, बनने लगी अवरोध।
संयम पूर्ण जीवन श्रेष्ठता के लिए
चुनौती को करना स्वीकार,
स्वाध्याय-ध्यान आत्म-साधना का आकर्षण
मिटा पाएगा विकार।
विकारों पर विजय का प्रबन्धन होता कठिन
इसीलिये करूँ ऐसा चयन,
मन न करे उद्विग्नता का अनुभव
आजीविका में सहजता से उत्साह को पाना
स्वयं को जीत लेने से नहीं होता कम।
क्योंकि-स्वयं-परिवार के लिए
कुछ पल नहीं निकाल पाए तो
ऐसी व्यस्तता को दूर से ही करना नमस्कार
पैसे के हाथ बिक जाना,
शोषण के शिकञ्जे में कसते जाना
अघोषित दास कहलाना
पराधीनता के क्षणों के साथ
कठपुतली बन पाना विकट त्रासदी है।
आजीविका के साधन की दिशा
चित्त को विकृत बनाए
परिवार को संकट में डाले तनावग्रस्तता के साथ
स्वास्थ्य पर हो कुप्रभाव
तो ऐसा चयन नहीं होगा सही विकल्प.....।
जरूरी है-जीवन के सत्य को समझना,
विषय-वासनाओं को जीतना,
नैतिकता के मार्ग पर निरन्तर बढ़ना।
हे प्रभो! जीवन में गृहस्थ रहूँ तो भी
त्याग-तपस्या-संयम को नहीं भूल पाऊँ,
आत्म विजय-आत्म शुद्धि को
जीवन का लक्ष्य बनाऊँ।
हिंसा-झूठ, चोरी-परिग्रह के
जीवन को छोड़ पाप रहित जीवन बिताऊँ।
क्रोध-मान-माया-लोभ पर
रख सकूँ नियन्त्रण और
राग-द्वेष शमन का निभा सकूँ प्रण

-बी 8, मीरा नगर, चित्तौड़गढ़-312001 (राजस्थान)

ISSN 2249-2011

दीक्षा एवं समाधिमरण

ऐसी कृपा हो भगवन्! जब प्राण तन से निकलें

श्री नमन मेहता

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के मुखारविन्द से श्रावकरत्न श्री मोतीलालजी कटारिया ने 14 फरवरी, 2022 को पीपाड़सिटी में प्रव्रज्या अङ्गीकार कर संलेखना-संथारा ग्रहण कर लिया और 15 फरवरी, 2022 को समाधिभावों में उन्होंने महाप्रयाण किया। इसमें गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की दूरदर्शिता, सजगता, विवेकशीलता एवं जीवमात्र के कल्याण की भावना पुष्ट हुई है। -सम्पादक

जन्म और मृत्यु के बीच जीया गया श्रेष्ठ जीवन ही व्यक्ति की महानता का परिचय देता है। जीवन शुभ चिन्तन की दिशा में आगे बढ़ने पर ही विकसित अवस्था को प्राप्त करता है। एक सामान्य व्यक्ति और जिन धर्म की उपासना करने वाले श्रावक के जीवन में चिन्तन धारा का बहुत गहरा अन्तर आ जाता है।

सामान्य व्यक्ति आय के अर्जन में लगा रहता है, वहीं श्रावक कषाय के विसर्जन में रत रहता है। सामान्य व्यक्ति संसाधन के लिए जीता है, वहीं श्रावक साधना के लिए जीता है। सामान्य व्यक्ति सुविधा जुटाने में लगा रहता है, वहीं श्रावक दुविधा को भी सुविधा बना लेता है। एक तरफ कर्मबन्ध का जीवन है, वहीं दूसरी ओर निर्जरा का उपवन है। अन्तर केवल मात्र चिन्तन धारा का है- जो सामान्य व्यक्ति जीवनभर अपने स्वप्नों की दौड़ के पीछे व्यथित रहता है, वहीं एक सच्चा श्रावक निरन्तर अपने तीन मनोरथ की पूर्णता के प्रति आशान्वित रहता है। मन को शुभ एवं सजग चिन्तन धारा में वर्धित करने का नाम मनोरथ है और मनोरथ भी एक नहीं, दो नहीं, पूरे तीन....ये तीन मनोरथ श्रावक जीवन की भावनात्मक प्रगति के आधार हैं। एक के बाद एक नवीन श्रेणी में आरोहण का नाम है मनोरथ। इन मनोरथ को हम वृहदालोयणा के इस दोहे के माध्यम से सुनते रहे हैं-

पाप परिग्रह तज करी, पंच महाव्रत धार।
अन्त समय आलोयणा, करूँ संथारो सार।।

एक श्रावक अपने विचारों को सम्यक् दिशा में अग्रसर करता हुआ सर्वप्रथम मनोरथ में यह सोचता है कि कब मैं संसार का अपना समस्त परिग्रह सीमित कर श्रावक धर्म की आराधना में आगे बढूँगा?

द्वितीय मनोरथ का चिन्तन करते हुए यह विचार किया जाता है कि कब मैं इस बचे हुए परिग्रह को भी सदा के लिए त्याग कर संसार को परीत करने वाले मुक्ति के आधार संयम धर्म को ग्रहण करूँगा?

तृतीय मनोरथ के चिन्तन में श्रावक यह सोचता है कि धन्य होगा वह दिन जब मैं मृत्यु को निकट जानकर चारों प्रकार के आहार का त्याग कर आत्मभावों में रमण करते हुए समाधिमरण-पण्डितमरण को प्राप्त करूँगा?

एक मनोरथ का पूर्ण होना धन्यता है। धन्यातिधन्यता है द्वितीय मनोरथ का भी सफल हो जाना, परन्तु अनन्तानन्त पुण्यवानी का उदय है तीनों ही मनोरथों का पूर्ण हो जाना। न जाने कितनी धर्मसाधना और कर्म-निर्जरा का परिणाम है तीनों ही मनोरथों की पूर्ति। ऐसा प्रायः बहुत ही कम हो पाता है और हो जाए तो वह मनोरम दृश्य अप्रतिम होता है।

ऐसा ही सुन्दर और अनुपम दृश्य उपस्थित हुआ पावनधरा पीपाड़ शहर में। प्रसङ्ग था रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर, जिनशासन गौरव, परम पूज्य आचार्य भगवन्त 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के संसारपक्षीय बहनोई आदरणीय आदर्श सुश्रावक श्री मोतीलालजी कटारिया की आचार्य भगवन्त 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में हुई दीक्षा और संथारे का। इस सन्दर्भ में बात करें उससे पहले उनके जीवन की एक

झाँकी जान लेना हमारे लिए नितान्त आवश्यक है।

स्वनामधन्य आदरणीय सुश्रावक श्री मोतीलाल जी कटारिया का जन्म श्रावकरत्न श्रीमान गुलाबचन्दजी कटारिया के यहाँ सुश्राविका श्रीमती मीरांबाई जी की रत्नकुक्षि से हुआ। समय के परिपाक पर आपका परिणय आदरणीय वीरपिता सुश्रावक श्रीमान मोतीलाल सा गाँधी की धर्मपरायणा सुपुत्री चन्दाकँवर के सङ्ग हुआ। आपका गृहस्थ एवं व्यापारिक जीवन बड़ा नपा-तुला और सन्तोषमय रहा। प्रारम्भ से ही धर्मसाधना की आपकी रुचि बड़ी गहरी रही। सामायिक और स्वाध्याय की साधना के बिना आपका मन ही नहीं लगता था। व्यापार से निवृत्ति के पश्चात् तो आप धर्माराधना में और अधिक तल्लीन होते गए। आपका पूरा दिन दया-संवर की साधना के साथ स्थानक में ही व्यतीत होता, यहाँ तक कि प्रायः करके शरीर के आवश्यक कार्य की निवृत्ति आदि के लिए भी आप परिष्ठापनिका भूमि का ही उपयोग करते। किसी भी परम्परा के सन्त-सती विराजमान रहे, आप समान लगन और भाव से उनकी सेवा में उपस्थित होकर अपनी धर्मसाधना का आनन्द लेते रहे।

आपकी धर्म रुचि तो समय की अवस्था के साथ इस प्रकार गहरी होती गई कि वृद्धावस्था में भी जब तक चलने की शक्ति रही तब तक स्थानक में आकर ही धर्म-ध्यान किया करते, यहाँ तक कि 15 से 20 बार रास्ते में कमजोरी के कारण आते-जाते नीचे गिर जाने के पश्चात् भी आपने स्थानक आना नहीं छोड़ा (यह बात निश्चित रूप से उस पीढ़ी और उन लोगों के लिए एक सशक्त प्रेरणा है जो कि स्थानक जाने के नाम से भी कतराते हैं।) सन्त-सती मण्डल के प्रवास के दौरान तो आप उन्हीं की सेवा-सन्निधि में चाहे कैसी भी ऋतु हो, स्थानक में ही रहकर दया-संवर की साधना करते और वह भी न जाने कितने ही वर्षों से। कभी किसी से लड़ाई-झगड़ा नहीं, वाद-विवाद नहीं, आबालवृद्ध सभी के साथ स्नेह और प्रेमभाव, सरल स्वभाव, बात भी कहते तो धर्म प्रेरणा की, प्रार्थना-प्रवचन, वाचनी, प्रतिक्रमण सब जगह उपस्थित, उन्हें देखा भी तो कुछ पढ़ते या जपते ही देखा, वर्षों तक प्रति समय केवल धर्म की लगन। धन्य है ऐसा श्रावक धर्म के प्रति समर्पण। पिछले एक-डेढ़ वर्ष से गमनागमन में तकलीफ होने पर भी अपने दोहित्र के साथ गुरु दर्शन हेतु स्थानक आना तो आना ही और समीप से गुरु दर्शन का आनन्द लेते-धन्य उनकी गुरुभक्ति। ऐसी धर्म आराधना, भक्ति साधना करते हुए उन्होंने न जाने कितनी बार और बार-बार यह मनोरथ ध्याया होगा कि मेरा संसार परीत हो, मैं भी एक सन्त बनूँ, मुझे पण्डित-मरण प्राप्त हो। कितने ही वर्षों की संजोयी यह भावना, यह मनोरथ का चिन्तन कब साकार रूप ले ले, कब पुण्यवानी अपना जोर मार ले- कह नहीं सकते?

आदरणीय मोतीलालजी का यूँ तो पिछले एक-डेढ़ वर्ष से स्वास्थ्य समीचीन नहीं था, परन्तु इस फरवरी मास से तो अस्वस्थता चरम पर आ गई थी।

परम पूज्य आचार्यदेव 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा., भावी आचार्य परम श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. आदि ठाणा पिछले दीर्घ समय से स्वास्थ्य के कारण पीपाड़ शहर में ही विराज रहे हैं। श्रावकजी की अति अस्वस्थता की बात सुनकर भावी आचार्यश्री जब भी गोचरी में पधारते उन्हें मांगलिक पाठ सुना कर साता उपजाते।

12 फरवरी को तो अधिक अस्वस्थता हो जाने से श्री मोतीलालजी को परिजन उपचार हेतु जोधपुर लेकर गए और चिकित्सकों ने खून से सम्बन्धित शिकायत बताई और खून चढ़ाने का आग्रह किया, परन्तु गिरते स्वास्थ्य को देखकर परिजनों को यह बात उचित कम लगी और सुपुत्री श्रीमती रेखा जी के आग्रह पर उन्हें पुनः पीपाड़ ले आये। 13 फरवरी को सुबह अस्वस्थता के समाचार प्राप्त होने पर परम श्रद्धेय भावी आचार्य श्री जी स्वयं मंगलपाठ फरमाने गए तो श्रावक जी की स्थिति को भाँपते हुए धर्म आराधना और संथारे के विषय में प्रेरणा

की। तत्समय तो भावी आचार्य श्री मंगलपाठ सुना कर पुनः स्थानक पधार गए।

अगले दिवस 14 फरवरी को सुबह परम श्रद्धेय भावी आचार्य श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. पुनः मंगल पाठ फरमाने हेतु पधारे। प्रतिदिन की दिनचर्या के अनुरूप भावी आचार्यश्री गोचरी में पधारे, उसी समय आदरणीय सुश्रावक श्री मोतीलालजी कटारिया की सुपुत्री श्रीमती रेखा जी स्थानक आई और पूज्य आचार्य देव के चरणों में शीघ्रातिशीघ्र संथारा करवाने की विनति की। पूज्य आचार्य देव ने भी दूरदर्शिता और सुज्ञता का परिचय देते हुए भावी आचार्य श्री गोचरी से पधारे तो उन्हें तुरन्त मोतीलाल सा को संथारा करवाने हेतु जाने की बात खयाल में दी। संघ के सुज्ञ सुश्रावक श्री सुमतिजी मेहता, धनेन्द्रजी चौधरी को भी वहाँ पहुँचने का संकेत हुआ। आदरणीय सुश्रावक जी के घर पर पधारते ही पूज्य भावी आचार्यश्री ने स्थिति देखी और घरवालों से पुनः संथारे के विषय में पूछा और सब की सहमति प्राप्त की। पश्चात् में सभी परिजनों के समक्ष निवेदन किया-''पूज्य आचार्य भगवन्त स्वयं यहाँ विराज रहे हैं, अतः संथारा स्थानक में उन्हीं के मुखारविन्द से हो तो ज्यादा शोभा का कार्य होगा।'' पुनः पुनः अपनी बात दोहराते रहे, आपकी बात को संघ के सुज्ञ-श्रावकों का समर्थन और सहयोग मिला, परन्तु परिजन इस ऊहापोह में रहे कि अगर स्थानक में संथारा करवाया जाएगा तो पुनः घर लाने की स्थिति किस प्रकार बन पाएगी? इस पर संघ के श्रावकों ने इस सम्बन्ध में निर्दोष रूप से अपनी ओर से समस्त व्यवस्था एवं सहयोग करने की बात कही तो एक निश्चिन्तता का प्रसार हुआ। बिना कोई समय व्यतीत किए उन्हें तुरन्त लगभग 12.15 बजे स्थानक लाया गया और पूज्य आचार्यदेव के समक्ष उपस्थित किया गया।

समय के ज्ञाता और दीर्घद्रष्टा आचार्यदेव ने स्थिति जानते हुए परिजनों से कहा-''इनकी संथारे से पूर्व दीक्षा हो जाए तो सोने में सुहागा हो जाएगा और इनकी समस्त सेवा की जिम्मेदारी सभी सन्त और स्वयं मेरी रहेगी, इस सम्बन्ध में आप निश्चिन्त रहें। यकायक दीक्षा की बात सुनकर एक बार सभी सोचने को विवश तो हुए, परन्तु तुरन्त ही तैयार भी हो गए और संघनायक पूज्य आचार्य देव का संकेत भर मिलते ही संघ के सभी घटक यथा सन्त-सती, श्रावक-श्राविका तुरन्त तैयारी में तत्पर हो गए। कोई पुराने वस्त्र के परिवर्तन में, तो कोई नवीन वस्त्र आदि तैयार करने में, कोई रजोहरण तैयार करने में तो कोई संस्तारक तैयार करने में संघ के उपस्थित प्रत्येक सन्त-सतीगण ने श्रावक-श्राविका ने जो बन पड़ा सहयोग किया और मात्र आधे घण्टे के समय मात्र में सभी तैयारियाँ कर दी गईं। आचार्य देव ने स्वयं सभी परिजनों से दीक्षा की आज्ञा ली। दिव्यद्रष्टा गुरुदेव ने न नक्षत्र देखा, न मुहूर्त; उन्होंने स्थिति देखी, एक जीव को कुछ घड़ियों का आ सकने वाला संयम देखा, उन्होंने एक आत्मा का कल्याण देखा, उन्होंने जिनशासन की होने वाली शोभा देखी। गुरु हीरा उदार और कल्याणदृष्टि से श्री मोतीलालजी को और मोतीलालजी समर्पण दृष्टि से गुरु हीरा को अपलक निहार रहे थे। परिजनों की आज्ञा पाकर, एकदम सहज वातावरण में, सजग और चेतन अवस्था में, मुमुक्षु श्री मोतीलालजी कटारिया को पूज्य गुरुदेव ने अनन्त कृपा बरसाते हुए 'करेमि भंते' का यावज्जीवन का सर्वश्रेष्ठ पाठ पढ़ाकर संयम जीवन में आरोहित कर दिया और उनका वर्षों से ध्याया गया दूसरा मनोरथ पूर्ण हो गया। मुमुक्षु सुश्रावक श्रीमान मोतीलालजी अब नवदीक्षित श्रद्धेय श्री मोतीमुनि जी म.सा. हो गए। रत्नसंघ के गौरवशाली इतिहास में श्रद्धेय श्री मोतीमुनि जी म.सा. के दीक्षित होने से प्रथम बार साला-बहनोई की दीक्षित जोड़ी होने का ऐतिहासिक अध्याय जुड़ा जो रत्नसंघ के प्राङ्गण में धन्ना-शालिभद्र की जोड़ी सा अद्भुत दृश्य साक्षात् उपस्थित कर रहा था।

दीक्षा होते ही पूज्य आचार्य देव ने शरीर की स्थिति देख, मृत्यु की सन्निकटता और आसन्न स्थिति जानते हुए चतुर्विध संघ के समक्ष आज्ञापूर्वक पूर्ण चेतन

अवस्था में उनकी स्वयं की अनुमति लेकर उन्हें यावज्जीवन का संथारे का पच्चक्खान करवा दिया और धन्य हो उठे वे क्षण जब एक जीवात्मा का यह तीसरा मनोरथ भी सत्य रूप में परिणत और घटित हो रहा था। धन्य ऐसी पुण्यवानी, धन्य ऐसी अलौकिक घड़ियाँ।

यहाँ उल्लेखनीय है-पूज्य आचार्यदेव की कितनी दूरदर्शिता रही, इसे इस माध्यम से समझें कि दीक्षा देने के दो दिन पूर्व ही अपने समीपवर्ती सन्तों से पूज्य आचार्यदेव ने कह दिया था कि मुझे मोतीलालजी का समय निकट लगता है।

दीक्षा और संथारे के समाचार सोशल मीडिया के माध्यम से तुरन्त पूरे शहर और सर्वत्र जगत में फैल गए। पीपाड़ शहर में जिसने भी यह सुना वह हर्ष और गौरव के साथ आश्चर्यचकित हो गया। स्थानक में दर्शनार्थी बन्धुओं का ताँता सा लग गया। हर कोई दीक्षा और संथारे की अनुमोदना करना चाहता था। प्रत्येक व्यक्ति कर्मों की शृङ्खला को तोड़ने वाले साधक के दर्शन कर स्वयं भी कर्म-निर्जरा करना चाहता था। सन्त-मण्डल में पूज्यपाद आचार्यदेव, भावी आचार्य श्री के अतिरिक्त श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी, देवेन्द्रमुनिजी, जितेन्द्रमुनिजी, अभयमुनिजी, विनम्रमुनिजी, रवीन्द्रमुनिजी, दीपेशमुनिजी तथा सतीमण्डल में विदुषी महासती श्री सुशीलाकँवरजी, महासती श्री सरलेशप्रभाजी, महासती श्री मुक्तिप्रभाजी, महासती श्री रक्षिताजी, महासती श्री संयमप्रभाजी, महासती श्री कोमलश्रीजी, महासती श्री पूनमश्रीजी आदि सभी ने समय-समय पर संथारा साधक आत्मा को यथायोग्य आगमज्ञान, स्वाध्याय, भजन, दोहे आदि सुनाकर अपना अर्घ्य प्रस्तुत करने का भरसक सहयोग किया। संथारा पाठ करवाने के पश्चात् दशवैकालिकसूत्र, कल्याणमन्दिर स्तोत्र, भक्तामर स्तोत्र, पुच्छिंसु णं आदि सुनाए गए, बारह भावनाओं के मार्मिक विवेचन से उन्हें भावनाओं में प्रशस्त किया गया, भजन के माध्यम से भक्ति की सरिता सृजित की गई। सायंकाल नवदीक्षित मुनि श्री को पूज्य सन्त भगवन्तों द्वारा प्रतिक्रमण करवाया गया। उसके पश्चात् श्रावकों द्वारा भी भजन, स्तुति आदि के माध्यम से अपना सहयोग प्रदान किया गया। रात्रिकाल में भी बारी-बारी से सन्त-भगवन्त संथारा साधक मुनि श्री की सेवा और सहयोग में पूरी रात विराजे, तो वहीं बारी-बारी से श्रावकों ने भी पूरी रात्रि नवकार महामन्त्र का जाप करते हुए अपनी भावाभिव्यक्ति प्रस्तुत की।

15 फरवरी को चतुर्दशी और पक्खी का दिवस था। सुबह से ही आगम-गाथाओं का वाचन प्रारम्भ हो गया था, आसपास के क्षेत्रों से भी दर्शनार्थी आगन्तुक आकर अपनी श्रद्धा को प्रकट कर रहे थे। जैसे-जैसे संथारा आगे बढ़ रहा था मुनिश्री की शरीर और भाव की अवस्था की स्वस्थता भी संथारे के प्रभाव से वर्धमान हो रही थी। क्रमानुक्रम से प्रत्येक व्यक्ति और वीर परिजन अपना सहयोग देने को आतुर थे। पूज्यपाद आचार्य देव रात्रि विश्राम के समय स्थानक की निचली मञ्ज़िल पर विराजते हैं और दिन के समय ऊपरी मञ्ज़िल पर विराजते हैं-ऐसे में पूज्य आचार्यदेव सुबह ऊपरी मञ्ज़िल को पधारते समय नवदीक्षित मुनि श्री को सम्भालते हुए मंगलपाठ सुनाकर पधारे। फिर स्वाध्याय सुनाने का क्रम अनवरत जारी रहा। यूँ तो संथारा साधक को समय-समय के साथ आलोचना करवाई ही जाती है, परन्तु पक्खी के दिवस तो आलोचना का महत्त्व विशेष बढ़ जाता है अतः दोपहर में मधुर व्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. द्वारा रचित 18 पापों की आलोचना गीतिका के माध्यम से श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी ने संथारालीन मुनिश्री को सुनाकर पापों की आलोचना करवाई।

15 फरवरी की सुबह से ही मुनिश्री के मुख के अन्दर झाग बन रहे थे, चूँकि तिविहार संथारा था तो जल ग्रहण कराया जा रहा था, परन्तु पानी भी वे नहीं के बराबर ही ले पा रहे थे, हालाँकि शाम होते-होते जो सुबह मुँह में झाग की स्थिति थी वह बिल्कुल समाप्त हो चुकी थी, मुँह साफ नज़र आ रहा था, जल देने का प्रयास किया गया, परन्तु जल के एक-दो घूँट भी लेने में असमर्थता सी लग रही थी, शारीरिक स्थिति अवरोही

हो रही थी।

दीक्षा के साथ ही मुनि श्री स्वाध्याय को सुनने में तल्लीन थे, चक्षुओं के माध्यम से स्वाध्याय के साथ निरन्तर अपनी सहमति दे रहे थे, मानो अब शेष रहे इस समय का पूर्ण रूप से सदुपयोग करना चाहते हों। पूज्य आचार्यदेव सायंकालीन प्रतिक्रमण से पूर्व निचली मञ्ज़िल पर पधारे तो पधारते हुए नवदीक्षित मुनिश्री के पास कुछ देर विराजे, उनकी स्थिति को देखा। नवदीक्षित मुनिश्री एकटक आभार दृष्टि से पूज्य गुरुदेव को निहारे जा रहे थे; उनकी दृष्टि मानो कह रही थी- धन्य हो गुरुदेव! आपने इस जीवन के अन्तिम समय में इस जीव का सहयोग देकर, चारित्र की छत्रछाया देकर, अपनी चरण सन्निधि देकर भवसागर से पार उतारने का अवसर दे दिया, आत्मा के कल्याण मार्ग का दीप प्रज्वलित कर दिया। पूज्य गुरुदेव ने समाधिभाव का मौन उपदेश देकर मंगलपाठ सुनाया और अपने कक्ष की ओर पधार गए।

भावी आचार्यश्री ने कल्याणमन्दिर स्तोत्र सुनाया और सूर्योदय तक के चौविहार के प्रत्याख्यान करवाने लगे, तभी दूरदर्शी पूज्य आचार्य देव ने कक्ष के अन्दर विराजते हुए ही फरमाया-''मुझे अब इनका समय कम लगता है, आप इनको यावज्जीवन के चौविहार प्रत्याख्यान करवा दीजिए।'' पूज्य गुरुदेव की आज्ञा का तत्क्षण, तद्नुरूप पालन किया गया। सायं लगभग 6.15 बजे पर नवदीक्षित संथारा साधक मुनि श्री को चौविहार संथारे के प्रत्याख्यान करवा दिए गए।

पक्खी का दिवस होने से श्रावक भी उस दिन उपस्थित थे और प्रतिक्रमण की तैयारी में थे तो सन्त भी प्रतिक्रमण की तैयारी में लगे हुए थे। संथारासाधक को पुनः पुनः किसी भी प्रकार से मन से भी ईर्यापथिकी की क्रिया का दोष लगा हो तो उसका भी चउवीसत्थव कराया जाता है इसलिए प्रतिक्रमण से पूर्व उन्हें दो चउवीसत्थव करवाए गए। प्रथम ईर्यापथिकी का और द्वितीय 24 तीर्थङ्कर भगवान की स्तुति का। जैसे ही चउवीसत्थव पूर्ण हुआ, उन मुनिश्री की आत्मा ने शनैः शनैः स्वयं को समेटना प्रारम्भ कर दिया था, मानो वह जीवात्मा बस इसी इन्तज़ार में थी कि कब चारों आहार का प्रत्याख्यान हो, कब ईर्यापथिकी का प्रतिक्रमण हो, कब चतुर्विंशति-स्तुति का क्षण आवे और शुभ भावों में इस भव से विदा लें, धन्य-धन्य होती हुई वह आत्मा शून्य से अनंत की यात्रा की ओर प्रयाण कर जाए।

उनके हाथ-पाँव ठण्डे पड़ने लगे थे, पास विराजित सन्तों को उनके श्वास की गति मन्द होती और पश्चात् में बन्द-सी प्रतीत हुई तो भावी आचार्यश्री ने तथा अन्य सन्तों ने देखा और तत्समय प्रतिक्रमण में उपस्थित संघ के प्रमुख श्रावकों को संकेत किया।

हंसा अपनी काया को छोड़ चला था। तुरन्त चिकित्सक आए, उन्होंने जाँच की और यह घोषित किया कि पूज्य मुनि श्री इस संसार से प्रयाण कर गए हैं और लगभग चौविहार संथारे के 25 मिनट पश्चात् ही 6.40 बजे पर मुनिश्री का संथारा सीझ गया।

धन्य है मुनिश्री को जिन्होंने मात्र 30 घण्टे के संयम में उज्ज्वल पज्जवे प्राप्त कर लिए। धन्य है पूज्य आचार्यदेव जिन्होंने अपनी ऐसी दूरदृष्टि रखी। धन्य है भावी आचार्यश्री जिन्होंने उन्हें स्थानक में लाने का प्रयत्न किया। धन्य हैं सभी सन्त-सतीगण और वह संघ जो इन ऐतिहासिक क्षणों के साक्षी बने। धन्य हुई आगम की ये पंक्तियाँ-

पच्छावि ते पयाया, खिप्पं गच्छंति अमरभवणाइं।
जेसिं पिओ तवो संजमो य, खंती य बंभचेरं च।।

हर व्यक्ति के मुख से बस यही स्वर गुञ्जायमान हो रहे थे। ऐसी कृपा हो भगवन्-जब प्राण तन से निकले।

मुनिश्री के देवलोकगमन के पश्चात् उपस्थित श्रावकों ने अग्रिम तैयारियाँ प्रारम्भ की, रात्रिकालीन समय होने से मुनि श्री के देह के पास संघ के श्रावक, वीर परिजन पूर्ण रात्रि उपस्थित रहे। संघ ने संथारा सीझने के पार्थिव शरीर सम्बन्धी सभी तैयारियाँ रातों-रात सजगता

के साथ पूर्ण की।

16 फरवरी की सुबह नवकार मन्त्र से स्थानक की गरिमा गूञ्ज रही थी, मुनि श्री की देह तीनों मनोरथों के साकार हो जाने का दिग्दर्शन सभी को दे रही थी। तय समय प्रातः 9:00 बजे मुनिश्री की बैकुंठी स्वर्गाश्रम स्थल की ओर बढ़ी। आसपास के क्षेत्रों से तथा स्थानीय संघ के लोग अच्छी संख्या में उपस्थित थे। अन्तिम विदाई के पलों में हर कोई उन मुनिश्री की साधना को धन्य-धन्य कहते हुए थक ही नहीं रहा था। अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रकाशजी टाटिया के नेतृत्व में संघ पदाधिकारियों तथा वीर परिजन श्री शान्तिलालजी गाँधी, श्री रतनलालजी लूनिया, श्री निलेशजी मुथा, श्री रोहितजी जैन, श्री ऋषभजी जैन आदि के हस्त से अन्तिम संस्कार का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। स्वर्गाश्रम स्थल पर मानव-जीवन की नश्वरता को सम्बोधित करने वाले उपदेशक भजनों की स्तुति की गई और यह सन्देश बारम्बार दिया गया कि-हे मानव! समझो! चिन्तन करो-यह जीवन क्षणभंगुर है, नश्वर है, आत्मा-अजर है, अमर है, अनन्त शक्तिशाली है और इसका एकमात्र लक्ष्य है संसार से मुक्ति।

17 फरवरी को प्रवचन सभा में मुनिश्री की गुणानुवाद सभा रखी गई जिसमें परम श्रद्धेय भावी आचार्य श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म. सा., श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म. सा. तथा सतियों में महासती श्री सुशीलाकँवरजी म. सा., महासती श्री कोमलश्रीजी म. सा. ने अपने उद्गार व्यक्त किए। श्रावको में श्री धनपतराजजी मेहता, ललितजी कोठारी, सुमतिजी मेहता ने अपने भावोद्गार व्यक्त किए। मुनिश्री के सांसारिक पक्ष में दामाद श्री रतनलालजी लूणिया ने सदार आजीवन शीलव्रत के प्रत्याख्यान ग्रहण किए तो अन्य परिजनों ने भी सामायिक आदि व्रत-नियम को स्वीकार कर अपनी सच्ची गुणाञ्जलि अर्पित की।

-मन्त्री, श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ,
पीपाड़सिटी

जीवन-बोध क्षणिकाएँ

श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.

सङ्गति

निम्न गुणी की मत कर सङ्गति,
परन्तु उस पर रखनी ही है सन्मति।।

शान्ति से रहना

चाहता है शान्ति से रहना,
तो सीख ले मधुर कहना
और कटुक सहना।।

मानना

कोई अपने को कुछ भी क्यों न माने,
हम स्वयं को आत्मा से
अधिक भी न मानें।।

भ्रान्त

संसार तो न शान्त है, न अशान्त,
तेरा चित्त ही है भ्रान्त।

महत्ता

इसी में है साधक की पटुता,
स्वयं रखें लघुता, अन्य को दे महत्ता।

घेरा

मिटाना है भव फेरा,
तो तोड़ तेरे-मेरे का घेरा।

साधना

मात्र कायिक सहना ही नहीं है साधना,
कष्ट दाता के प्रति भी
न रहने दे दुर्भावना।।

-संकलित

10 मार्च 2022
जिनवाणी 66
ISSN 2249-2011

प्रासङ्गिक

होली के रंग...... मेरे अरिहंत प्रभु के सङ्ग

श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'

आज होली है ...विराट्नगर की सारी प्रजा नगर के उत्तर दिशा में बने राजशाही उपवन में सामूहिक होली खेलने के लिए एकत्रित हुई है। ऐसी सामूहिक होली जिसमें राजा भी हैं और रंक भी, निर्धन भी हैं और धनवान भी, नर भी हैं और नारियाँ भी, बच्चे भी हैं और बुजुर्ग भी। यह महाराणा विक्रमसिंह का आदेश भी है और आमन्त्रण भी ...कि होली के दिन नगर का हर परिवार का प्रत्येक सदस्य इस उपवन में ही रहे ...होली खेले, नृत्य-संगीत इत्यादि से मनोरञ्ज़न करे और अनेक स्वादिष्ट व्यञ्जनों से युक्त शाहीभोज का आनन्द ले। यह कड़ी राजाज्ञा है कि होली के दिन ...नगर का प्रत्येक नागरिक हो या उनके यहाँ बाहर से पधारे अतिथि ...कोई भी बिना रंग के दिखना नहीं चाहिए ...और यदि आज्ञा का पालन नहीं हुआ तो कठोर दण्ड दिया जायेगा।

अनेकों लोग इस दिन की वर्ष भर से प्रतीक्षा करते हैं ...तो कुछ धर्मनिष्ठ लोग इस दिन उदास भी हो जाते हैं, पर क्या करें ...महाराणा को नाराज़ करके नगर में कैसे रहा जा सकता है? वैसे भी प्रजा अपने महाराणा को अत्यन्त पसन्द करती है ...महाराणा युवा भी है और समझदार भी, वीर भी है और गम्भीर भी और सबसे बड़ी बात यह है कि महाराणा अत्यन्त गुणानुरागी है। खैर...पूरा उपवन अनेक साधनों से सजाया हुआ है, जिसमें बीचोंबीच ... स्वच्छ पानी से लबालब भरा बड़ा सा सरोवर ... इसके अलावा सैकड़ों कुण्डों में भरा हुआ पानी...होली खेलने के लिए ...रंग लगाने के लिए अलग मैदान .. जिसमें एक सुसज्जित मञ्च पर लाल-पीले, हरे-नीले ...इत्यादि अनेक मनभावन रंगों से भरे थाल ...संगीत, नृत्य, नाटक इत्यादि के लिए विशाल नाट्यशाला ...उपवन के एक कोने में विस्तृत भोजन-शाला ...जिसमें हजारों लोगों के एक साथ बैठकर भोजन करने की व्यवस्था ...यानी पूरे दिन भर का मनोरञ्ज़न। सुबह सूर्योदय के साथ ही जन सैलाब उमड़ने लगा ...उपवन के भव्य प्रवेश द्वार पर स्वयं महामन्त्री जी के नेतृत्व में ...राजसेवक सभी पुरुष वर्ग का गुलाल के तिलक से और राज सेविकाएँ सभी नारी वर्ग को रंग-बिरंगी चुन्दड़ी ओढ़ाकर स्वागत कर रहे हैं।

नियत समय पर महाकाय गजराज पर सवार...महाराणा विक्रमसिंह और महारानी सुनन्दा का आगमन हुआ ...और ...ऐसे लग रहा है कि जैसे स्वयं इन्द्र सपत्नीक अपने ऐरावत हाथी पर बैठकर पधारे हों ...अभी कुछ महीनों पहले ही महाराणा और महारानी विवाह बन्धन में बँधे हैं एवं महारानी सुनन्दा की अपनी ससुराल.. यानी विराट्नगर में यह पहली होली है। महारानी सुनन्दा कुछ उदास सी है...किन्तु महाराणा विक्रमसिंह अत्यधिक हर्षित ...यह राजवंश की कुल परम्परा जो है कि ...हर वर्ष होली के त्यौहार पर वे हाथी पर बैठ ...फिर सभी प्रजाजनों पर रंग डालकर ...सामूहिक होली उत्सव की शुरुआत करते हैं और इस बार तो महारानी भी उनके संग है।

महामन्त्री का संकेत हुआ और ढ़ोल-नगाड़े बजने लगे। महाराणा...हाथी पर बनी पालकी पर खड़े हुए ...सभी प्रजा उन्हीं को देख रही है। महाराणा भी पालकी पर से सभी को देख पा रहे हैं। हाथी को नियन्त्रित कर रहे महावत ने महाराणा की सेवा में रंगों से भरा थाल प्रस्तुत किया। महाराणा ने दोनों हाथों में रंग भरा, बस प्रजाजन पर उछालने भर की देर थी कि महाराणा की नज़र उपवन के ईशान कोण में बने विश्राम भवन की तरफ गई ...श्वेत वस्त्रों में कुछ साधु दिखे।

एक तेजस्वी युवा साधु चौकी पर बैठकर कुछ बोल रहे हैं और बाकी साधु सुन रहे हैं। महाराजा को कुछ आश्चर्य भी हुआ और अभिमान पर कुछ ठेस भी लगी कि ये सभी उत्सव में शामिल क्यों नहीं? रंग से भरे हाथ रुक गए। महामन्त्री जी! उस विश्राम भवन में ये कौन साधु हैं? वे राजकीय होली में इकट्ठे क्यों नहीं हुए?

महामन्त्रीजी ने ढ़ोल-नगाड़े रोकने का इशारा किया और महारानी जी की तरफ देखा ....

महारानी सुनंदा-आर्य! ये जैनाचार्य हैं ...मैंने अपने पीहर देवगढ़ में भी अनेक बार जैन सन्त-सती मण्डल की सेवा पर्युपासना का लाभ लिया है। कल जब आचार्यश्री नगर में पधारे तब आप कुछ राजकीय कार्यों में अति व्यस्त थे ...तब मेरी अनुमति से ...आचार्य श्री अपने शिष्यगण के साथ यहाँ रुके हैं ...आर्य! ये जैन साधु ...होली जैसे कोई उत्सव नहीं मनाते ...बल्कि इनका तो हरेक दिन एक उत्सव ही होता है ...आनन्द का उत्सव...।

महाराणा-यह तो आपने बहुत अच्छा किया महारानीजी ...पर मुझे कुछ समझ नहीं आया ...मैं यह स्वीकार नहीं करता कि ...बिना उत्सव के ...बिना मनोरञ्ज़न के ...जीवन में आनन्द कैसे आ सकता है?...इनके चेहरे पर इतना सुकून ...इतना आनन्द कैसे? मेरी हार्दिक इच्छा है कि मेरी प्रजा में हर कोई ...चाहे वो सैनिक हो या साधारण नागरिक ...साधु महात्मा हो अथवा संन्यासी ..इस होली उत्सव में सम्मिलित होकर ...इस अनुपम आनन्द का अनुभव करे....मैं इन साधु-सन्तों को भी होली खेलने के लिए आमन्त्रित करना चाहता हूँ।

महारानी (मुस्कुराते हुए)-आर्य! आप आचार्यश्री के साथ होली के रंग खेलना चाहते हैं ...पर कहीं आप स्वयं ही आचार्यश्री के रंग में नहीं रंग जाएँ और स्वामी! आप जो यह जानना चाहते हैं कि उनके जीवन में बिना त्यौहार के भी इतना अधिक आनन्द कैसे है? ...आपकी इस उत्सुकता का निवारण तो वे आचार्यश्री ही बेहतर कर पायेंगे ...।

महाराणा (हल्की मुस्कान के साथ रंग भरे हाथ साफ़ करते हुए)-महारानीजी ..यह भी आपने खूब कही...देखें कि कौन किसको रंगता है? ..मेरी जिज्ञासा का समाधान आचार्यश्री अवश्य कर देंगे, महावत हाथी को उस तरफ ले चलो।

पूरी प्रजा भी महाराणा के पीछे-पीछे उपवन की उसी दिशा में चल पड़ी।

महाराणा हाथी से उतर कर आचार्यश्री की ओर बढ़े ...समीप से देखा उनके प्रशान्त चेहरे को ...क्या भव्य ललाट ...क्या ओजस्विता ...क्या स्मित मुस्कान सहित ...धीर-गम्भीर वाणी में वे अपने शिष्यों को कुछ वाचना प्रदान कर रहे हैं ...क्या सुन्दर-शान्त वातावरण ....क्या वे श्वेत वस्त्रधारी आचार्यश्री और उनके शिष्य ...ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे ...मानसरोवर में श्वेत राजहंस अपने साथी हंसों के साथ विचरण कर रहे हों ...महाराणा पूर्ण आकर्षित होते हुए विनयपूर्वक बोले।

प्रणाम आचार्यश्री ...

दया पालो राजन्...

महाराणा एवं महारानी को ...मुनिराज के सानिध्य में बैठते देख ...महामन्त्री सहित सभी जनता भी शान्तिपूर्ण तरीके से बैठ गयीं ....सामूहिक होली खेलने के लिए आई गोष्ठी ...अब धर्म परिषद् में परिवर्तित हो चुकी है।

महाराणा-आचार्यश्री! मैं इस नगर का सम्राट् ...महाराणा विक्रमसिंह ...विराट्नगर में आपका और आपके शिष्य परिवार का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ एवं आप सभी हमारे राजअतिथि हैं ...मैं ससम्मान आप सभी को इस उपवन में होली खेलने के लिए आमन्त्रित करता हूँ।

आचार्यश्री-हे देवानुप्रिय राजन्! हम जैन साधु तो सिर्फ अरिहंत प्रभु के साथ होली खेलते हैं ...और वह होली भी पक्के रंगों की होली होती है ....इन मिट जाने वाले ...कच्चे रंगों से होली हम नहीं खेलते ...

महाराणा यह सुनकर आश्चर्यचकित से हो गए ...पहले आचार्यश्री को देखा .... उनके शिष्य मुनिराजों को देखा। फिर एक नज़र महारानीजी को देखा ...सभी के चेहरों पर मन्द-मन्द मुस्कान-सी दिखी ...एकदम स्वाभाविक ..एकदम सहज।

महाराणा–हे कृपासिन्धु! ...ये पक्के रंगों वाली होली कैसी होती है? और अरिहंत प्रभु के साथ होली भला कैसे? वहाँ दूर मैदान में बने मञ्च पर देखिये... हमारे पास तो लाल ...हरे ...नीले ...पीले रंगों का अम्बार लगा हुआ है ...परन्तु आपके रंग कहाँ हैं मुनिवर?

आचार्यश्री–हे नरश्रेष्ठ! हम कल्पनाशक्ति के आधार पर रंगों को अपने जीवन में समाहित करते हैं ....अरिहंत प्रभु की भक्ति हमारे रक्त की हर बून्द में समाहित है ...उनकी आज्ञा के प्रति हमारा सर्वतोभावेन समर्पण है ...जैसे रक्त अपनी लालिमा को कभी छोड़ नहीं सकता ...वैसे ही हम इस भक्ति के लाल रंग में सम्पूर्ण रंगे हुए हैं।

महाराणा–हे दयानिधि! ...मुझे भी इस भक्ति की लालिमा में सराबोर होना है ...कृपया मुझे भी इस लाल रंग से रंग दीजिये ...एवं यह भी बताइये कि ...आपकी होली में हरा रंग कौनसा है ... ?

आचार्यश्री–हे नरेश! ....जैसे पूरी पृथ्वी पर पेड़-पौधों की हरियाली के रूप में ...हरा रंग व्याप्त है, वैसे ही हमारे सम्पूर्ण जीवन में करुणा का हरा रंग व्याप्त है ...करुणा के महासागर अरिहंत प्रभु ने हम सभी पर अनन्त अनुकम्पा करके इसका महत्त्व बताया है ...इस संयम जीवन की अन्तिम साँस तक यह करुणा का हरा रंग हरा ही रहता है ...यह करुणा का हरा रंग हमें सतत प्रेरणा प्रदान करता है ...किसी भी जीव को ...किसी भी प्रकार का दुःख ....नहीं पहुँचाने के लिए।

महाराणा–हे महात्मन्! मैं भी करुणावान बनना चाहता हूँ। कृपया मुझे भी इस हरे रंग से रंग दीजिये तथा यह भी बतायें कि आप नीले रंग की होली किस प्रकार खेलते हैं?

आचार्यश्री–हे भूपाल! ....जैसे यह आकाश पूरी तरह से नीले रंग से रंगा हुआ है ...वैसे ही अरिहंत प्ररूपित धर्म के नीलगगन में हम अपने आप को रंग चुके हैं ...यह धर्म ..आकाश के समान असीम भी है और सर्वोच्च भी ...जिस तरह आकाश सभी को स्थान देता है ...उसी तरह धर्म भी हर प्राणी को अभय देता है ...शान्ति और समाधि प्रदान करता है।

महाराणा–हे श्रमणश्रेष्ठ! ...धन्य है आपके धर्मयुक्त जीवन को ...कृपया मुझे भी इस नीले रंग की आभा से उपकृत करावें तथा यह भी फरमावें कि ...आप किस प्रकार पीले रंग से रंगें हुए हैं?

आचार्यश्री–हे सम्राट्! जैसे सूर्य अपनी पीली रोशनी से धरती को रंग देता है। अपने प्रकाश में सभी को मार्ग दिखाता है ...वैसे ही अरिहंत प्रभु अपने ज्ञान के प्रकाश में हमें रंग कर ...सम्यक् मार्गदर्शन प्रदान कर रहे हैं ...और इसके अलावा हम रंग चुके हैं केसरिया रंग में।

महाराणा–हे अभयदाता! ...मेरा भी अज्ञान अन्धकार दूर कीजिये ...मुझे भी ज्ञान के इस पीताम्बर रंग में रंग दीजिये और प्रभो ...ये केसरिया रंग?

आचार्यश्री–हाँ महाराणा! ...वैराग्ययुक्त संयम का केसरिया रंग ...सर्वोत्कृष्ट वैराग्य का ऐसा शाश्वत रंग ...जो एक बार लग जाए तो बिना वीतरागता दिलाये ...छूटता नहीं ... अरिहंत प्रभु स्वयं वीतरागता के इस केसरिया रंग में रंगें हुए हैं ...और उस केसर की बारिश में हम भी भीग रहें हैं।

महाराणा और महारानी (हाथ जोड़कर)– भगवन्! ...आप हमें भी इस केसरिया रंग से रंग कर कृतार्थ करावें एवं श्रेष्ठ जीवन जीने की कला का ... तथा ऐसे उत्सवों के बिना ही जीवन आनन्ददायक कैसे बने, ...इन रहस्यों को बताने की कृपा करावें।

आचार्यश्री–अहो देवानुप्रियों! ...अब इसका निर्णय तो विराट्नगर के राजा प्रजा को ...यानी आप सभी को करना होगा कि ...वैराग्य वाली केसरिया होली

खेलनी है या कीचड़ की होली? अधर्म की होली या धार्मिक होली ...पाप की होली खेलनी है या पुण्य की होली? इतना जल और इतने रंगों को बरबाद करके तो ...पाप की होली ही खेली जाती है ...जल स्वयं जीव तो है ही, साथ ही जीवन भी है। दिक्कत जल के सदुपयोग में नहीं, बल्कि जल के दुरुपयोग में है ... जरा चिन्तन कीजिये कि ...जिस जल को आप बना नहीं सकते उसे व्यर्थ में बर्बाद करने का अधिकार ही क्या है? हे देवानुप्रियों! ...अनेकों बार होली खेली है मनोरञ्ज़न के नाम पर, किन्तु अब से आत्मरञ्ज़न की होली खेलो ...ऐसी होली ...जो त्याग और तपस्या के रंगों से सुसज्जित हो ...भक्ति और प्रार्थना की मिठास से युक्त हो ...और दान इत्यादि शुभ कार्यों की महक से सुरभित हो।

महारानी–तहत्ति भगवन्! ....

सभी प्रजाजन भी एक साथ ...समवेत स्वर में बोले–तहत्ति भगवन् .... तहत्ति भगवन् ....बोलते हुए महाराणा भी खड़े हुए और अत्यन्त भावविभोर होकर ....हर्षित मन से ...परिषद् को सम्बोधित करते हुए ऐलान किया। मेरे प्रिय प्रजाजनों! ...मैं और महारानीजी अत्यन्त आभारी हैं ऐसे ज्ञानी महापुरुष के ...जिन्होंने आज हमारे अज्ञान के अन्धेरे को दूर किया है ...आचार्यश्री की अद्वितीय कृपा से ...अरिहंत प्रभु रूपी इन्द्रधनुष में अलंकृत...आध्यात्मिक रंगों से एक ऐसी अलौकिक होली ... हमने जीवन में पहली बार खेली है ..हम अन्तर्मन से आचार्यश्री के प्रति अपार कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। हम यह ऐलान करते हैं कि अब से हमारे नगर में हर वर्ष आध्यत्मिक होली ही मनाई जाएगी ....जिसमें रंगों की अथवा पानी की बरबादी नहीं होगी ...बल्कि सदुपयोग वाली ... सहयोग वाली होली होगी। अब हम सभी आचार्यश्री से मांगलिक श्रवण का निवेदन करेंगे ...फिर आप सभी से निवेदन है कि कृपया सुरुचिपूर्ण भोजन ग्रहण कर ...हमारे पुण्यार्जन में सहयोगी बनें ...तत्पश्चात् यहाँ पर तत्काल प्रभाव से ...राजकोष के अन्तर्गत एक दानशाला भी खोली जा रही है ...जिसमें कोषाध्यक्ष महोदय द्वारा ... जिनको भी...जो भी आवश्यकता हो उसकी पूर्ति की जायेगी।

सभी प्रजाजन पूर्ण उत्साह से बोलने लगे ....महाराणा विक्रमसिंह की जय ....महारानी सुनन्दा की जय ...।

महाराणा–नहीं, प्रजाजनों नहीं ....हमारी जय नहीं ...बल्कि आप सभी जय बोलिए ...अरिहंत प्रभु की ....जय ...पूज्य आचार्य भगवन्त की ...जय ...सभी साधु-सन्तों की जय...आज के आध्यात्मिक आनन्द की ... जय।

मांगलिक प्रदान करने के पश्चात् आचार्यश्री ...गहन ध्यान मुद्रा में लीन हो चुके हैं ....महाराणा एवं महारानी सहित सभी प्रजाजन भोजन कर ...उपवन से प्रस्थान कर रहे हैं ....अनेक कुण्डों में भरा पानी आज उछाला नहीं गया, व्यर्थ नहीं बहा ...किन्तु आँखों का पानी तो बह ही गया ....सभी जनों की आँखों से प्रसन्नता के आँसुओं में। महाराणा आज सरोवर पर होली नहीं खेले ...पर आनन्द के सरोवर में डूब गए। महारानी सुनन्दा को अपने पीहर जैसा सुकून महसूस हो रहा है ...वैसे ही सन्त-महात्माओं के दर्शन, वन्दन और सेवा का अमूल्य अवसर जो मिला है ...और महाराणा का निर्ग्रन्थ मुनिराज के प्रति इतना अनुराग और समर्पण ...देखकर महारानी सुनन्दा का मन अत्यन्त प्रमुदित है। क्या महामन्त्री जी ..क्या सेनापति जी ...क्या सैनिक ...सभी प्रजाजनों के रोम-रोम में आज हर्ष की अनुभूति है ...ऐसी त्यागमय होली जो मनाई है।

...और वह उपवन अब भी अत्यन्त शान्त है ...वहाँ गूञ्ज रही है ....एक अनुपम ध्वनि ...अरिहंते सरणं पवज्जामि ...सिद्धे सरणं पवज्जामि ...अब वहाँ होली का कीचड़ नहीं ...बल्कि नज़र आ रहा है ...आध्यात्मिक होली के रंगों से सराबोर ....मुस्कुराता ...त्याग का उपवन ...पावनता का 'तीर्थ'।

-'जिनशासन', 14, अग्रहारम स्ट्रीट, चिन्तादरीपेट, चेन्नई-600002 (तमिलनाडु)

10 मार्च 2022
जिनवाणी 70
ISSN 2249-2011

संवाद-वाटिका

भर यौवन में पाल्यो शील

श्रीमती सुमन कोठारी

सुज्ञ बन्धुओं, माताओं और बहनों! अनन्त ज्ञानी, प्रेम के पयोधि, वात्सल्य-मूर्ति, वीतराग भगवन्त ने भव्य जीवों को आत्म कल्याण का अनुपम मार्ग बताते हुए समझाया है कि हे भव्य प्राणियों! यह मानव जीवन अत्यन्त दुर्लभ है, मानव भव का हर एक क्षण अमूल्य है। यदि यह हाथ से निकल गया तो वापस आना अत्यन्त कठिन है।

आज हम बालक आपके सामने एक संवाद-नाटिका भजन के माध्यम से प्रस्तुत करने जा रहे हैं, जिसका शीर्षक है-'भर यौवन में पाल्यो शील।'

इसमें ब्रह्मचर्य तप का महत्त्व समझाते हुए भगवान ने फरमाया है-'**ब्रह्मचर्य का आध्यात्मिक स्वरूप है आत्मस्वभाव में रमण करना**' आत्मा अनन्त, अक्षय सुख और शान्ति का आगार है। लेकिन आत्मा की गहराइयों तक न पहुँचने वाला मानव इन्द्रिय-विषय एवं भौतिक सुख-साधनों में सुख की खोज करते हुए बाह्य विषय-भोगों में ही रमण करने लगता है। उसकी इस भ्रान्ति का निराकरण और विभाव से स्वभाव में लाने का प्रयास ही ब्रह्मचर्य का प्रारम्भ है। आज हम विजय कुँवर एवं विजयाकुँवरी की कथा सुनाकर ब्रह्मचर्य की महिमा का गुणगान करते हैं-

भजन

श्री विजय कुँवर और विजया कुँवरी नारी।
भर यौवन में पाल्यो शील के ममता मारी।।टेर।।
ये कच्छ देश और कंसबा नामा नगरी।
जहाँ बाग बगीचा शहर की शोभा सगरी।
ये धन्ना नामा सेठ रास है धनरी।
श्री विजय कुँवर के धर्म करण री लगरी।
पुण्यवंत मिली है विजयाकुँवरी नारी।।1।।

कच्छ की पवित्र भूमि-कंसबा नाम की नगरी में विजय कुँवर, विजया कुँवरी जैसी पवित्र पावन आत्माओं ने जन्म लिया। यहाँ धन्ना नामक सेठ रहते थे। नगरी धन-धान्य से परिपूर्ण थी। बाग-बगीचों की शोभा से इस नगरी का सौन्दर्य द्विगुणित हो गया था।

सम्पूर्ण सुख-सुविधा के बीच विजय कुँवर का बचपन बीता, उन्होंने यौवन अवस्था में प्रवेश किया। विजय कुँवर को प्रारम्भ से ही संत समागम करना और धर्म-श्रवण रुचिकर लगता था।

उधर विजया कुँवरी भी सार-सम्भाल करने वाली पाँच धायों के बीच लाड-प्यार में पलकर, बचपन की देहली पार कर यौवन में प्रवेश करती है। अत्यन्त रूपवती होने पर भी अंहकार उसे छू भी नहीं पाया था।

सन्त समागम का लाभ लेने से दोनों ही पवित्र और धार्मिक आत्माएँ थीं। विजय कुँवर एवं विजया कुँवरी में दीक्षा के शुभ भाव उत्पन्न हुए थे, परन्तु माता की आज्ञा न मिलने से दीक्षा न ले सके। योगानुयोग से विजय कुँवर और विजया कुँवरी का विवाह सम्पन्न हुआ। विवाह की प्रथम रात्रि-

भजन

सोले करके सिंगार पिऊ घर जाती।
गहणा पहर्या खूब घुँघरू धमकाती।
बालम से सुन्दर प्रेम धरी बतलाती।
कामी की छाती थर्र-थर्र थर्राती।
हित करके बोले विजय कुँवर सुन प्यारी।।2।।

विजयाकुँवरी सोलह शृङ्गार करके, सिर से पैरों तक गहनों से सजी-सँवरी घुंघरू की मधुर ध्वनि के साथ धीरे-धीरे चलकर पति के शयन कक्ष में प्रवेश करती है। पति से मधुर वाणी से प्रेम का इज़हार करती है। ऐसे में बड़े-बड़े त्यागी, तपस्वी जन का मन भी चञ्चल हो

जाता है। इतिहास में उदाहरण भरे पड़े हैं कि विश्वामित्र जैसे महान् तपस्वी की तपस्या भी मेनका के कारण भङ्ग हो गई थी। लेकिन धन्य हो विजय कुँवर को एवं उनके नियम की दृढ़ता को, उन्होंने बड़े प्यार से विजया कुँवरी से कहा–

विजयकुँवर–भजन–

क्यों मदन दीप हो ऐसी बातां करती,
मैं कृष्ण पक्ष का त्याग लिया मुनिवर थी।

विजय कुँवर–(विजयाकुँवरी से) हे सौभाग्यकांक्षिणि एवं पुण्यवती! तुम्हें पाकर मैं धन्य हो गया, तेरी जैसी धर्म सङ्गिनी पाकर मैं धर्म-मार्ग में उत्कृष्ट प्रगति कर पाऊँगा, तुम धर्म की सुज्ञ जानकार हो। मैं तुमसे एक विनति करता हूँ–मैंने गुरुभगवन्त से कृष्ण पक्ष में ब्रह्मचर्य-पालन का नियम लिया है अभी कृष्ण पक्ष चल रहा है। आशा करता हूँ नियम-पालन में धर्मपत्नी बनकर तुम मेरी सहायिका बनोगी, जिससे मैं दृढ़ता से नियम का पालन कर सकूँ।

विजया कुँवरी–हे स्वामिन्! आपकी नियम के प्रति दृढ़ता और धर्म के प्रति श्रद्धा देखकर मैं नत मस्तक होकर प्रणाम करती हूँ। आप सहर्ष नियम का पालन करें।

कृष्ण पक्ष बीतने पर शुक्ल पक्ष के दिन आये– आज विजय कुँवर अपने नियम का पूर्ण प्रतिपालन कर विजया कुँवरी के पास शयनकक्ष में आये।

विजय कुँवर–प्रिये! आज मेरा नियम पूर्ण हुआ। अब हम पति-पत्नी की तरह सुख भोग कर जीवन का प्रारम्भ कर सकते हैं। विजय कुँवर बड़ी आशा और उत्साह से पत्नी से मिलने आये। तब विजया कुँवरी बोली–

भजन

यों सुनकर सुन्दर बोली नयना झरती।
मैं शुक्ल का त्याग लिया नहीं डरती।
करके बेन भाई ज्यों मित्र बातां इकतारी।।3।।

उस समय विजया कुँवरी ने उनके चरणों में गिर कर कहा–''नाथ! मैं आपसे एक भिक्षा माँगती हूँ–आप मेरे जीवन साथी हैं, मुझे विश्वास है कि आप मेरी माँग अवश्य पूर्ण करेंगे। इस भव में देह के साथीदार बने हैं और मोक्ष जाने की साधना करने में भी सच्चे साथी बने रहियेगा।''

विजय कुँवर–विजया! तुम्हारी जो इच्छा हो कहो–मैं अवश्य पूरी करूँगा।

विजया कुँवरी–स्वामिन्! मुझे दीक्षा लेने की भावना थी, परन्तु माता-पिता ने आज्ञा नहीं दी, अन्त में मैंने विचार किया कि जीवन की कुछ तो कमाई कर लूँ। तो मैंने शुक्ल पक्ष में ब्रह्मचर्य पालने की प्रतिज्ञा ली है।

विजय कुँवर–हे विजया! तुम पुण्यवती हो, तुम्हें धन्यवाद, तुम्हारी जैसी धर्मपत्नी पाकर मैं आज धन्य हो गया।

विजया कुँवरी–पति के मधुर शब्दों से विजया को अत्यन्त आनन्द हुआ। विजय कुँवर ने विजया की बात का अनुमोदन किया।

जिसकी दृष्टि ही अन्धकार का हरण करने वाली है उसे दीपक से कोई प्रयोजन नहीं होता। आत्मा स्वयं ही सुखरूप है, फिर उसके लिए विषय-भोग किस काम के, ऐसा ज्ञानीजन फरमाते हैं।

विजया कुँवरी ने पति से कहा–अहो! मैं कितनी भाग्यवती हूँ, ऐसे पति से परिणय करके जीवन भर ब्रह्मचर्य पालन का सुअवसर प्राप्त हो गया। स्वामिन्! प्रतिज्ञापालन में आपका पूर्ण सहयोग प्राप्त हो गया, किन्तु आप तो पुरुष हैं आप दूसरा विवाह कर लीजिये, आपको शुक्ल पक्ष की पूर्ण छूट है।

विजय कुँवर–अरे! तुम यह क्या कह रही हो, हम तो आज महान् भाग्यशाली बने हैं कि दोनों के मनोरथ पूर्ण हुए। जब माता-पिता इस बारे में जानेंगे, तब हम दीक्षा ले लेंगे।

अहो! कैसी पवित्र आत्माएँ!

बन्धुओं! यह कुटुम्ब कितना पवित्र होगा। पास में करोड़ों की लक्ष्मी होने पर भी उसमें कोई व्यसन, फैशन या दुराचार नहीं था। आज तो हम इसके विपरीत ही

देखते हैं, चारों तरफ कुव्यसनों की शिकार युवा पीढ़ी, फैशन परस्त युवतियाँ, काम-भोग के दलदल में फँसे दुराचारी लोग। अहा! सोचकर बड़ा ही खेद होता है कि क्या हम भगवान महावीर, मर्यादा पुरुषोत्तम राम की सन्तानें हैं, आज धर्म का बाना पहनकर अन्दर ही अन्दर कितने व्यभिचार पनप रहे हैं। युवा पीढ़ी धर्म से दूर होती जा रही है, ऐसे में जब हम इस प्रकार के कथानक सुनते हैं, पढ़ते हैं तो आश्चर्य ही अधिक होता है।

इस प्रकार विजय कुँवर और विजया कुँवरी ने सोच-विचारकर इस बात का निर्णय किया कि हम बहन-भाई की तरह रहेंगे। पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करेंगे।

भजन

श्री विमल केवली बखान इनका कीधा,
जिनदास सुश्रावक सुनकर आया सीधा।
कर भाव मुनि का दर्शन हिरदा भीजा,
अरू खूब हुआ मन के अमृत पीधा।
तब मात-पिता ने सुनी बात हुई जारी।।4।।

विवाह के उपरान्त कुछ समय बीता, किसी को उनके ब्रह्मचर्य की बात की कानोकान खबर भी न हुई। दोनों ने इसे पूर्ण रूप से गुप्त रखा।

एक बार विचरण करते हुए श्री विमल केवली कच्छ देश कंसबा नगरी पधारे। केवली त्रिलोकदर्शी होते ही हैं, सम्पूर्ण ज्ञान के धनी श्री विमलकेवली ने फरमाया।

श्री विमलकेवली-आपकी इस भव्य नगरी में ऐसी-ऐसी भव्य पवित्र आत्माएँ हैं जो विवाह के एकसूत्र में बँधने के उपरान्त भी एक शय्या पर शयन करते हुए पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन कर रहे हैं। जो ब्रह्मचर्य तप सभी प्रकार के तपों में दुर्लभ तप है।

सभी जनसमूह आश्चर्यचकित होकर बतियाने लगे-असम्भव कार्य, क्या ऐसा सम्भव हो सकता है, कौन हैं वे शूरवीर, जिन्होंने ऐसा दुर्लभतम कार्य करने के लिए मनोविजय को प्राप्त किया है।

श्री विमलकेवली-इसी नगर के विजय सेठ और विजया सेठानी हैं। इनमें एक के कृष्ण पक्ष के ब्रह्मचर्य के नियम थे, दूसरे के शुक्ल पक्ष के, दोनों ने नियम को दृढ़ता से निभाया है।

वहीं जिनदास सुश्रावक ने केवली भगवन्त के मुख से यह बात सुनी, उनका हृदय नियम पालन में दृढ़ ब्रह्मचारी दम्पत्ति के प्रति अहो भाव से भर गया। श्रद्धापूर्वक उन दोनों को नमन किया। जब माता-पिता ने भी यह बात सुनी तो आश्चर्य मिश्रित आनन्द से उनका हृदय गद्‌गद् हो गया।

भजन

यो सकल जगत् जाण्यो कुँवर कुँवरी को।
घर प्रच्छन्न पणे में शील पाल रजनी को।
जाने जगत सब फंद जान सब फीको।
लेकर के आज्ञा वेश लियो मुनि जी को।
जाने शुद्ध पाल के शील आतमा तारी।।5।।

इस तरह धीरे-धीरे खबर पूरे शहर में फैल गई, जिस दृढ़ता से घर में रहकर दोनों ने अपने नियम को निभाया और सिंह की भाँति संयम के दुष्कर मार्ग को सहर्ष वीरतापूर्वक अपनाया।

माता-पिता की आज्ञा प्राप्त कर घर छोड़कर अनगार बन गये, संयम को शान से निभाया। तीन योग अर्थात् मन-वचन-काया से जो संयम का दृढ़ता से पालन करता है वह कभी उन्मत्त भाव नहीं लाता, वह शान्त चित्त से अभय होकर आत्मा में विहार करता है, वही सच्चा निर्ग्रन्थ है। विजय सेठ और विजया सेठानी-अब निर्ग्रन्थ साधु-साध्वी बन गये।

देवानुप्रियों! विजय सेठ और विजया सेठानी का ब्रह्मचर्य के तेज के समक्ष सहस्र रश्मियों वाले सूर्य का तेज भी फीका पड़ जाता है। उन्होंने 'शील का शृङ्गार' सजाकर अपना जीवन सुशोभित और पवित्र बनाया।

इसी तरह सब जीवों को शीलसदाचार युक्त जीवन से स्वयं को शुद्ध और पवित्र बनाना चाहिए।

-115, कानोता बाग, चाट हाउस की गली,
नारायणसिंह रोड, जयपुर-302004 (राजस्थान)

ISSN 2249-2011

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

श्री गौतमचन्द जैन

विजय तुम्हें बुला रही-लेखिका-**नेहा चोरड़िया** सम्पादक-**डॉ. धर्मचन्द जैन। प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, सुबोध बॉयज सीनियर सैकण्डरी स्कूल के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 (राज.) फोन नं. 0141-2575997, 2. जोधपुर-0291-2624891, 3. अहमदाबाद 94293-03088, 4. बेंगलोर-98441-48943, 5. जोधपुर-94610-26279, 6. जलगाँव-94225-91423, **प्रथम संस्करण**-2022, **पृष्ठ**-82 + 11 + 3 = कुल 96, **मूल्य**-25/- रुपये।

ध्यान साधिका विदुषी लेखिका सुश्री नेहा चोरड़िया ने प्रस्तुत पुस्तक 'विजय तुम्हें बुला रही' उत्तराध्ययनसूत्र की एक गाथा को आधार बनाकर लिखी है। इस गाथा में ज्ञान-प्राप्ति में बाधक 5 कारणों का कथन किया गया है-1. अहंकार (थम्भा), 2. क्रोध, 3. प्रमाद, 4. रोग और 5. आलस्य। इन पाँच कारणों पर विजय प्राप्त करने पर ही हमें ज्ञान की प्राप्ति होती है। हमें यह अनुभव होता है कि सुख अथवा दु:ख का कारण अन्य व्यक्ति, वस्तु या परिस्थिति नहीं है, अपितु मैं स्वयं हूँ और मेरे द्वारा पूर्व में किये हुए कर्म हैं। संसार में परिभ्रमण का कारण मेरे स्वयं के कर्म हैं। अत: व्यक्ति को कृतज्ञता का गुण अपनाना चाहिये और कर्मों के फलस्वरूप प्राप्त सुख-दु:ख या परिस्थितियों को समभाव से सहन करना चाहिये। यही हमारी कर्मों पर विजय है, जो पुस्तक के नाम को सार्थक करती है।

पुस्तक में लेखिका ने सर्वप्रथम अपना लक्ष्य निर्धारित करने की सुन्दर प्रेरणा दी है। तत्पश्चात् अभिमान के स्वरूप का मनोवैज्ञानिक दृष्टि से वर्णन किया है। क्रोध का विशद विवेचन करते हुए उससे बचने के सुन्दर प्रायोगिक उपाय बतलाये हैं। परिस्थिति विज्ञान का विवेचन करते हुए बतलाया है कि कैसे हम परिस्थिति को दोष नहीं देकर उसका सदुपयोग कर सकते हैं। प्रमाद का वर्णन करते हुए उसकी परिभाषा को स्पष्ट किया है। रोग के कारण, प्रकार और निवारण के उपाय बताये हैं। आलस्य का विवेचन करते हुए उसको दूर करने के उपायों के साथ उत्साहवर्धन और सेवा का महत्त्व समझाया है तथा स्वयं की शक्तियों को पहचानने के लिए प्रेरित किया है।

वास्तव में प्रस्तुत लघु पुस्तिका सभी प्रबुद्धजनों के लिए पठनीय है और जीवन को सम्यग्दृष्टि एवं दिशा प्रदान करने वाली है। प्रत्येक अध्याय के अन्त में अभ्यास करने के लिए सूत्र भी दिये गये हैं, जिनको अपनाकर व्यक्ति प्रत्येक परिस्थिति में स्वस्थ, प्रसन्न एवं सुखी होकर रह सकता है और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

प्राकृत धम्मपद-डॉ. भागचन्द्र जैन 'भास्कर', **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-देवेन्द्रराज मेहता, संस्थापक एवं मुख्य संरक्षक, प्राकृत भारती अकादमी, 13 ए, गुरु नानक पथ, मालवीय नगर, जयपुर-302017 (राजस्थान), दूरभाष 0141-2524827, 2520230 Email : prabharati@gmail.com, ISBN No. 978-81-952891-2-7, **द्वितीय संस्करण**-2022, **पृष्ठ**-182 + 77 = कुल 259, **मूल्य**-400/- रुपये।

'धम्मपद' बौद्धधर्म की गीता है। यह संसार का सर्वाधिक लोकप्रिय ग्रन्थ है। भगवान बुद्ध द्वारा उपदिष्ट मूल ग्रन्थ पालि भाषा में संकलित है। बाद में इसके अनुवाद अन्य भाषाओं में भी होते रहे हैं। डॉ. भागचन्द्र जैन भास्कर द्वारा 'प्राकृत धम्मपद' का हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा में अनुवाद प्रस्तुत ग्रन्थ में किया गया है। धम्मपद में मानवीय जीवन के आध्यात्मिक विकास, व्यवहार, दर्शन, नीति और सिद्धान्तों का युक्ति सहित व्याख्यान है, साथ ही दृष्टान्तों तथा उपमाओं के माध्यम से जीवन-निर्माण के दिग्दर्शक सूत्र हैं। धम्मपद का शाब्दिक अर्थ है-धार्मिक वचनों का संग्रह। यह तथागत

बुद्ध के वचनों का एक ऐसा संग्रह है जिन पर चलने से व्यक्ति के जीवन का निर्माण होता है। धम्मपद में वर्णित सिद्धान्तों एवं जैनधर्म के आगम उत्तराध्ययनसूत्र में वर्णित उपदेशों में कई स्थानों पर समानता देखने को मिलती है।

लेखक ने 'प्राकृत धम्मपद' पुस्तक की विस्तृत उपस्थापना लिखकर प्राकृत भाषा एवं धम्मपद की विषय-वस्तु, रचनाकाल एवं अन्य काव्य-सम्बन्धी विशेषताओं के बारे में विस्तार से जानकारी दी है। प्राकृत धम्मपद के विभिन्न वर्गों का भी संक्षिप्त परिचय उपस्थापना में ही दे दिया गया है।

प्रारम्भ में मूल 'प्राकृत धम्मपद' 22 वर्गों में प्रस्तुत कर जो वर्ग पूर्ण या आंशिक रूप से विलुप्त हो गये हैं, उनका भी स्पष्ट उल्लेख किया गया है। तत्पश्चात् वर्ग के क्रमानुसार हिन्दी भाषा में सुन्दर, सटीक एवं शुद्ध अनुवाद दिया गया है। अनुवाद को स्पष्ट करने के लिए पर्यायवाची शब्द को कोष्ठक में दिया गया है। हिन्दी अनुवाद के बाद में सभी वर्गों का गाथा क्रम के अनुसार अंग्रेजी भाषा में अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। इससे यह पुस्तक हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं के जानकार व्यक्तियों के लिए उपयोगी हो गई है।

पुस्तक के अन्त में परिशिष्ट में पालि-प्राकृत-संस्कृत भाषा में धम्मपदों की गाथाओं का तुलनात्मक सादृश्य प्रस्तुत किया गया है, जो विज्ञजनों के लिए उपयोगी एवं ज्ञानवर्धक है। परिशिष्ट में ही गाथा संख्यागत शब्द सूची भी दी गई है। अन्त में सन्दर्भ ग्रन्थ सूची प्रस्तुत की गई है।

बौद्ध धर्म की शिक्षाओं का यह संकलन है, हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा प्रेमियों के लिए पठनीय एवं जीवन में अनुकरणीय है।

महावीर ज्ञान प्रकाश-संग्रहकर्ता-प्रकाशचन्द डोसी, **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-प्रकाशचन्द, आशीष, अमित डोसी, नं. 41, पेरुमाल कोइल गार्डन स्ट्रीट, चौथा माला, साहुकारपेट, चेन्नई-600001 (तमिलनाडु), फोन 9600120279, 9600064570, **प्रथम संस्करण**-मार्च 2021, **पृष्ठ**-108 + 8 + 4 = कुल 120, **मूल्य**-सामायिक-स्वाध्याय एवं आत्म-जागरण।

प्रस्तुत पुस्तक 'महावीर ज्ञान प्रकाश' में भगवान महावीर की अन्तिम वाणी उत्तराध्ययनसूत्र के 36 अध्ययनों का संक्षिप्त सार प्रस्तुत किया गया है। जो व्यक्ति सम्पूर्ण आगम उत्तराध्ययनसूत्र मूल एवं अर्थ का विस्तृत अध्ययन नहीं कर सकते हैं, उनके लिये यह सार रूप में संक्षिप्त अध्ययन पठनीय एवं उपयोगी है। पारिभाषिक शब्दों का भी अर्थ स्पष्ट करने के अतिरिक्त संलेखना का महत्त्व और अन्त में भगवान महावीर की संक्षिप्त जीवनी भी प्रस्तुत की गई है। प्रस्तुत पुस्तक उत्तराध्ययनसूत्र का ज्ञान प्रदान करने में सहायक एवं प्रेरक सिद्ध होगी।

प्राकृत बृहद् शब्दकोश (खण्ड-1)-सम्पादक-डॉ. राजेन्द्र रत्नेश, प्रो. दामोदर शास्त्री, प्रो. सुषमा सिंघवी, **प्रकाशक एवं प्राप्ति स्थल**-देवेन्द्रराज मेहता संस्थापक एवं मुख्य संरक्षक, प्राकृत भारती अकादमी, 13 ए, गुरु नानक पथ, मालवीय नगर, जयपुर-302017 (राजस्थान), दूरभाष 0141-2524827, 2520230 Email : prabharati@gmail.com, ISBN No. 978-81-952891-3-4, रमेशचन्द मुथा, अध्यक्ष-श्री जैन श्वेताम्बर नाकोड़ा पार्श्वनाथ तीर्थ, मेवानगर, स्टेशन-बालोतरा-344025, जिला-बाड़मेर (राज.), Email : nakodatirth@yahoo.com, **प्रथम संस्करण**-2021, **पृष्ठ**-408 + 15 = कुल 423, **मूल्य**-750/- रुपये।

'प्राकृत बृहद् शब्दकोश (खण्ड-1)' सम्पादक मण्डल द्वारा संकलित एक परिश्रम साध्य, सफल तथा श्लाघनीय प्रयास है। भगवान महावीर एवं बुद्ध के समय जनसाधारण की भाषा प्राकृत भाषा थी और उन्होंने जनसाधारण की भाषा में ही अपने उपदेश एवं शिक्षाएँ प्रदान की। प्राकृत भाषा के कई रूप उस समय अलग-

अलग क्षेत्रों में प्रचलित थे यथा-अर्धमागधी, पालि, शौरसेनी, मागधी, महाराष्ट्री, पैशाची, अपभ्रंश आदि। इनमें परस्पर थोड़ा-थोड़ा ही अन्तर है और सभी प्राकृत भाषाएँ कहलाती हैं। पूर्व में भी प्राकृत भाषा के शब्दकोश उपलब्ध हैं यथा-'पाइअ सद्द महण्णवो' आदि।

प्रस्तुत शब्दकोश एक वैशिष्ट्य के साथ प्रस्तुत किया गया है। इसमें सभी प्रकार की प्राकृत भाषाओं के शब्दों को संगृहीत किया गया है। शब्दकोश के प्रत्येक शब्द के बारे में संकेत प्रदर्शित कर बतलाया गया है कि यह कौन-सी प्राकृत भाषा का है? यथा-अर्धमागधी, पालि आदि। इसके पश्चात् उसके लिङ्ग, विशेषण आदि का उल्लेख किया गया है और संस्कृत रूप बतलाया गया है। अन्त में शब्द का हिन्दी भाषा में अर्थ दिया गया है। इस प्रकार से पाठक को प्राकृत शब्द के अर्थ के साथ-साथ संस्कृत शब्द का भी ज्ञान हो जाता है और उसके ज्ञान में परिपक्वता आ जाती है। वह शब्द के व्युत्पत्तिजनक वास्तविक अर्थ को हृदयंगम कर लेता है।

शब्दकोश में सम्मिलित शब्दों के अर्थ को भलीभाँति जानने के लिए प्रारम्भ में संकेत-सूची दी गई है, जो उपयोगी है। शब्दकोश का यह प्रथम खण्ड है, जो कि 'अ' अक्षर से प्रारम्भ होने वाले शब्दों से सम्पृक्त है। 'प्राकृत बृहद् शब्दकोश' के निर्माण की एक बृहद् योजना है जो कि अत्यधिक श्रमसाध्य एवं समयापेक्षित है। परन्तु यह शब्दकोश प्राकृत भाषा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए अत्युपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण है। यह शब्दकोश सामान्य अध्येताओं के साथ-साथ शोधार्थियों एवं विद्वज्जनों के लिए भी लाभदायक है। शब्दकोश के अन्त में सन्दर्भ-ग्रन्थों की सूची दी गई है। पुस्तक के पृष्ठ, मुद्रण तथा जिल्द भी सुन्दर, आकर्षक एवं स्थायी है। यह पुस्तक सभी प्राकृत भाषाओं के जिज्ञासु पाठकों के लिए अतीव उपयोगी सिद्ध होगी।

आधुनिक रिश्ते-नाते

संकलनकर्त्ता श्री संजय महनोत

सुत से जननी और पिता के, पावन रिश्ते टूट रहे हैं।
'स्व' की खातिर सम्बन्धों से, त्याग भाव सब छूट रहे हैं।।

धन के लिए स्वयं भ्राता ही, भ्राता के वैरी बन जाते।
शोणित बहा सगे भ्राता का, उर में किञ्चित् नहीं लजाते।।

वधू, भगिनी, पुत्री का पावन, रिश्ता भी हो रहा कलंकित।
मानव की जीवनशैली से, नैतिकता हो रही सशंकित।।

पत्नी निज कर्त्तव्य भूलकर लागडाँट पति से करती है।
मर्यादा को त्याग अहर्निश, तुष्टि अहं से ही भरती है।।

अनुबन्धों पर है आधारित, यहाँ आज सब रिश्ते-नाते।
हम का भाव त्यागकर निशदिन, 'मैं' का मन्त्र ही दोहराते।।

नर-नारी की लगालगी ने, किया शान्ति का चीर-हरण है।
कलह अशान्ति हुई घर-घर में, संस्कारों का तीव्र क्षरण है।।

-ए-52, विद्यालय पथ, बजाज नगर, जयपुर-302015 (राज.)

क्षण-क्षण होता क्षीण.....

श्री शिखरचन्द छाजेड़

क्षण-क्षण होता क्षीण,
किसी भी क्षण होगा-
सर्वथा क्षीण....सर्वथा क्षीण
ऐसा यह-आयुष्य कर्म, समझ लूँ मर्म
जब तलक यह शेष, करूँ प्रयत्न विशेष
बन अप्रमत्त करूँ, सर्व कर्म सर्वथा क्षीण
बनूँ मोक्षमार्ग में उत्कृष्ट प्रवीण

गुरु हस्ती फरमान सामायिक-स्वाध्याय महान्
सन्देश यह-लूँ आचरण में उतार

सम्भव तभी-आत्मोद्धार सर्वांगीण
क्षण-क्षण होता क्षीण,
किसी भी क्षण होगा-
सर्वथा क्षीण....सर्वथा क्षीण.

-करही (म.प्र.)

ISSN 2249-2011

समाचार विविधा

पीपाड़ शहर की धर्मधरा पर पूज्य आचार्यप्रवर की सन्निधि में तप-त्याग, ज्ञान-ध्यान, साधना-आराधना का निरन्तर ठाट

स्थानकवासी परम्परा में रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर, आगमज्ञ, प्रवचन-प्रभाकर, व्यसन-मुक्ति के प्रबल प्रेरक, सामायिक-शीलव्रत के सम्प्रेरक, जिनशासन गौरव **आचार्यप्रवर पूज्य गुरुदेव श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी परम श्रद्धेय भावी आचार्य श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा-9 एवं **विदुषी महासती श्री सुशीलाकँवरजी म.सा.** आदि ठाणा-7 सुखे समाधे पीपाड़ में विराजित हैं।

श्रद्धेय श्री विनम्रमुनिजी म.सा. आदि ठाणा-2 एवं व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा-3 आचार्यप्रवर की सन्निधि में पधारे हैं। सन्तों की तप-आराधना में श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा. ने आठ की तपस्या 11 फरवरी, 2022 को पूर्ण की।

परम पूज्य आचार्य भगवन्त अपने स्वास्थ्य के कारण पीपाड़सिटी में विराजमान हैं। पूज्य गुरुदेव के पावन अतिशय से पीपाड़सिटी में नित्य नये कीर्तिमान स्थापित हो रहे हैं तथा पीपाड़सिटी का इतिहास नित्य समृद्ध हो रहा है। पुण्यधरा पीपाड़शहर में 9 दिसम्बर, 2021 को 13 मुमुक्षुओं की जैन भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई, अभी 14 फरवरी, 2022 को आचार्य भगवन्त ने अपनी दूरदर्शिता एवं श्रावक के द्वितीय एवं तृतीय मनोरथ में सहयोग की भावना से वयोवृद्ध श्रावक श्री मोतीलालजी कटारिया जो पिछले काफी दिनों से अवस्थाजन्य अशक्यता में चल रहे थे। उनकी भावना को ध्यान में रखते हुए परिवारजनों एवं संघ के भावनात्मक सहयोग और सहमति से सजगता में दोपहर लगभग 1.00 बजे के पूर्व प्रव्रज्या प्रदान की तथा आजीवन तिविहार संथारे के प्रत्याख्यान भी कराये। 15 फरवरी को सायं 6.15 बजे चौविहार संथारे के प्रत्याख्यान मुनिश्री मोतीलालजी को सजगता में कराए गए तथा लगभग सायं 6.40 को विशुद्ध संयम की पालना करते हुए महाप्रयाण को प्राप्त हुए। 4-4 लोगस्स का ध्यान चतुर्विध संघ द्वारा किया गया। 16 फरवरी, 2022 को प्रवचन नहीं हुआ। 16 फरवरी को प्रातःकाल से अन्तिम दर्शनार्थ श्रद्धालुओं का क्रम 9.00 बजे सुबह तक बना रहा। उसके पश्चात् नवदीक्षित श्रद्धेय श्री मोतीमुनिजी म.सा. के पार्थिव शरीर की अन्त्येष्टि हेतु महाप्रयाण यात्रा 9.00 बजे पश्चात् प्रारम्भ हुई एवं प्रातः 10.00 बजे श्मशानघाट पहुँची, विधिवत् राष्ट्रीय अध्यक्ष, महामन्त्री और स्थानीय क्षेत्रीय पदाधिकारियों, श्रावकों एवं परिवारजनों ने मुखाग्नि अर्पित की तथा दाहसंस्कार पूर्ण होने पर सभी ने आचार्य भगवन्त की सेवा में उपस्थित होकर सामूहिक मंगल पाठ श्रवण किया। महाप्रयाण यात्रा में शामिल ओसवाल, पोरवाल, पल्लीवाल आदि सुदूरवर्ती-निकटवर्ती ग्राम-नगर क्षेत्रों के श्रद्धालुओं ने सहभागिता की। 17 फरवरी को श्रद्धेय श्री मोतीमुनिजी म.सा. का गुणानुवाद दिवस मनाया गया, जिसमें भावी आचार्यश्री, सन्त-सतियों एवं श्रावकों ने मुनिश्री का गुणानुवाद किया।

फरवरी माह में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, श्राविका मण्डल एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के नवमनोनीत अध्यक्ष अपनी-अपनी कार्यकारिणी सहित गुरुवन्दन एवं मार्गदर्शन हेतु उपस्थित हुए एवं बाड़मेर, नदबई, हुबली, मुम्बई, चेन्नई, जोधपुर, निम्बोल, कोलाना, भीलवाड़ा, बेंगलोर, निमाज, बजरिया-सवाईमाधोपुर, पाली, पूना, कोसाना, अलवर, आदि ग्राम-नगर से चातुर्मास की भावभरी विनति लेकर श्रावक श्रीसंघ के साथ पधारे।

अलीगढ़-टोंक से वीरपिता श्री महेन्द्रजी जैन पूरे परिवार के साथ गुरुचरणों में अपने लघुभ्राता श्री नरेन्द्रजी (नवनीतजी) जैन (नवदीक्षित महासती श्री अदितिप्रभाजी म.सा. के सांसारिक चाचाजी) के आकस्मिक निधन पर 16 फरवरी को मंगलपाठ श्रवणार्थ उपस्थित हुए।

श्रद्धेय श्री मोतीमुनिजी म.सा. के समाधिमरण पर गुणानुवाद

श्रद्धेय श्री मोतीमुनिजी म.सा. की गुणानुवाद सभा में **भावी आचार्यश्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** ने फरमाया कि दूध पौष्टिक होता है, सुपाच्य होता है, स्वास्थ्यवर्धक होता है, पर दूध में मिश्री मिल जाए, केसर और इलायची का संयोग हो जाए तो दूध का महत्त्व बढ़ जाता है। ऐसे ही संयम श्रेष्ठ है, भवसागर से तिराने वाला है, जन्म-मरण से छुड़ाने वाला है और उस संयम के साथ में अगर संथारे का योग मिल जाए तो उसका महत्त्व बढ़ जाता है। भाग्यशाली थे मोतीलालजी, जो उन्होंने हीरे के समान गुरु हीरा के सान्निध्य में संयम लिया। आप 25 वर्ष को कहते हैं सिल्वर जुबली, 50 को कहते हैं गोल्डन जुबली और 75 को कहते हैं प्लेटिनम जुबली, वैसे ही मोतीलालजी ने गुरु हीरा के सान्निध्य में 75 घड़ी का पिछली अवस्था में संयम और संथारे की प्लेटिनम साधना कर जिनशासन और रत्नसंघ में नया इतिहास रच दिया है।

सर्वप्रथम तो संयम आना ही कठिन है, उसके पश्चात् हर संयमी को संथारा आना उससे भी कठिन है, यह विचार नहीं करें कि एक-दो दिन से क्या हो जाएगा? महाराज साहब को तो लोभ है, लेकिन ऐसा कदापि नहीं है। पुराने सन्त कहते थे-

एक घड़ी का बरसना, अरहट बारह मास।
एक घड़ी साधुपना, करोड़ बरस घर वास।।

अर्थात् अरहट से 12 महीने तक पानी निकालना भी एक घड़ी के बादल बरसने की बराबरी नहीं कर सकता, उसी प्रकार करोड़ वर्ष के श्रावकपने से एक घड़ी का संयमपना बेहतर है। किन्तु यहाँ तो 75 घड़ी का संयम और उसके साथ में संथारा आना तो सोने पर सुहागा है। मैंने तो ज़िन्दगी में पहली बार देखा है उसी क्षण संयम और उसी के साथ में संथारा। ऐसा काम तो शूरवीरों का काम है। कितनी सजगता! गर्व होता है ऐसा संयम देखकर।

मरण से 15-20 मिनट पहले इनको सूर्योदय तक का चौविहार संथारा करवाया गया तो गुरुदेव ने कह दिया- ''आप तो इनको जीवनभर का चौविहार संथारा करा दो'', 6.15 बजे चौविहार संथारा करवाया। पहले दिन तिविहार संथारा था, 2 दिन में उन्होंने बहुत कम पानी लिया, उन्होंने सेवा का मौका दिया, हम तो धन्य अनुभव करते हैं। सायंकालीन प्रतिलेखन के समय गुरुदेव पधारे। उनका स्थान परिवर्तन किया था। गुरुदेव सामने थे, गुरुदेव मोती को और मोती गुरुदेव को देख रहे थे, अन्तिम पाथेय देकर-समाधि भाव के साथ मांगलिक फरमाकर गुरुदेव अन्दर कक्ष में पधार गए। उसके पश्चात् उन्हें कल्याणमन्दिर स्तोत्र सुनाया गया, सुनते हुए भी सुनाने वालों के साथ आँखों से देख रहे थे। तत्पश्चात् प्रतिक्रमण करवाते-करवाते मोतीमुनिजी की श्वास की गति नज़र नहीं आई, आवाज़ कम-सी हुई और पास में बैठने वाले सन्तों ने स्थिति को भाँपा। पहले श्री योगेशमुनिजी हाथ भी लगाते तो पूरे शरीर में स्पन्दन होता था, पर इतनी वेदना होते हुए भी पूरी सजगता थी। न हड़का, न धड़का, न खाँसी, न छींक।

गुरुदेव की अनन्त कृपा रही उन पर और उनकी अपनी पुण्यवानी भी थी। भाग्यशाली को ही ऐसा संयोग मिलता है। गुरुदेव तो सभी के होते हैं, सन्त सभी के होते हैं, आप सभी अपने आपको साधना में जोड़ने का लक्ष्य रखें। गुरुदेव तो इतने उदार हैं कि किसी सीमा में बन्धे नहीं हैं, पर मर्यादा से जरूर बन्धे हैं।

गुरुदेव की कृपा सभी पर है। कोई भी साधना करे मोतीलालजी तो क्या, आपको भी मना नहीं है। उनकी

प्रारम्भ में भी धर्म आराधना रही थी और अन्तिम समय में जैसे-जैसे आगे बढ़े, परिवार वालों का भी सहयोग रहा। सच्चे श्रावक की यही पहचान है। शरीर की सेवा तो कितनी ही करो, लेकिन धर्माराधना में सहयोग देना सच्ची सेवा है। चन्दाबाईजी स्वयं ज्ञानवान हैं, रेखा बहन, दामाद श्री रतनलालजी, दोनों दोहित्र आदि सम्पूर्ण परिवार ने अच्छा सहयोग दिया। पूरे परिवार का गुरुदेव के प्रति अच्छा समर्पण है, श्री रतनलालजी ने तो आदर्श प्रस्तुत किया है। वैसे तो चातुर्मास में इनको प्रेरणा दी हुई थी, लेकिन कल अपने ससुरजी की पुण्यस्मृति में उन्होंने शील की पगड़ी पहनी है और उन्हें सच्ची श्रद्धाञ्जलि अर्पित की है। गाँधी परिवार से जुड़े लगभग सभी सदस्य बोलते बहुत कम हैं, पर इस परिवार का क्या गुणगान करें, यह परिचय को मोहताज नहीं है। पीपाड़ संघ ने भी साधना में पूरा सहयोग दिया है।

हमारे भी मन में ऐसी भावना आए कि हमारी भी मृत्यु महोत्सव बने, जिस मृत्यु से लोग डरते हैं उस समय हमारे भीतर आनन्द का अनुभव होना चाहिए, जिस मरण से जग डरे मोहे परमानन्द, कद मरसुं कद भेंटसु, पूरण परमानन्द। सच्चा साधक मृत्यु से डरता नहीं है, उसकी भावना रहती है कि कब मृत्यु का समय आए और समाधि मरण में जाएं। हम भी ऐसी भावना रखें कि हमारा भी अन्त समय गुरु चरणों में और समाधि के साथ हो।

श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. ने ''ममता दिन-दिन होत सवाई'' की पंक्तियों से अपनी बात प्रारम्भ करते हुए फरमाया-मोतीमुनिजी ने अपना समग्र जीवन धर्म में जीया, पाप से बचने की ही चेष्टा रही और यही उनके धर्ममय जीवन का आधार बना, किया हुआ धर्म कभी व्यर्थ नहीं जाता और जीवन भर के सञ्चित धर्म निधि की ही पुण्यवानी रही कि उन्होंने संयम और संथारे की साधना को पाया। जीवन में स्वस्थता रहते स्थानक नहीं छोड़ा, गुरु-भक्ति ऐसी कि गुरुदर्शन का एक मौका नहीं चूकते, बात नहीं करते, पर दर्शन मात्र से मन को पूरा भर लेते। उनके संयम और संथारा दोनों ने ही इतिहास रच दिया। रत्नसंघ के इतिहास में दीक्षित साला-बहनोई की प्रथम जोड़ी बन गई तो संथारा लेने से गुरु हीरा के सान्निध्य में दीक्षित हुए सन्तों में ये प्रथम सन्त बने जिन्हें संथारा आया। आप और हम भी अपनी मृत्यु को इस तरह महोत्सव बनाएँ और लक्ष्य बनाएँ कि अब जीवन में स्वाद की आसक्ति घटे और 'मुझे कुछ नहीं चाहिए' की उक्ति जीवन में रमे।

श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा. ने फरमाया-

शरीर साथ दे तो आहार का अधिकार,
शरीर साथ न दे तो संथारे में सार।

शरीर ज्ञान-दर्शन-तप में सहायक हो तो पोषण करें, किन्तु जब लगे कि मृत्यु का समय निकट है और शरीर साथ न दे तो साधक शरीर को जीर्ण-शीर्ण वस्त्र मानकर परिवर्तन हेतु तैयार रहे। मौत को टाल तो नहीं सकते, पर सुधार सकते हैं-यह इस भव में ही सम्भव है।

कुछ कर गुजरने के लिए कल्पकाल नहीं, अल्पकाल ही बहुत है जैसा कि मोतीलालजी से मोतीमुनि बनकर, पञ्च महाव्रत धारण कर, यावज्जीवन सावद्य योगों का त्याग कर, संयम के साथ संथारा का बाना पहना तथा मानव-जन्म और जीवन सफल किया। ऐसे साधक विरले ही होते हैं जो तीनों मनोरथों को पूर्ण करते हैं। परम पूज्य हीरागणि का तो अतिशय रहा ही, परन्तु शुरु से अन्त तक भावी आचार्यश्री का भी पाथेय रहा, प्रेरणा रही और घर वालों का भी सहयोग रहा।

उपाध्यायप्रवर कहते थे कि तप, संयम, ज्ञान, संथारा आदि में दो बातें जरूरी हैं-घर वालों का सहयोग और सन्त सन्निधि का संयोग-ये हैं तो इस भव में सब सम्भव है। इस मृत्यु महोत्सव को देखकर यह प्रण लें कि हम योगी

बनें या नहीं बनें, सहयोगी और उपयोगी जरूर बनें। अरिहन्त बनें या नहीं बनें, कर्मों के अन्त की कला जरूर सीखें। आचार्य बनें या नहीं बनें, आर्य जरूर बनें। आन्तरिक रुचि जगाकर जीवन को सफल बनाएँ; साधु नहीं तो सीधे-सादे जरूर बनें, मौन रहकर समाधि में रहें। श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. ने जो अठारह पापों की आलोचना सुन्दर रूप में करवायी, पाथेय दिया, साहस दिया, सभी के लिए अनुकरणीय है। जब आँख खुले तो सन्त के दर्शन हों और बन्द हों तो अरिहन्त का स्मरण हो। ऐसा सुन्दर सहयोग कि भावी आचार्यश्री द्वारा जो चौविहार संथारा करवा कर कल्याणमन्दिर स्तोत्र सुनाया गया। वह अन्तिम क्षणों में कल्याण का कारण बना, फिर चउवीसत्थव करवाया, जिससे 80 की उम्र में चौरासी का चक्कर कट गया-ऐसा लगता है। वे देह से हल्के थे, कर्मों से हल्के होकर गए। तन-मन भावों से हल्के होकर जाएँ तो जीव अच्छी गति में जाता है, ऐसा सुना है। जन्म लेने वाले की मृत्यु निश्चित है, इसलिए व्यक्ति अभी से अन्तिम पड़ाव को सुधारने के लिए क़दम बढ़ाये।

गुणानुवाद सभा में **विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा.** ने फरमाया- संसार के जन्म-मरण का महत्त्व नहीं है, संयम में जन्म और संयम में मरण का महत्त्व है। जैसा श्रद्धेय श्री मोतीमुनिजी को सहयोग प्राप्त हुआ, सन्निधि प्राप्त हुई, यह उनकी पुण्यशालिता के लक्षण हैं। तुरन्त दीक्षा और तुरन्त ही संथारा मिलने से उनके सभी मनोरथ पूर्ण हो गए। अन्तिम समय में आचार्यप्रवर ने, भावी आचार्यश्री ने जो पाथेय दिया, सभी सन्तों ने जो सेवा की यह सब अविस्मरणीय रहेगा। उन्हें निरन्तर आलोचना करवाई, संथारे में पूर्ण रूप से जागृत रहे, शरीर में संवेदना बनी रही, चेहरे के भाव सुनते समय एकरस होते रहे, ऐसा नज़ारा देखते ही बन रहा था। धन्य हैं इनके वीर परिजन- वीराङ्गना पत्नी, वीर पुत्री एवं सभी जन जिन्होंने उचित समय पर उचित निर्णय लिया। आपकी दीक्षा 14 फरवरी को हुई। आप 14 गुणस्थान को पार कर शीघ्रातिशीघ्र मोक्ष महल में विराजें, ऐसी भावना भाते हैं तथा साथ ही यह भावना रखते हैं कि हमें भी अन्तिम समय में पुण्योदय से संथारा और सुयोग मिले और हम भी संसार-सागर से तिर जाएँ।

गुणानुवाद सभा में **महासती श्री कोमलश्री जी म.सा.** ने फरमाया-जन्म महोत्सव सभी मनाते हैं, परन्तु विरले ही होते हैं जो मृत्यु को महोत्सव बनाते हैं। देह के साथ देहवृत्ति से मुक्त होने की संथारा-साधना उसी को प्राप्त होती है जिसकी भावना उत्तम और स्वभाव सरल होता है। इनकम टैक्स से वही घबराता है जिसका हिसाब-किताब सही नहीं होता और मृत्यु से वही घबराता है जिसके जीवन का आचरण सही नहीं होता। इसलिए जिन्होंने जीवन भर धर्म से अपनी आत्मा का सिंचन किया है वे मृत्यु से भी अभय हो जाते हैं। व्यक्ति प्रत्येक त्यौहार की तैयारी करता है तो उसे मृत्यु का महोत्सव बनाने की तैयारी कब से करनी है ? यह विचार अवश्य कर लेना चाहिए। मेरी स्वयं की दीक्षा के पश्चात् श्री मोतीमुनिजी (मोतीलालजी) को पीपाड़ शहर के पहले ही चातुर्मास में धर्मसाधना और धर्म-चर्चा करते हुए देखा तो जाना कि वे गहरी रुचि रखने वाले स्वाध्यायशील और सजग साधक आत्मा थे। उन सरीखे उत्तम गुण हममें भी आएँ।

सुश्रावकों में **श्री धनपतराजजी मेहता** ने अपने उद्बोधन में कहा कि-उनकी धर्म साधना की, उनके निष्ठावान आचरण की ही यह प्रतिष्ठा रही कि उनको तुरन्त दीक्षा प्रदान कर दी गई। हर किसी को ऐसे ही दीक्षा प्रदान नहीं की जाती है, उनकी इतने वर्षों में की गई धर्माराधना ने उनके प्रति इस प्रकार के विश्वास को बढ़ाया है। पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्रजी महाराज साहब ने अपने संसारपक्ष के बहनोई को दीक्षा देकर और अन्तिम समय में संथारा करवाकर उनको अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचने में सहयोग प्रदान कर यशस्वी कार्य किया है। श्री ललितजी कोठारी ने भी मुनि श्री के स्वाभाविक गुणों की प्रशंसा करते हुए अपनी भावाभिव्यक्ति प्रस्तुत की।

पीपाड़ शहर के चारों संघ के मन्त्री श्री सुमतिचन्दजी मेहता ने सभा का सफल सञ्चालन करते हुए अन्त में अपनी ओर से तथा संघ की ओर से प्रेरक उद्‌बोधन देते हुए विशेष रूप से वीर-परिवारजनों को श्रद्धेय श्री मोतीमुनिजी के जीवन को व्रत-नियम, त्यागमार्ग पर और अधिक आगे बढ़ने हेतु अपने चिर-परिचित अंदाज में प्रभावी प्रेरणा प्रस्तुत की।

जयपुर में सन्त-सतियों का विचरण

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती **मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.सा.** आदि ठाणा का जयपुर प्रवास चिरस्मरणीय बनता जा रहा है, क्योंकि कई नये लोग भी जुड़े हैं तो साथ ही प्रवचन-प्रभावना, दर्शन-वन्दन का सिलसिला जागृति का कारण बनता जा रहा है। जयपुर शहर के लालभवन में गुरु हस्ती की दीक्षातिथि के दिन प्रवचन का नजारा अद्‌भुत था, क्योंकि उस दिन स्थानक प्राङ्गण चतुर्विध संघ से सुसज्जित था। सभी लोग सामायिक गणवेश में, हर कोई आराध्य गुरुदेव से जुड़े प्रेरक जीवन प्रसङ्ग को सुनने को उत्सुक था और उस दिन श्रद्धेय श्री दर्शनमुनिजी म.सा. ने जिस अन्दाज में गुरुदेव के गुणगान किये, सभी लोग भाव-विभोर हो उठे। साथ ही श्रद्धेय श्री अविनाशमुनिजी म.सा. तथा महासती श्री विमलेशप्रभाजी म.सा. की सहवर्ती महासती श्री यशप्रभाजी म.सा. ने कई सारे अनछुए प्रसङ्गों का उल्लेख कर आम जनता को धर्म प्रेरणा दी।

श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. ने गुरुदेव के प्रति अपने अहोभाव प्रकट करते हुए हर व्यक्ति को यही प्रेरणा की कि हमें केवल गुणगान ही नहीं करना, गुणवान भी बनना है। केवल उन पर गर्व करके ही नहीं रहें, बल्कि हम अपने जीवन को इतना अच्छा, सच्चा बनाएँ कि हमारा जीवन भी दूसरों के लिए गर्व का कारण बन सके और केवल गुरु की विशेषताओं का जिक्र ही नहीं करें, हम भी गुरु शिक्षा को धारण कर अपने को विशिष्ट बनाएँ। इस दिन लगभग 150 एकाशन और 75 पौषध-संवर हुए।

शहर में कतिपय दिन रुककर यहाँ से सन्त जवाहरनगर पधारे जहाँ सन्तों के विराजने से प्रवचन की उपस्थिति को देखकर हर कोई चकित था। आसपास के लोग सुपात्रदान, वाचनी, जिज्ञासा-समाधान पाने का कोई भी अवसर छोड़ना नहीं चाहते थे। यहाँ एक बहन के दीर्घकालीन तपस्या का क्रम चल रहा था, मुनिश्री ने उस बहन को 50 की तपस्या के प्रत्याख्यान कराए। बहन की भावना, संकल्प और भी ऊँचा है। यहाँ सन्त कुछ दिन विराजकर सेठी कॉलोनी होते हुए आदर्शनगर पधारे। सन्तों के स्थानक पदार्पण की बात सुनते ही आसपास के उपनगरों के लोग जिस ढँग से प्रवचन में उपस्थित हुए, दृश्य देखकर लोगों की प्रतिक्रिया थी कि जैसे पर्युषण पर्व ही चल रहा है। पिछले दो-तीन साल से कोरोना के चलते स्थानक में धार्मिक गतिविधियाँ मन्द-सी थी, मगर सन्तों के विराजने से यहाँ इस स्थानक से जुड़े पंजाबी जैन भाइयों के प्रवचन और दिनभर लोगों की अपूर्व उपस्थिति को देखकर चेहरे खिल गए। सन्तों का यहाँ लगभग आठ दिन रुकना हुआ। रविवार के दिन स्थानक से जुड़े लोगों को मुनिश्री ने प्रभावी प्रेरणा देकर हर रविवार सामूहिक सामायिक करने का संकल्प कराया। आदर्शनगर में श्री लाभचन्दजी लोढ़ा, सुरेन्द्रजी मेहता ने सपत्नीक शीलव्रत तथा आनन्दपुरी में श्री उत्तमजी डागा ने सदार आजीवन शीलव्रत स्वीकार किया।

17 फरवरी को श्रद्धेय गौतममुनिजी म.सा. के सान्निध्य में श्रद्धेय श्री मोतीमुनिजी द्वारा दूसरे-तीसरे मनोरथ को पूर्ण कर अपने भव कम करने की इच्छा पूर्ण करने की सफलता पर तथा आचार्य भगवन्त की असीम कृपा के सहायक बनने पर गुणानुवाद कर भावाञ्जलि दी गई। श्री प्रकाशजी जैन ने भी श्रद्धेय श्री मोतीमुनिजी म.सा. के संयम और मनोबल की प्रशंसा की। अन्त में 4-4 लोगस्स का कायोत्सर्ग किया गया।

यहाँ से विहार कर आनन्दपुरी में तीन प्रवचन कर मोतीडूँगरी सर्किल हीरा-पन्ना अपार्टमेण्ट में प्रवचन किया। अष्टमी होने के कारण प्रवचन श्रवणार्थ लोगों की 300-350 के करीब उपस्थिति रही। मुनिश्री ने अपने प्रवचन में आत्मरक्षा के चार सूत्र दिये। अरिहन्त का अनुरागी, कषाय का त्यागी, विषय का विरागी और लक्ष्य वीतरागी रखने

वाला आत्मा को निर्दोष रखने और बनाने में अवश्य सफल होता है। अभी सन्त तिलकनगर में विराज रहे हैं जहाँ लोग सान्निध्य का धर्माराधना के साथ लाभ ले रहे हैं।

सेवाभावी श्रद्धेय श्री नन्दीषेणमुनिजी म.सा. आदि ठाणा-3 दूदू से विहार कर अभी पाँच्यावाला, जयपुर स्थित जिनवाणी भवन में सुखसाता पूर्वक विराज रहे हैं।

साध्वीप्रमुखा महासती श्री तेजकँवरजी म.सा. आदि ठाणा महारानी फार्म से विहार कर गौरी विहार, न्यू सांगानेर रोड़ स्थित पोरवाल भवन में सुखसाता पूर्वक विराज रहे हैं। सभी स्थानों पर श्रद्धालुओं का दर्शन-वन्दन, ज्ञानाराधना आदि का क्रम निरन्तर गतिमान है। *-सुरेशचन्द कोठारी, मन्त्री*

सेलम-पूज्य आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. एवं भावी आचार्य श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवतीजी म.सा. आदि ठाणा ने 2021 के सेलम (तमिलनाडु) के संगठित ऐतिहासिक चातुर्मास का कीर्तिमान स्थापित किया। महासतीजी ने सेलम में धर्मध्यान और तप-त्याग की गंगा बहाई। चातुर्मास में निरन्तर धर्मध्यान का ठाट बना रहा। सेलम से विहार कर महासतीजी मण्डल ईरोड़ पधारे तभी से प्रवचन आदि धर्म-ध्यान का ठाट लगा है। 26 दिसम्बर से 30 दिसम्बर तक 5 दिवसीय बालक-बालिकाओं का शिविर हुआ, जिसमें 87 बालक-बालिकाओं ने भाग लिया। शिविर में ईरोड़ संघ का उत्साह और सेवा सराहनीय रही।

ज्ञानगच्छ के श्री नवरत्नमुनिजी म.सा., नरेशमुनिजी म.सा. आदि ठाणा और रत्नसंघीय महासतीजी श्री निःशल्यवतीजी म.सा. के सम्मिलित प्रवचन 26-29 दिसम्बर एवं 1-2 जनवरी को चतुर्विध संघ के साथ स्नेह और सौहार्द के वातावरण में हुए। जिससे ईरोड़ के इतिहास में जिनशासन की प्रभावना में चार चाँद लगे। पूरे ईरोड़ संघ ने आचार्य भगवन्त के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की।

महासतीजी म.सा. की सेवा में त्रिपुर, कोयम्बटूर, मेट्टुपालयम तथा ऊटी की विनति बार-बार आ रही है। ईरोड़ संघ बराबर लाभ ले रहा है। सेलम संघ भी महासतीजी म.सा. की सेवा में बराबर उपस्थित होता रहता है। कई गाँवों से दर्शनार्थियों का आवागमन चल रहा है। रायचूर, पाली, चेन्नई, त्रिपुर, त्रिर्ची, तिरुपतुर, शिमोगा, बालोतरा, ब्यावर, सेलम आदि कई क्षेत्रों के दर्शनार्थियों ने सेवा का लाभ लिया। ईरोड़ संघ ने अच्छी सेवा की।

यहाँ पर महासती मण्डल ने 67 बोल, लघुदण्डक, विरह द्वार, ज्ञानलब्धि, आठ द्रव्येन्द्रिय का थोकड़ा, गति-आगति, दिशाणुवाय, अबाधाकाल, आराधनापद आदि कई छोटे-बड़े थोकड़ों का अध्ययन कराया। बारह व्रत की जानकारी दी गई। आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमलजी म.सा. के जन्म-दिवस के उपलक्ष्य में 16 जनवरी, 2022 को सामूहिक तीन-तीन सामायिक, उपवास, एकाशन की आराधना एवं भाषण-भजन प्रतियोगिता एवं गुरु गुणगान किया गया।

चेन्नई-श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, तमिलनाडु के तत्त्वावधान में स्वाध्याय भवन, साहूकारपेट, चेन्नई में 5 फरवरी, 2022 को आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा के 152वें दीक्षा दिवस को सामायिक साधना दिवस के रूप में मनाया गया। स्वाध्यायी श्री गौतमचन्दजी मुणोत ने आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा के साधनामय जीवन-चरित्र पर भाव रखते हुए तेरह वर्ष की लघु उम्र में चारित्र अङ्गीकार करने की घटना का उल्लेख किया तथा प्रचार-प्रसार सचिव आर. नरेन्द्र कांकरिया ने आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी के बाल्यकाल, दृढ़ वैराग्य, अडिग संकल्प, सेवा आदि गुणों पर विवेचन करते हुए उनकी भागवती दीक्षा तक के साधना काल पर प्रकाश डाला।

7 फरवरी, 2022 को रत्नसंघ के चतुर्थ पट्टधर परम प्रतापी, बाल ब्रह्मचारी आचार्य श्री कजोड़ीमलजी म.सा. के 192वें दीक्षा-दिवस को संयम दिवस के रूप में मनाया गया। स्वाध्यायी श्री गौतमचन्दजी मुणोत ने आचार्य श्री

कजोड़ीमलजी म.सा. के जीवन-चरित्र पर परिचय देते हुए गुणगान किए। प्रचार-प्रसार सचिव आर. नरेन्द्र कांकरिया ने आचार्यश्री के बाल्यकाल, दृढ़ वैराग्य और विशिष्ट गुणों पर विवेचन करते हुए अजमेर में उनकी भागवती दीक्षा, रियां में बड़ी दीक्षा एवं उनके आचार्य काल में उनसे दीक्षित सन्त-सतियों की जानकारी धर्म सभा में रखते हुए संयममय जीवन की विशिष्ट उपलब्धियों पर प्रकाश डाला। सभी उपस्थित श्रद्धालुओं ने सामूहिक व्रत-प्रत्याख्यान किए। *-आर. नरेन्द्र कांकरिया*

मानसरोवर-जयपुर में छात्राओं के जीवन-निर्माण में बनें सहयोगी

छात्रा संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण योजना

(प्रतिवर्ष एक छात्रा के लिए रुपये 24,000 सहयोग की अपील)

श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान (बालिका), जयपुर, संघ और समाज की प्रतिभाशाली छात्राओं के सर्वांगीण विकास के लिए वर्ष 2017 से सञ्चालित संस्था है। यहाँ इस संस्था में वर्तमान में 40 अध्ययनरत छात्राओं को धार्मिक-नैतिक संस्कारों सहित उच्च अध्ययन के लिए उचित आवास-भोजन की नि:शुल्क व्यवस्थाएँ प्रदान की जा रही हैं। व्यावहारिक अध्ययन के साथ छात्राओं को धार्मिक अध्ययन की व्यवस्था भी संस्था द्वारा की जाती है। संस्था को सुचारू रूप से चलाने एवं इन बालिकाओं के लिए समुचित अध्ययनानुकूल व्यवस्था में आप-सबका सहयोग अपेक्षित है। आपसे निवेदन है कि छात्राओं के जीवन-निर्माण के इस पुनीत कार्य में तथा उनके संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण में सहयोगी बनें।

आप द्वारा दिया गया आर्थिक सहयोग 80जी धारा के तहत कर मुक्त होगा। आप यदि सीधे बैंक खाते में सहयोग कर रहे हैं तो चेक की कॉपी, ट्राँजेक्शनस्लिप अथवा जानकारी हमें अवश्य भेंजे।

खाते का विवरण:-Name : ***SAMYAGGYAN PRACHARAK MANDAL***, Account Type : *Saving,* Account Number : ***51026632997***, Bank Name : *SBI*, Branch : Bapu Bazar, Jaipur, Ifsc Code : SBIN0031843 **निवेदक :** अशोक कुमार सेठ, मन्त्री। अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क फोन नं. अनिल जैन 9314635755

विद्यार्थियों के जीवन-निर्माण में बनें सहयोगी

छात्र संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण योजना

(प्रतिवर्ष एक छात्र के लिए रुपये 24,000 सहयोग की अपील)

आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान, (सिद्धान्त शाला) जयपुर, संघ एवं समाज के प्रतिभाशाली छात्रों के सर्वांगीण विकास के लिए वर्ष 1973 से सञ्चालित संस्था है। इस संस्था से अब तक सैकड़ों विद्यार्थी अध्ययन कर प्रशासकीय, राजकीय एवं प्रोफेशनल क्षेत्र में कार्यरत हैं। अनेक छात्र व्यावसायिक क्षेत्रों में सेवारत हैं। समय-समय पर ये संघ-समाजसेवी कार्यों में निरन्तर अपनी सेवाएँ भी प्रदान कर रहे हैं। वर्तमान में भी यहाँ अध्ययनरत विद्यार्थियों को धार्मिक-नैतिक संस्कारों सहित उच्च अध्ययन के लिए उचित आवास-भोजन की नि:शुल्क व्यवस्थाएँ प्रदान की जाती हैं। व्यावहारिक अध्ययन के साथ ही छात्रों को धार्मिक अध्ययन की व्यवस्था भी संस्था द्वारा की जाती है। वर्तमान में संस्थान में 71 विद्यार्थियों के लिए अध्ययनानुकूल व्यवस्थाएँ हैं। संस्था को सुचारू रूप से चलाने एवं इन बालकों के लिए समुचित अध्ययननाकूल व्यवस्था में आप-सबका सहयोग अपेक्षित है। आपसे निवेदन है कि छात्रों के जीवन-निर्माण के इस पुनीत कार्य में बालकों के संरक्षण-संवर्द्धन-पोषण में

सहयोगी बनें।

इसमें सहयोगी बनने वाले महानुभावों के नाम जिनवाणी में क्रमिक रूप से प्रकाशित किये जा रहे हैं। संस्थान के लिए पूर्व छात्रों का एवं निम्नलिखित महानुभावों का सहयोग प्राप्त हुआ है-

27. श्री ए. एस. मेहता (तृप्ति अमर मेहता स्माइल फाउण्डेशन), दिल्ली 1,20,000/-

28. श्री अनुपमजी जैन (करेला वाले), जयपुर, प्रबन्धक पी.एन.बी., जयपुर (पूर्व छात्र) 12,000/-

आप द्वारा दिया गया आर्थिक सहयोग 80जी धारा के तहत कर मुक्त होगा। आप यदि सीधे बैंक खाते में सहयोग कर रहे हैं तो चेक की कॉपी, ट्रांजेक्शनस्लिप अथवा जानकारी हमें अवश्य भेंजे।

खाते का विवरण:-Name : ***GAJENDRA CHARITABLE TRUST***, Account Type : *Saving*, Account Number : ***10332191006750***, Bank Name : *Punjab National Bank*, Branch : Khadi Board, Bajaj Nagar, Jaipur, Ifsc Code : PUNB0103310, Micr Code : 302022011, Custumer ID : 35288297 **निवेदक :** डॉ. प्रेमसिंह लोढ़ा (व्यवस्थापक), सुमन कोठारी (संयोजक), अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें-दिलीप जैन 'प्राचार्य' 9461456489, 7976246596

शिक्षण बोर्ड की आगामी परीक्षा 17 जुलाई, 2022 को

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की कक्षा 1 से 12 तक की आगामी परीक्षा **17 जुलाई, 2022** रविवार को **दोपहर 12.30 से 3.30 बजे** तक आयोजित की जाएगी।

1. परीक्षा, ज्ञान वृद्धि का प्रमुख साधन है। क्रमबद्ध एवं सही ज्ञान ही व्यक्ति को हित-अहित की जानकारी कराता है। अत: ज्ञान बढ़ाने एवं सुसंस्कार पाने हेतु आप स्वयं भी परीक्षा दें तथा अन्य भाई-बहनों को भी परीक्षा में भाग लेने की प्रभावी प्रेरणा कर धर्म दलाली का लाभ प्राप्त करें।
2. कम से कम 10 परीक्षार्थी होने पर परीक्षा केन्द्र नया प्रारम्भ किया जा सकता है।
3. परीक्षा से सम्बन्धित आवेदन-पत्र, पुस्तकें, शिक्षण बोर्ड कार्यालय से प्राप्त की जा सकती हैं।
4. सभी उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को प्रोत्साहन पुरस्कार एवं मेरिट में आने वालों को विशेष पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।
5. परीक्षा में भाग लेने हेतु आवेदन-पत्र भरकर जमा कराने की अन्तिम तिथि 17 जून, 2022 है। नियत समय में आवेदन-पत्र जमा कराना अनिवार्य है।

परीक्षा सम्बन्धी अन्य जानकारी के लिए सम्पर्क करें-अशोक बाफना 9444270145 (संयोजक), सुभाषचन्द्र नाहर 9413202678 (सचिव) शिक्षण बोर्ड कार्यालय-सामायिक स्वाध्याय भवन, नेहरुपार्क, जोधपुर-342003 (राज) 291-2630490, व्हाट्सएप्प नं. 7610953735 Website : jainratnaboard.com, E-mail: shikshanboardjodhpur@gmail.com

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल एवं युवक परिषद् के पदाधिकारी

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ एवं संघीय संस्थाओं की 23 जनवरी, 2022 को हुई साधारण सभा में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल के राष्ट्रीय अध्यक्ष पद पर श्रीमती अलकाजी दुधेड़िया, अजमेर एवं अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष पद पर श्री विवेकजी लोढ़ा, जयपुर का मनोनयन किया गया। **श्रीमती अलकाजी दुधेड़िया** एवं **श्री विवेकजी लोढ़ा** ने अपनी कार्यकारिणी का विस्तार करते हुए निम्नाङ्कित मुख्य पदों पर मनोनयन किए हैं, जो इस प्रकार है-

श्राविका मण्डल

1.	श्रीमती संगीताजी बोहरा, चेन्नई	कार्याध्यक्ष
2.	श्रीमती मोनिका जी डांगी, किशनगढ़	कार्याध्यक्ष
3.	श्रीमती श्वेताजी कर्णावट, जोधपुर	महासचिव
4.	श्रीमती विनिताजी कांकरिया, जोधपुर	सचिव
5.	श्रीमती बिन्दूजी भाण्डावत, जोधपुर	कोषाध्यक्ष

युवक परिषद्

1.	श्री सिद्धार्थजी आर. बाफना, जलगाँव	कार्याध्यक्ष
2.	श्री श्रेयांशजी भाण्डावत, जोधपुर	कार्याध्यक्ष
3.	श्री विकासराजजी जैन, जयपुर	महासचिव
4.	श्री मनीषजी जैन (सी.ए.), जयपुर	कोषाध्यक्ष

संक्षिप्त समाचार

इन्दौर-देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर की 'डाटा विज्ञान एवं पूर्वानुमान' अध्ययनशाला के अन्तर्गत स्थापित 'प्राचीन भारतीय गणित अध्ययन केन्द्र' का 5 फरवरी, 2022 को उद्घाटन किया गया जिसकी अध्यक्षता करते हुए प्रो. रेणु जैन (कुलपति-देवी अहिल्या विश्वविद्यालय) ने कहा कि इस विश्वविद्यालय में प्राचीन भारतीय गणित अध्ययन केन्द्र की स्थापना उनका स्वप्न था जो आज साकार हो रहा है। डॉ. विकासजी दवे के प्रयासों एवं डाटा विज्ञान के प्रो. वी. के. गुप्ताजी के सहयोग से डॉ. अनुपमजी के निर्देशन में स्थापित यह केन्द्र राष्ट्रीय ख्याति अर्जित करेगा। उन्होंने स्वयं यहाँ आकर अपने अध्ययन को विकसित कर स्वप्न को साकार रूप देने की भावना व्यक्त की।

-प्रो. अनुपम जैन

बेंगलोर-गोडवाड भवन जैन ट्रस्ट के महामन्त्री श्री कुमारपालजी सिसोदिया ने एक विजन के साथ घोषणा में कहा है कि यहाँ किसी जैन दम्पती के तीसरा बच्चा पैदा होने पर 5 लाख रुपये नकद के साथ तीसरे बालक या बालिका की प्राथमिक शिक्षा से दसवीं तक की शिक्षा-व्यवस्था ट्रस्ट द्वारा की जाएगी। यही नहीं उससे भी आगे उस तीसरे बच्चे के विवाह के लिए भी भवन निःशुल्क दिया जाएगा। श्री वर्धमान श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन संघ शान्तिनगर और मूर्ति पूजक संघ के मन्त्री एवं जाने-माने समाजसेवी श्री छगनलालजी लुणावत ने इस घोषणा की अनुमोदना करते हुए कहा कि यह मौजूदा समय की माँग है। जैन परिवार की ओर से इस मुद्दे पर ध्यान दिया जाना चाहिए। अगर ऐसा नहीं होगा तो परिवार सिमटने लगेंगे। श्री संघ बेंगलूरु के अध्यक्ष श्री महीपाल सुराणा ने भी इस घोषणा की प्रशंसा की है और इसे जैन समाज के लिए एक शानदार विजन बताया है।

नईदिल्ली-ज्ञानोदय चेरिटेबल सोसायटी, नई दिल्ली जैन बच्चों के लिए सेकेण्डरी स्कूल तक शिक्षा जारी रखने हेतु आवश्यक आर्थिक सहायता प्रदान करती है। आवेदन पत्र के लिए निम्न पते पर लिखें-

Gyanoday Charitable Society (Regd. No. 40194/2001) 572, Asiad Village, New Delhi-110 049, Ph. 011-26493538/26492386 or 9811449431, www.gcsdelhi.org (फार्म हमारी वेबसाईट से भी डाउनलोड कर सकते हैं)

श्री संघों के कार्यकर्त्ताओं से निवेदन है कि अपने नगर के योग्य जैन विद्यार्थियों को सहायता हेतु ऊपर लिखे

पते पर सम्पर्क करें। सभी जानकारी और सहायता कार्य गुप्त रखे जाते हैं। *-अध्यक्ष, ज्ञानोदय सोसायटी*

बधाई

मैसूर-स्थानकवासी जैन संघ मैसूरु के तत्त्वावधान में आयोजित बैठक में संघ के उत्थान के लिए विभिन्न प्रकार के मुद्दों पर मंथन किया गया। सभा में नई कमेटी का गठन किया गया, जिसमें श्री सुभाषचन्दजी धोका को अध्यक्ष एवं श्री बुधमलजी बाघमार को मन्त्री मनोनीत किया।

जोधपुर-श्री प्रत्यूषजी सुपुत्र सी.ए. प्रोफेसर सुनीलजी-डॉ. अनिताजी, सुपौत्र स्व. प्रोफेसर गौतमजी-श्रीमती सोहनजी मेहता ने चार्टेड एकाउण्टेण्ट (सी.ए.) की परीक्षा उत्तीर्ण की है। आपने जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर से बी.कॉम ऑनर्स की परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त कर गोल्ड मेडल भी हासिल किया है।

मानसी सुकलेचा

प्रदीप भण्डारी

अपूर्व मेहता

मानसी सर्राफ

राहुल मुणोत

मुम्बई-सुश्री मानसी सुकलेचा सुपुत्री श्रीमती सुनीताजी-श्री राजीवजी, सुपौत्री श्रीमती आरतीजी-स्व. श्री अभय कुमारजी सुकलेचा ने सी.ए./सी.ए.एस की परीक्षा मुम्बई से फरवरी 2022 में उत्तीर्ण कर अपने परिवार को गौरवान्वित किया है।

मुम्बई-श्री प्रदीपजी सुपुत्र श्री महावीरजी-श्रीमती लीलाजी, सुपौत्र स्व. श्री उगमराजजी-स्व. श्रीमती मोहनदेवीजी भण्डारी (पीपाड़सिटी) ने चार्टेड फाइनेन्सियल एनालिस्ट (CFA-U.S.) की परीक्षा उत्तीर्ण की है।

जोधपुर-श्री अपूर्वजी सुपुत्र श्री संजयजी-श्रीमती नीतूजी, सुपौत्र श्री अर्जुनराजजी-श्रीमती सुशीलाजी मेहता एवं दोहित्र श्रीमती ललिताजी-स्व. श्री दलपतमलजी लोढ़ा ने कोस्ट मैनेजमेण्ट एकाउण्टेण्ट की परीक्षा उत्तीर्ण की है।

जोधपुर-सुश्री मानसीजी सुपुत्री श्री मुकेशजी-श्रीमती ममताजी सर्राफ, सुपौत्री श्री मानराजजी-श्रीमती सुन्दरदेवीजी सर्राफ एवं दोहित्री श्रीमती सरलाजी-स्व. श्री महावीरचन्दजी खिंवसरा ने सी.ए. परीक्षा उत्तीर्ण की है।

जोधपुर-श्री राहुलजी सुपुत्र श्री सागरमलजी (सी.ए.)-श्रीमती मनीषाजी, सुपौत्र श्री धनराजजी-श्रीमती कृष्णाजी मुणोत, दोहित्र श्रीमती गुलाबजी-स्व. श्री सोहनलालजी लूंकड़ ने चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट की परीक्षा उत्तीर्ण की है।

श्रद्धाञ्जलि

चेन्नई-धर्मनिष्ठ, श्रद्धानिष्ठ, सन्तसेवी श्रावकरत्न वीरभ्राता श्री मानमलजी सुपुत्र श्री हस्तीमलजी सुराणा का 5 फरवरी, 2022 को देहावसान हो गया। सन्त-सतीवृन्द की सेवा में सन्नद्ध आपने श्रद्धा-भक्ति और सेवाभावना के उच्च आदर्शों के साथ स्वास्थ्य की अनुकूलता-प्रतिकूलता में भी सदा सक्रियता रखी। सेवा-धर्म के प्रति आपका आदर्श वस्तुत: प्रेरणादायी रहा। आप रत्नसंघीय श्रद्धेय श्री बलभद्रमुनिजी म.सा. के सांसारिक भ्राता एवं महासती श्री मुदितप्रभाजी म.सा. के सांसारिक मामाजी थे। आपने बजरिया-सवाईमाधोपुर में स्वाध्याय भवन के निर्माण में मुक्त-हस्त से उदारता के साथ अर्थ

सहयोग प्रदान किया। आप स्वयं ने संस्कारी जीवन जीते हुए अपने पारिवारिकजनों को भी धार्मिक संस्कार देने का महत्त्वपूर्ण दायित्व निभाया था जिसके फलस्वरूप सुराणा परिवार संघ-सेवा, समाज-सेवा में सदैव अग्रणी रहा है। आपके भ्राता श्री इन्दचन्दजी सुराणा अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ तमिलनाडु सम्भाग के क्षेत्रीयप्रधान के रूप में अपनी महनीय सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं। स्वधर्मी वात्सल्य एवं आतिथ्य-सत्कार में भी सुराणा परिवार सदैव समर्पित है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

अलीगढ़-रामपुरा-संघ-सेवी, धर्मनिष्ठ युवारत्न, वीर चाचा श्री नवनीतकुमारजी (नरेन्द्र) सुपुत्र स्व. श्री

चाँदमलजी जैन का 04 फरवरी, 2022 को देहावसान हो गया। आपकी सन्त-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। पारिवारिक सुसंस्कारों से संस्कारित तथा धार्मिक संस्कारों के प्रति जागरूक सन्त-सतीवृन्द की सेवा में तत्पर रहने वाले आप श्री का जीवन सरलता, मधुरता, सहिष्णुता, उदारता जैसे सद्गुणों से ओतप्रोत था। वाणी की मधुरता, व्यवहार की सरलता और मन की निष्कपटता एवं विनोदी स्वभाव के कारण आप सबके प्रियपात्र थे। आप नियमित रूप से गुरु भगवन्तों के दर्शन-वन्दन एवं प्रवचन-श्रवण का लाभ प्राप्त करने में अग्रणी रहते थे। नवदीक्षिता रत्नसंघीया महासती श्री अदितिप्रभाजी म.सा. के आप सांसारिक चाचाजी तथा वीर पिता श्री महेन्द्रकुमारजी जैन (बजाज) के लघुभ्राता थे। आपका परिवार रत्नसंघ की सभी गतिविधियों में सक्रिय रूप से जुड़ा हुआ है। सन्त-सतीवृन्द की सेवा तथा स्वधर्मी भाई-बहिनों के आतिथ्य-सत्कार में आपका परिवार सदैव तत्पर है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

जयपुर-धर्मनिष्ठ श्रावकरत्न श्री भँवरसिंहजी बोहरा का 02 जनवरी, 2022 को 71 वर्ष की उम्र में सागारी संथारा सहित देवलोक गमन हो गया। आप काफी समय से अस्वस्थ थे। पारिवारिकजनों ने आपकी अच्छी सेवा की। आप सरल स्वभावी, मधुरभाषी थे। आपकी गुरु भगवन्तों के प्रति अटूट श्रद्धा थी। आपके रात्रिभोजन एवं जमींकन्द के त्याग थे तथा नियमित सामायिक करते थे। *-बलवन्तसिंह चोरड़िया*

जयपुर-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती ललिताजी धर्मसहायिका स्व. श्री पदमचन्दजी जैन (मूल निवासी सहाड़ी-

अलवर) का 81 वर्ष की उम्र में 15 जनवरी, 2022 को स्वर्गवास हो गया। आपकी धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा एवं आस्था थी। आचार्य भगवन्त एवं गुरु भगवन्तों के प्रति अच्छी निष्ठा थी। आपने लगातार 9 वर्ष तक रविवार का उपवास किया। आप समस्त परिवार को साथ लेकर चलने वाली श्राविका थीं। आपके सुपुत्र श्री अनिल कुमारजी जैन, रेलवे में ए.ओ. के पद पर कार्यरत हैं। आपके पाँच सुपुत्रियाँ, दो सुपौत्र, एक पड़पौत्र हैं। आप उत्तम कुटुम्ब भावना, वात्सल्यभाव, उदारता, सहिष्णुता एवं सरलता की भावना से भरपूर थीं। आप महासती स्व. श्री शशिप्रभाजी म.सा. की सांसारिक पक्षीय ताईजी थीं।

-डॉ. मनीष कुमार जैन, खेरली

जयपुर-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री घेवरचन्दजी सुपुत्र स्व. श्री भँवरलालजी लोढ़ा का 2 फरवरी, 2022 को देहावसान

हो गया। आपकी धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा एवं आस्था थी। आचार्य भगवन्त एवं गुरु भगवन्तों के प्रति अच्छी निष्ठा थी। आप शासनप्रभाविका साध्वीप्रमुखा महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. के अनन्य भक्त थे। आप नियमित रूप से सामायिक-स्वाध्याय करते थे तथा अष्टमी, चतुर्दशी को संवर-पौषध, दया करत रहते थे। आप पर्युषण पर्व पर पूरे आठ दिवस लाल भवन स्थानक में धर्माराधना करते थे। आपने सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित सत्साहित्य में उदारमना होकर सहयोग प्रदान किया। आप समस्त परिवार को साथ लेकर चलने वाले थे तथा उत्तम कुटुम्ब भावना, वात्सल्य, उदारता एवं

सहिष्णुता, सरलता की भावना से भरपूर थे। *-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री*

अलीगढ़-रामपुरा-धर्मनिष्ठ, श्राविकारत्न श्रीमती कमलादेवीजी धर्मसहायिका श्रावकरत्न स्व. श्री गोपाललालजी

जैन 'वैद्यजी' का 28 जनवरी, 2022 को 67 वर्ष की वय में देवलोकगमन हो गया। आप देव, गुरु, धर्म एवं रत्नसंघ के प्रति समर्पित थीं। गुरुहस्ती की चरण सन्निधि एवं देशनाओं को आत्मसात् कर, गुरु हस्ती के सामायिक-स्वाध्याय सन्देश को अङ्गीकार कर उनकी जीवन पर्यन्त सामायिक, प्रतिक्रमण के साथ धर्मध्यानमयी जीवनचर्या रही तथा परिवार में भी गुरु हस्ती, गुरु हीरा, गुरु मान एवं रत्नसंघीय सन्त-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति, भावना, संघनिष्ठता का पीढ़ी दर पीढ़ी उन्नयन हो रहा है। आपके धर्मसहायक श्रावकरत्न, संघसेवी श्री गोपाललालजी जैन अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ में पोरवाल सम्भाग के क्षेत्रीय प्रधान रहे। श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, अलीगढ़-रामपुरा के अध्यक्ष के रूप में तथा ग्राम सरपंच के रूप में उनकी सेवाएँ अविस्मरणीय रहीं।

कोटा-धर्मनिष्ठ, संघ-सेवी, श्राविकारत्न श्रीमती शान्तिबाईजी धर्मपत्नी स्व. श्री बद्रीलालजी जैन (जरखोदा

वाले) का 11 दिसम्बर, 2021 को देहावसान हो गया। आपकी सभी सन्त-सतियों एवं धर्म के प्रति अटूट श्रद्धा-भक्ति थी। आप धार्मिक कार्यों में संलग्न रहती थीं। आप अपने पीछे भरा-पूरा संस्कारित परिवार छोड़कर गई हैं।

गोपालगढ़-भरतपुर-वरिष्ठ श्राविकारत्न श्रीमती चन्द्रमुखीजी धर्मपत्नी स्व. श्री महावीर प्रसादजी जैन का 24

जनवरी, 2021 को 93 वर्ष की आयु में देवलोकगमन हो गया। आपकी आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर एवं सन्त-सतीवृन्द के प्रति प्रगाढ़ आस्था थी। आप प्रतिदिन सामायिक करती थीं एवं अष्टमी तथा चतुर्दशी को उपवास, एकाशन करती थीं, नवकारसी-पोरसी आने के उपरान्त ही जलग्रहण करती थीं। आपने महासती श्री शान्तिकँवरजी म.सा. से आजीवन शीलव्रत के पच्चक्खान ग्रहण किये थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा संस्कारित परिवार छोड़कर गयी हैं। आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री पारसचन्दजी जैन वरिष्ठ स्वाध्यायी हैं। *-बाबूलाल जैन, अध्यक्ष*

मनमाड़-धर्मनिष्ठ श्रावकरत्न श्री सम्पतलालजी सुराणा का 29 जनवरी, 2022 को 94 वर्ष की वय में सागारी संथारे

के साथ देहावसान हो गया। आप शान्त, सरल स्वभावी, मिलनसार एवं दानप्रेमी थे। आप जैन श्रावक संघ के विश्वस्त संघ संरक्षक थे। सामाजिक, धार्मिक, व्यावसायिक तथा शैक्षणिक क्षेत्र में आपका योगदान सराहनीय रहा। आपने तथा आपके परिवार ने धर्मप्रेमी श्राविकारत्न गेंदाबाईजी की पुण्य-स्मति में मनमाड़ संघ के लिए 'सौ. गेंदाबाई सम्पतलाल सुराणा पौषधशाला' का निर्माण किया। विविध शैक्षणिक और धार्मिक संस्थाओं में आपने खुले मन से सहयोग प्रदान किया। आपने बहुत से व्रत, पच्चक्खान ग्रहण कर रखे थे। *-कपूरचन्द सुराणा*

बीकानेर-धर्मनिष्ठ श्रावकरत्न श्री रविन्द्र कुमारजी सुपुत्र स्व. श्री भँवरलालजी-जतनदेवीजी सेठिया (चेन्नई

प्रवासी) का 17 जनवरी, 2022 को देहावसान हो गया। आप नित्य माला, सामायिक एवं स्वाध्याय, धर्म-ध्यान करते थे। आप मृदुभाषी, मिलनसार व्यक्तित्व के धनी थे। आप चारित्रात्माओं के नियमित दर्शनार्थ जाते थे। आपने चार आचार्यों की सेवा की। आप अगरचन्द भैरोंदान सेठिया जैन पारमार्थिक संस्था के ट्रस्टी एवं कोषाध्यक्ष के पद पर 15 वर्षों तक रहे एवं सेठिया कोटड़ी के जीर्णोद्धार में अहम् भूमिका निभाई तथा संस्था को निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर करने हेतु

आप निरन्तर प्रयासरत रहते थे। आपके लघुभ्राता श्री शान्तिलालजी सेठिया भी संघसेवा, समाज-सेवा में आपकी तरह सदैव तत्पर रहते हैं। आप अपने पीछे लघुभ्राता एवं धर्मपत्नी श्रीमती कंचनदेवीजी सहित भरा-पूरा संस्कारवान् परिवार छोड़कर गये हैं।

जयपुर-धर्मनिष्ठ, संघसेवी सुश्रावक श्री कन्हैयालालजी चौधरी (आलनपुर वाले) सुपुत्र स्व. श्री मोतीलालजी जैन

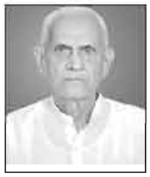

का 19 फरवरी, 2022 को 91 वर्ष की आयु में संथारापूर्वक देवलोकगमन हो गया। आप प्रामाणिक और अनुशासित जीवनशैली के धनी थे। आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. के प्रति आपकी प्रगाढ़ आस्था थी। आप नियमित सामायिक करते थे। आप सरल हृदय, मिलनसार एवं व्यवहार कशुल थे। आपने सवाईमाधोपुर में वर्षों तक राजकीय अहिंसा दिवसों के दौरान कत्लखाने और मांस की दुकानों को बन्द करवाया तथा कोरोना काल में ऑक्सीजन की कमी के दौरान दो कन्सन्ट्रेटर मशीनें समाज को उपलब्ध करवायी। आपने परिवारजनों को सुसंस्कार प्रदान किये। आप एक भ्राता, दो बहिनें और तीन सुपुत्र एवं चार सुपुत्रियों, पौत्र-पौत्रियों एवं प्रपौत्र सहित भरापूरा परिवार छोड़कर गये हैं। आपका धर्मनिष्ठ परिवार सन्त-सती एवं संघसेवा में अग्रणी रहता है।

बजरिया-सवाईमाधोपुर-धर्मनिष्ठ, श्राविकारत्न श्रीमती प्रेमदेवीजी धर्मसहायिका श्री महेन्द्रकुमारजी जैन (कुण्डेरा

वाले) का 3 जनवरी, 2022 को 55 वर्ष की वय में देहावसान हो गया। आपकी देव-गुरु-धर्म के प्रति दृढ़ आस्था थी। आप सन्त-सतियों के दर्शन-वन्दन, प्रवचन श्रवणादि में सदैव अग्रणी रहती थी। आप सरल स्वभावी एवं धार्मिक गतिविधियों में संलग्न रहती थी। आप अपने पीछे भरापूरा संस्कारित परिवार छोड़कर गई हैं।

उपर्युक्त दिवगंत आत्माओं को अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं सभी सम्बद्ध संस्थाओं के सदस्यों की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

84वाँ जन्मदिवस

हस्ती तेरा हीरा

चन्दना-मुकेशजी गुन्देचा

हस्ती तेरा हीरा-2, सब हीरों से प्यारा है
हस्ती तेरा हीरा.....।।टेर।।

जन्मे शहर पीपाड़ में प्यारे,
गुरु हीरा हमको प्यारे।।1।।

माँ मोहिनी की कोख से जन्मे,
मोतीजी के अनोखे हीरे।।2।।

गाँधी कुल का भाग्य सवाया,
हीरा एक अनमोल है आया।।3।।

जब हस्ती गुरु पीपाड़ पधारे,
हीरा के बन गए सहारे।।4।।

सप्त कुव्यसन का अभियान चलाया
युवकों को खूब जगाया।।5।।

अन्त समय पत्र लिखा था
हीरा को आचार्य बनाया।।6।।

गुरु हस्ती गुरु हीरा,
गुरु महेन्द्र गुरु मान।
जय गुरु हस्ती, जय गुरु हीरा,
जय गुरु महेन्द्र-मान।।

-तिलक नगर, हैदराबाद (तेलंगाना)

ISSN 2249-2011

❁ साभार-प्राप्ति-स्वीकार ❁

1000/-जिनवाणी पत्रिका की आजीवन (अधिकतम 20 वर्ष) सदस्यता हेतु प्रत्येक

क्रम संख्या 16283 से 16292 तक कुल 10 सदस्य बने।

जिनवाणी मासिक पत्रिका हेतु साभार प्राप्त

107600/- श्री पी. शिखरमलजी सुराणा, चेन्नई जिनवाणी पत्रिका के श्रेष्ठ लेखकों को पुरस्कृत किये जाने हेतु।

21000/- श्री सुभाषचन्दजी, श्री अशोककुमारजी, श्री बिपिनजी, श्री पुनीतजी, श्री यशजी, श्री वरितजी धोका, मैसूर श्री स्थानकवासी जैन संघ, मैसूर के अध्यक्ष बनने के उपलक्ष्य में।

21000/- श्री हिमांशुजी जैन, अलीगढ़-रामपुरा, श्री शुभांशु जी सुपुत्र श्री सोहनलालजी जैन के ASP पद पर जमशेदपुर (झारखण्ड) में नियुक्त होने के उपलक्ष्य में।

11111/- श्री प्रमोदकुमारजी मोदी, किशनगढ़, श्री चाँदमलजी सुरिया, भीलवाड़ा के सुपौत्र चि. कमलजी (सुपुत्र स्व. श्री नरेन्द्रजी सुरिया) का विवाह सौ.कां. वैशालीजी सुपौत्री स्व. श्री अमरचन्दजी मोदी (सुपुत्री स्व. श्री विनोद कुमारजी मोदी) किशनगढ़ के विवाह उपलक्ष्य में।

11000/- श्री क्रान्तिचन्दजी मेहता, अलवर, सदस्य, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल जिनवाणी हेतु सप्रेम।

11000/- श्रीमती मंजूजी कोठारी, जयपुर, जिनवाणी को सप्रेम।

11000/- श्रीमती मंजूजी, संदीपजी, ध्रुवजी, विवानजी धारीवाल, जोधपुर, सुश्राविका श्रीमती केसरकँवरजी धारीवाल का 29 दिसम्बर, 2021 को देहावसान हो जाने पर उनकी पुण्य-स्मृति में।

10800/- श्री तरूणजी बोहरा (जैन), चेन्नई, जिनवाणी को सप्रेम।

5560/- श्री सागरमलजी नागसेठिया, होलनांथा-धुलिया, मुमुक्षु बहिन सुश्री श्रुतिजी सेठिया की जैन भागवती दीक्षा 9 दिसम्बर, 2021 को पीपाड़ में सम्पन्न होने की खुशी में।

5551/- श्री हुकमचन्दजी नागसेठिया, होलनांथा-धुलिया, मुमुक्षु बहिन सुश्री श्रुतिजी सेठिया की जैन भागवती दीक्षा 9 दिसम्बर, 2021 को पीपाड़ में सम्पन्न होने की खुशी में।

5111/- श्री प्रमोदकुमारजी, प्रवीणकुमारजी मोदी, किशनगढ़, भतीजे चि. अरिहन्तजी सुपौत्र स्व. श्री अमरचन्दजी सुपुत्र स्व. श्री विनोदकुमारजी मोदी का विवाह सौ.कां. अविकाजी सुपौत्री श्री सुमेरसिंहजी मुणोत, ब्यावर के साथ सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में।

5100/- श्री धनराजजी, विमलजी, नीरजजी जैन (आलनपुर वाले), जयपुर, पूज्य पिताजी श्री कन्हैयालालजी चौधरी की पुण्य-स्मृति में।

5100/- श्रीमती सरलाजी ओस्तवाल, जोधपुर, अपने धर्मसहायक श्री प्रकाशमलजी ओस्तवाल का 3 दिसम्बर, 2021 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य-स्मृति में।

2200/- श्री हरकचन्दजी, रमेशचन्दजी, लोकेशकुमारजी जैन (मोहम्मदपुरा वाले), जयपुर, चि. योगेशजी (अंशुल) सुपुत्र श्री रमेशचन्दजी का शुभ विवाह सौ.कां. स्वातिजी सुपुत्री श्री बेणीप्रसादजी जैन, इन्दौर के साथ 7 फरवरी, 2022 को सम्पन्न होने की खुशी में।

2100/- श्री महावीरजी भण्डारी (पीपाड़सिटी वाले), भायन्दर-मुम्बई, श्री प्रदीपजी सुपौत्र स्व. श्री उगमराजजी, सुपुत्र श्री महावीरजी भण्डारी द्वारा CFA-US की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपलक्ष्य में।

2100/- श्री सौभाग्यमलजी, हरकचन्दजी, हनुमानप्रसाद जी, महावीरप्रसादजी, कपूरचन्दजी जैन, बिलोता वाले, पूज्या माताजी स्व.श्रीमती माँगीबाईजी जैन की पुण्य-स्मृति में।

2100/- श्री पदमचन्दजी गाँधी, जयपुर, जिनवाणी को सप्रेम।

2100/- श्री बुद्धिप्रकाशजी, महेन्द्रकुमारजी जैन (श्यामपुरा वाले) मुम्बई, चि. शुभम का विवाह सौ.कां सुष्मिता सुपुत्री श्री ओमप्रकाशजी जैन जरखोदा के

सङ्ग 18 फरवरी, 2022 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

2100/- श्री महेन्द्रकुमारजी, आकांशजी, स्तवनजी बजाज, अलीगढ़-रामपुरा, श्री नवनीतजी (नरेन्द्र) का 04 फरवरी, 2022 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य-स्मृति में।

2100/- श्रीमती सुशीलाजी कमलपतराजजी भंसाली, जोधपुर, सुपौत्र चि. अर्चितजी सुपुत्र श्रीमती ममता-अनिलजी भंसाली का शुभविवाह 27 दिसम्बर, 2021 को सौ.कां. मानसीजी के साथ सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में।

2100/- श्री रविजी, विक्कीजी भण्डारी, जोधपुर, पूज्य पिताजी स्व. श्री अशोकजी भण्डारी का 16 दिसम्बर, 2021 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य-स्मृति में।

2100/- श्री रूपराजजी, श्रीमती कंचनजी जीरावला, जोधपुर, सुपुत्र-सुपुत्रवधू श्री हितेषजी-स्वातिजी एवं सुपौत्री आयराजी जीरावला के ऑस्ट्रेलिया प्रवास के उपलक्ष्य में।

2000/- श्री नमनजी, निपुणजी डागा, जयपुर, जिनवाणी को सप्रेम।

1101/- श्री धर्मेन्द्रकुमारजी, जितेन्द्रकुमारजी, विनोदकुमार जी, संजयकुमारजी जैन, अलीगढ़-रामपुरा, श्राविकारत्न श्रीमती कमलाजी धर्मसहायिका स्व. वैद्य श्री गोपाललालजी जैन की पुण्य-स्मृति में।

1101/- श्री रामस्वरूपजी, कमलेशजी, अशोकजी, निर्मलकुमारजी जैन (केथूदा वाले), श्री राजेशकुमारजी सुपुत्र स्व. श्री रामकल्याणजी जैन का 5 जनवरी, 2022 को देवलोकगमन हो जाने पर उनकी पुण्य-स्मृति में।

1101/- श्री अजयकुमारजी जैन (खरखड़ी वाले), सवाईमाधोपुर, अपने सुपुत्र के विवाह उपलक्ष्य में।

1101/- श्री महेन्द्रकुमारजी जैन (कुण्डेरा वाले), सवाईमाधोपुर, धर्मसहायिका श्रीमती प्रेमदेवीजी जैन की पुण्य-स्मृति में।

1101/- श्री धर्मचन्दजी, सुरेशचन्दजी जैन (गलवाणिया वाले), कोटा, चि. कपिलकुमार जैन के विवाह उपलक्ष्य में।

1101/- श्री उच्छबराजजी मेहता, जोधपुर, सुश्री प्रतिभाजी एवं उच्छबराजजी मेहता के फरवरी 2022 में जन्मदिवस के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री रतनलालजी, कमलजी, सुरेन्द्रजी, गौतमजी, नरोत्तमजी, मनोजजी जैन (भगवतगढ़ वाले), कोटा, चि. अमितजी सुपुत्र स्व. श्री श्यामसुन्दरजी का शुभविवाह सौ.कां. कविताजी सुपुत्री श्री राधेश्यामजी करमोदा वाले के सङ्ग 10 फरवरी, 2022 को सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री अनिलकुमारजी-श्रीमती निशाजी, श्री कुशलजी-श्रीमती मोनिकाजी, श्री धवलजी, श्री रेयांशजी जैन, जयपुर, पूज्या श्रीमती ललिताजी जैन धर्मसहायिका स्व. श्री पदमचन्दजी जैन (सहाड़ी वाले), जयपुर का 15 जनवरी, 2022 को स्वर्गवास होने पर पुण्य-स्मृति में।

1100/- श्री राजेन्द्रप्रसादजी, अशोककुमारजी जैन (कुण्डेरा वाले), रावतभाटा, अपने सुपुत्र के विवाह उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री दिनेशजी-मीनाजी, अक्षयजी-प्रियंकाजी गांग, जोधपुर, स्व. श्री मनमोहनजी गांग की 22 जनवरी, 2022 को सत्रहवीं पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री रूपराजजी-श्रीमती कंचनजी जीरावला, सुपौत्र चि. सभ्यजी जीरावला के द्वितीय वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में।

संशोधन

गत अङ्क फरवरी, 2022 में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ को श्री प्रेमचन्दजी, अजयजी, आलोकजी हीरावत, मुम्बई-जयपुर के द्वारा प्रदत्त सहयोग राशि 11,111/- के स्थान पर 1,11,111/- पढ़ी जावे।

पुस्तकालयों को जिनवाणी निःशुल्क

सुज्ञ पाठकों से निवेदन है कि जिनवाणी मासिक पत्रिका अनेक जैन पुस्तकालयों, विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों को निःशुल्क प्रेषित की जाती है। आप उपयुक्त समझें, उस पुस्तकालय आदि का पता प्रेषित कर अनुगृहीत करें। सम्पर्कसूत्र-धर्मेन्द्र कुमार जैन, मोबाइल 9460441678

ISSN 2249-2011

बाल-जिनवाणी

प्रतिमाह बाल-जिनवाणी के अंक पर आधारित प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले अधिकतम 20 वर्ष की आयु के श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को सुगनचन्द प्रेमकँवर रांका चेरिटेबल ट्रस्ट-अजमेर द्वारा श्री माणकचन्दजी, राजेन्द्र कुमारजी, सुनीलकुमारजी, नीरजकुमारजी, पंकजकुमारजी, रौनककुमारजी, नमनजी, सम्यक्जी, क्षितिजजी रांका, अजमेर की ओर से पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-600 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-400 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 300 रुपये तथा 200 रुपये के तीन सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है। उत्तर प्रदाता अपने नाम, पते, आयु तथा मोबाइल नम्बर के साथ बैंक विवरण-बैंक का नाम, खाता संख्या, आई.एफ.एस. कोड आदि का भी उल्लेख करें।

माँ की ममता, हमें पुकारे

संकलित : सक्षम जैन

अपनी बात की शुरुआत एक प्यारे-से प्रसङ्ग के साथ कर रहा हूँ। एक बहुत चञ्चल और खूबसूरत लड़की थी। लड़की अपनी माँ से बहुत प्यार करती थी, पर गलत सोहबत में पड़ जाने के कारण अपने सदाचार से विमुख हो गई। लोगों के बहकावे में आकर वह घर से भाग गई, पर बाद में पछतावा हुआ।

जीवन में होने वाले अनाचार से दु:खी होकर जीवन में अपनाए गए पाप के मार्ग से वह आत्म-ग्लानि से भर गई। उसने स्वयं को खत्म करने का फैसला कर लिया। वह जिन लोगों के बीच में फँस चुकी थी, वहाँ से छिपकर निकल गई तथा आत्महत्या करने का तरीका सोचने लगी, तभी मन में भाव आया कि जन्म देने वाली माँ का चेहरा एक बार देख लूँ। वह अपनी माँ का चेहरा देखने निकल गई तथा अपने मोहल्ले में पहुँच गई। मोहल्ले में अन्य कोई उसे पहचान न ले, इसलिये वह अन्धेरे में अपने घर की गली में पहुँची।

उसके भीतर इतना साहस नहीं था कि वह अपना कलुषित चेहरा लेकर अपने माता-पिता के सामने जा सके। जब लड़की मध्यरात्रि के बाद गली में पहुँची तो उसने देखा कि घर का दरवाजा खुला हुआ था। उसके मन में अनेक विचार आने लगे। कहीं कोई अनहोनी तो नहीं हो गई? माँ संकट में तो नहीं? चोर उचक्के तो मेरे घर में नहीं घुस गए? अपनी माँ को सचेत करने की भावना से चिल्लाकर कहा-माँ! तभी अन्दर से आवाज़ आई- बेटी! आखिर तुम आ गई। माँ ने बेटी से कहा-बेटी! मुझे पूरा विश्वास था कि तुम एक-न-एक दिन जरूर लौटोगी।

जो दूर से ही माँ को देखना चाह रही थी वह माँ को सामने देखकर दौड़कर माँ के आञ्चल में अपने आपको छिपाने लगी। दोनों की आँखों से आँसू टपक रहे थे। लड़की ने पूछा-माँ! रात में एक बजे घर के दरवाजे खुले होने का क्या रहस्य है? माँ ने कहा-बेटी! जिस दिन से तुम गयी हो उस दिन से आज तक इस घर के दरवाजे बन्द नहीं हुए, जिससे जब भी तुम घर लौटकर आओ तो इन खुले दरवाजों को देखकर तुम्हें यह अहसास हो कि तुम्हारा इस घर में सदा स्वागत है। हर पल तुम्हारी प्रतीक्षा है।

बेटी ने कहा-माँ! तुमने इतनी बड़ी बात कह दी, किन्तु अब मैं आपके पवित्र प्रेम के काबिल नहीं रही। माँ ने कहा-बेटी! किसी माँ की सन्तान चाहे सन्मार्ग पर हो या कुमार्ग पर; चाहे सन्तान का सौभाग्य का उदय हो या दुर्भाग्य का, माँ का आञ्चल तो अपने बच्चों के लिए हमेशा बिछा रहता है।

माँ तो संसार का सबसे खूबसूरत शब्द है। दुनिया के सारे शब्दकोशों में माँ से ज्यादा प्यारा शब्द अन्य कोई नहीं है। माँ शब्द तो बीज की तरह छोटा है और बगरद की तरह विशाल। माँ में दुनिया भर के सम्पूर्ण शास्त्र और उनका सत्य समाहित हो जाता है। माँ तो ममता का महाकाव्य है। माँ राहत की साँस है। माँ तो अपने आप में जीवन का महाव्रत है।

माँ अपने आप में एक अनोखा व्रत है। जीवन में किसी के लिए भी एकादशी के व्रत को ग्यारह साल तक करना आसान है, संवत्सरी पर्व पर तीन दिन के उपवास को करना सरल है, चातुर्मास के दरम्यान एक महीने का मासक्षपण करना सहज है, पर माँ के दायित्वों को निभाना समस्त व्रतों, उपवासों और मासक्षपण करने से भी ज्यादा दुष्कर तप है। माँ की ममता, उसके त्याग, उसके अहसान, अपने आप में एक महातप और कुर्बानी की दास्तान है।

आपने देखा होगा कि सभी देवी-देवताओं के अलग-अलग मन्दिर हैं, परन्तु माँ तो वह मन्दिर है जिसमें ब्रह्मा, विष्णु, महेश कुदरती रूप से होते हैं। जिनकी वाणी में सत्य, आँखों में शिवम्, हाथों में सुन्दरम् है। माँ का वात्सल्य और त्याग देखें तो आकाश का अनन्त ढूँढ़ा जा सकता है, पर माँ की सहृदयता का कोई अन्त नहीं है। माँ अपने आप में पूर्ण है।

अत: मैं इतना ही कहना चाहूँगा कि माँ से बड़ा इस संसार में कोई नहीं होता है। हम कितनी भी गलती कर लें, परन्तु फिर भी माँ का प्रेम कभी कम नहीं होता है। आज के युग में जो माता-पिता को वृद्धाश्रम में छोड़कर सुख का अनुभव करते हैं उन बच्चों पर धिक्कार है।

माँ के समान छाया नहीं, माँ के समान कोई त्राता नहीं और माँ के समान कोई प्रपा (प्याऊ) नहीं है।

-सिद्धान्तशाला, बजाज नगर, जयपुर

Questions and Answers

Sh. Dulichand Jain

Q. 1- What are the five regulations of conduct?

Ans.- The Jaina texts speak of five ways in which ascetics can purify their actions and become faultless. They must mindfully regulate how they stand, walk, sit, sleep, speak and live; thus avoiding violence as much as possible. These fivefold regulations of activities are :

1. *Iryā samiti* (regulation while walking) : To walk carefully, without causing pain or death to other living beings.
2. *Bhāṣā samiti* (regulation while speaking) : To speak truthfully and pleasantly without indulging in the eight faults of speech-anger, pride, deceit, greed, laughter, fear, gossip and slander.
3. *Eṣaṇā samiti* (regulation while begging for alms) : Monks should search for and obtain pure foods and consume them in a faultless manner.
4. *Ādāna nikṣepa samiti* (regulation in taking and handling of possessions) : To pick up or place any article carefully, so as not to endanger the life of small creatures.
5. *Utsarga samiti* (regulation of disposal of body waste) : Monks should do this in a careful manner so as not to cause any inconvenience or nuisance to anybody.

-70, टी.टी.के. रोड़, आल्वारपेट, चेन्नई-600018 (तमिलनाडु)

सामायिक-प्रश्नोत्तर

प्र. 1- 'तस्सउत्तरी के पाठ' का दूसरा नाम क्या है?

उत्तर- 'तस्सउत्तरी पाठ' को 'उत्तरीकरणसूत्र' एवं 'आत्म-शुद्धि का पाठ' भी कहते हैं।

प्र. 2- 'तस्सउत्तरी के पाठ' का क्या प्रयोजन है?

उत्तर- 'तस्सउत्तरी के पाठ' से साधक कायोत्सर्ग करने की प्रतिज्ञा करता है, जिससे वह आत्मा को शरीर की आसक्ति से पृथक् कर (आत्मा को) कषायों से मुक्त कर सके।

-'श्रावक सामायिक प्रतिक्रमणसूत्र' पुस्तक से

मन जब-जब हो विचलित

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

मन जब-जब हो विचलित, प्रभुवर को याद करना,
प्रतिकूल प्रसङ्ग आए, मन में समता धरना।
मन जब-जब हो विचलित....।।टेर।।
कर्मों की पीड़ा को सहना ही पड़ता है,
समभावों से सह लो, जिनवर का कहना है।
जो बाँधे कर्म खुद ने, उसका है कर्ज भरना,
मन जब-जब हो विचलित....।।1।।
चहुँओर आकर्षण है, मत मन को भटकाओ,
कर चिन्तन शुभ अपना, निज घर में आ जाओ।
है चकाचौंध भारी, इससे तो दूर रहना,
मन जब-जब हो विचलित....।।2।।
पग-पग पर धोखा है, किसको अपना समझें,
नहीं ऐसा दृश्य कोई, रिश्तों में नेह बरसे।
है स्वार्थ भरी दुनिया, यहाँ सम्भल-सम्भल चलना,
मन जब-जब हो विचलित....।।3।।

-जनता साड़ी सेण्टर, स्टेशन रोड़, फरिश्ता कॉम्पलेक्स, दुर्ग-491001 (छत्तीसगढ़)

अमरा और पद्मा

लक्ष्मी जैन

किसी नगर में एक राजा रहता था, उसका नाम धनुकुमार था। धनुकुमार के दो पत्नियाँ थी जिसमें बड़ी का नाम अमरावती और छोटी का पद्मावती था। अमरावती, पद्मावती पर बहुत हुक्म चलाती थी, लेकिन पद्मावती अमरावती को बड़ी बहिन की भाँति मानती थी और किसी प्रकार की आनाकानी न करते हुए सहज, सरल भाव से सारा काम कर देती थी। अमरावती खुद को बहुत सुन्दर और श्रेष्ठ मानती थी, वह सोचती थी कि उसके जैसा कोई और नहीं है, लेकिन असल में पद्मावती बहुत ही सुन्दर, सौम्य, मृदुभाषी और सर्वगुण सम्पन्न थी।

धनुकुमार को पद्मावती अतिप्रिय थी, वह पद्मावती के लिए तरह-तरह के उपहार लाता ही रहता था। कभी उसके बालों में फूल लगाता, कभी अपने हाथों से पायल पहनाता, कभी गले में हार पहनाता आदि। अमरावती यह सब देखकर ईर्ष्या भाव से जल-भुन जाती थी।

एक समय की बात है कि पद्मावती माँ बनने वाली थी, अमरावती को यह बात बर्दाश्त नहीं हुई और उसने जालसाजी करना आरम्भ कर दिया। अमरावती ने पद्मावती के दूध में ज़हर मिला दिया। उसने सोचा था कि ऐसा करने से यह बला हमेशा के लिए टल जायेगी, लेकिन कहते हैं न कि-जैसी करनी वैसी भरनी। अमरावती ने पद्मावती को दूध के लिए काफी आवाज़ लगाई, लेकिन पद्मावती किसी काम में अधिक लीन थी वह एक भी आवाज़ सुन नहीं पाई। इतने में ही अमरावती के लाडले राजकुमार पदमकुमार ने वह दूध पी लिया जिससे उसकी मृत्यु हो गयी। अब अमरावती के पास पछताने के सिवाय अन्य कोई चारा नहीं था।

-सवाईमाधोपुर (राज.)

भगवान महावीर : चार मुक्तक

डॉ. दिलीप धींग

एक

सागर की गहराई से भी गहरा है जिनका ध्यान।
आकाश की ऊँचाई से भी ऊँचा है जिनका नाम।।
घोर उपसर्ग, अपार कष्ट सहे समभावों से।
उन मृत्युञ्जयी कालजयी महावीर को प्रणाम।।

दो

संसार के अद्‌भुत आश्चर्य थे महावीर।
विषम-समय में अनिवार्य थे महावीर।।
आसान नहीं महासागर अञ्जलि में भरना।
पाँव-पाँव चलने वाले सूर्य थे महावीर।।

तीन

न्याय के लिए नैतिकता का नीर चाहिये।

शान्ति के लिए समता का समीर चाहिये।।
विश्व खड़ा है विनाश के कगार पर।
अहिंसा के अवतार प्रभु महावीर चाहिये।।

चार

धधक रही चहुँओर हिंसा की ज्वालाएँ।
धड़ाधड़ खुल रहीं वधशालाएँ मधुशालाएँ।।
प्रभु महावीर! शक्ति दो जूझने की हमें।
अब भी बिक रहीं यहाँ चन्दनबालाएँ।।

-53, डोरे नगर, उदयपुर-313002 (राज.)

Adopt Non-Violence, Save the World

Sh. Jaideep Dhadda

We all know that hurting living beings is a violence. We also believe that killing humans and killing animals and birds is a crime by law. It's violence, it's sing. We also understand that it is not proper to cut trees. We get oxygen from them. This is our life force, and the basis of our life. To cut them is also violence. Yet we are committing violence upon violence. We are also getting the punishment for this. All these have a direct impact on our mental and physical health. There is a state of terror all over the world. What kind of wisdom is this? Whereas in our Shastras, the human yoni has been considered best among the 84 lakh yonis of the universe. The human body is gained after wandering in millions of yonis and doing good deeds. But this one human has put the lives of the remaining eighty three lakh ninety-nine thousand nine hundred and ninety nine (83,99,999) yonis in danger. We get what we give. Violence is the result of violence. So which man himself is safe? The shadowy turbulent environment all over the world and deadly epidemics like Kovid-19 are proof of this.

Our understanding is not merely in knowing, believing and understanding that violence is wrong. Our wisdom is not merely in saying that we should adopt non-violence. We are more sensitive and conscious than other living beings. We can recognize our mistakes better than them. You can try to rectify it. It is only appropriate that we put that wisdom into practice. Do not differentiate between words and deeds. Unless we implement our thoughts, our understanding and statements immediately, how will we get positive results? We have to adopt non-violence instantly. Killing of animals and birds has to be stopped. The cutting of tress has to stop. Have to adopt a good lifestyle. Only then we will be able to overcome the bad conditions of the world, we will be able to save the world. Otherwise our misdeeds, our sins will eat away at us.

Not only this, we also have to apologize to all the living beings, plants and animals whom we have hurt. It's still not too late. Promise yourself that we will never commit violence again. In the new year, we will take a pledge to adopt non-violence. Will make it our role model, and follow that ideal too. Other than that there is no way to escape. Only then will all dangers, be averted. There will be peace and harmony in the world. Trees and plants including all living beings will be protected. Mankind will survive. Otherwise, the speed with

which the calamities are happening, no one will be able to save us from this disastrous situation.

-6, तख्तेशाही रोड़, जयपुर-302004 (राज.)

सफल व्यक्ति बनने के लिए आवश्यक बिन्दु

श्री अभय कुमार जैन

- **आत्मविश्वासी बनें**–व्यक्ति को हमेशा आत्मविश्वासी और दृढ़ निश्चयी होना चाहिए। जो व्यक्ति दृढ़ विश्वासी होते हैं उनमें हीन भावना नहीं पनपती। यदि आप पर हीन भावना हावी हो गई तो आपकी सफलता असफलता में बदल जायेगी।
- **व्यवहार कुशल बनें**–व्यक्ति को अपना स्वभाव बहुत ही विनम्र और मृदु रखना चाहिए। जिस व्यक्ति में इन गुणों का समावेश हो जाता है, उनके व्यवहार से कठोरता एवं क्रोध दूर हो जाते हैं।
- **प्रशंसक बनें**–आज के दौर में प्राय: लोगों की यह आदत बन गई है कि दूसरों की आलोचना की जाये। व्यक्ति अपने स्वार्थ के वशीभूत दूसरों को नीचा दिखाने में कुशल हो गए हैं। यही आलोचना और बुराई भविष्य में होने वाले झगड़े का कारण बन जाती है, अत: दूसरों की बुराई देखने के स्थान पर उनके गुणों के प्रशंसक बनें।
- **सम्मान करना सीखें**–आप सम्मान पाने की चाह रखते हैं, तो आपको दूसरों को भी भरपूर सम्मान देना होगा। आप चाहे कितने भी महत्त्वपूर्ण पद पर आसीन क्यों न हों, अपने मित्रों, परिचितों सम्बन्धियों की उपेक्षा न करें, जब भी उनसे मिलें मुस्कुराकर मिलें, उन्हें सम्मान दें, अपनी व्यस्तता का बखान नहीं करें। यदि आप उनके किसी काम आ सकें तो अवश्य आएँ, टाले नहीं।
- **व्यस्त रहें, कार्य को टालें नहीं**–सफलता प्राप्त करने की आवश्यक शर्त है कि आप व्यस्त रहें तथा कार्य को टाले नहीं। अपने दैनिक कार्यों को प्रतिदिन करें। इन कार्यों की सूची तैयार करें, महत्त्वपूर्ण और कठिन कार्य सर्वप्रथम करें। हर कार्य को मेहनत, लगन और निष्ठा से करने का प्रयास करें।
- **जिज्ञासु प्रवृत्ति अपनाएँ**–सदैव नई बात जानने के प्रति मन में जिज्ञासा होनी चाहिए। प्रात: जल्दी उठें, समाचार पत्र पढ़ें, विद्यालय की प्रत्येक सांस्कृतिक गतिविधि में भाग लें, विद्यालय नियमित जायें। अपनी पुस्तकों को सम्भालकर रखें, किसी से असभ्यता से पेश नहीं आयें।
- **आध्यात्मिक बनें**–आज के आधुनिक और भौतिक युग की चकाचौंध ने सभी को विचलित कर दिया है, प्रत्येक व्यक्ति को आध्यात्मिक होना चाहिए। अपना कार्य प्रार्थना से शुरु करें। सभी पारिवारिक जनों को प्रात: प्रार्थना करनी चाहिए इसमें अद्‌भुत शक्ति है। अच्छे साधु-सन्तों के प्रवचनों का लाभ लें। आध्यात्मिक प्रवृत्ति होने पर गलत संस्कारों का हमारे पर प्रभाव नहीं पड़ता है। हम शुद्ध सात्त्विक जीवन-जीने की भावना रखेंगे तो हमारी कई बुराइयाँ स्वत: ही समाप्त हो जायेंगी। आत्मा की सुन्दरता आपके व्यक्तित्व को भी आभा देती है।
- **नशीले पदार्थों एवं बुरी आदतों से दूर रहें**–आजकल पान, पाऊच संस्कृति है, कई प्रकार के पाऊच बाजारों में उपलब्ध हैं। अधिकांश छात्र और युवावर्ग इसके शिकार हैं। आये दिन पार्टियों का आयोजन, पीने-पिलाने का दौर चलता है। शराब आर्थिक, सामाजिक एवं पारिवारिक और स्वास्थ्य सभी दृष्टिकोणों से नुकसानदायक है अत: इससे दूर रहें। सुखद भविष्य के लिए यह आवश्यक है कि सभी बुरी आदतों से दूर रहें अन्यथा भावी पीढ़ी विनाश की गर्त एवं दलदल में फँसती जाएगी।

-तृप्तिबन्दा, भवानी मण्डी, (राज.)

बाल-स्तम्भ

अतिमुक्त कुमार

संकलित

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित रचना को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 20 वर्ष की आयु तक के पाठक 15 अप्रेल, 2022 तक **जिनवाणी सम्पादकीय कार्यालय, ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-302015 (राज.)** के पते पर प्रेषित करें। **उत्तर के साथ अपना नाम, आयु, मोबाइल नम्बर तथा पूर्ण पते के साथ बैंक विवरण-बैंक का नाम, खाता संख्या, आई.एफ.एस. कोड इत्यादि का भी उल्लेख करें।** श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरुणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-500 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-300 रुपये, तृतीय पुरस्कार-200 रुपये तथा 150 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

पोलासपुर नगर के राजा विजयसेन की रानी श्रीदेवी की कुक्षि से अतिमुक्त कुमार का जन्म हुआ। जब बालकुमार लगभग सात साल का था और बालकों के साथ खेल रहा था, उसी समय श्रमण भगवान महावीर स्वामी पोलासपुर पधारे और श्रीवत्स उद्यान में विराजित हुए। उनके सुशिष्य गणधर श्री गौतमस्वामी छट्ठ (बेले) के पारणे के लिए गोचरी लेने के लिए नगर में आये।

उस समय राजकुमार अतिमुक्त कुमार आदि बालक नगर के इन्द्रस्थान नामक क्रीड़ा मैदान में खेल रहे थे। गौतम स्वामी उस मैदान के पास से गोचरी लेने निकले। अतिमुक्त कुमार की दृष्टि गणधर गौतम पर पड़ी तो वह उनकी ओर आकर्षित हुआ और पास में जाकर प्रश्न किया-''महात्मन्! आप कौन हैं? आप कहाँ और क्यों जा रहे हैं?''

गौतम गणधर ने कहा-''देवानुप्रिय! मैं जैन साधु हूँ। आत्मकल्याण के लिए मैंने दीक्षा ग्रहण की है। अहिंसा आदि पाँच महाव्रत, तीन गुप्ति, रात्रि-भोजन त्याग आदि नियमों की मैं आराधना करता हूँ और बेले-बेले की तपस्या करता हूँ। आज मेरे बेले का पारणा है, इसलिए गोचरी लेने जा रहा हूँ।''

अतिमुक्त कुमार-''चलो, मैं आपको गोचरी दिलाता हूँ।'' ऐसा कहकर अतिमुक्त कुमार ने गणधर गौतम की अंगुली पकड़ ली और चलने लगे। गौतम स्वामी को लेकर वे राजमहल आये। रानी श्रीदेवी गौतम गणधर को देखकर आनन्दित हुई और उनके स्वागत में आसन पर से उठकर उन्हें वन्दन नमस्कार किया, आहार-पानी बहराया और आदर के साथ सात-आठ क़दम उनके पीछे गई।

अतिमुक्त ने गणधर गौतमस्वामी से जिज्ञासावश पूछ लिया-''महात्मन्! आपके धर्म गुरु कौन हैं और आप कहाँ रहते हैं?''

''देवानुप्रिय! मेरे धर्म गुरु भगवान महावीरस्वामी नगर के बाहर श्रीवत्स उद्यान में विराजमान हैं, मैं उनके पास रहता हूँ।'' गौतमस्वामी ने कहा।

अतिमुक्त बोला-''मैं भी आपके साथ भगवान को वन्दन करने चलना चाहता हूँ।''

''जैसी आपकी इच्छा।'' गौतमस्वामी ने कहा।

भगवान के पास पहुँचकर अतिमुक्त ने वन्दन किया। भगवान ने उन्हें उपदेश फरमाया, जिससे उनको वैराग्य उत्पन्न हुआ। अतिमुक्त कुमार ने भगवान से कहा-''आपका उपदेश सुनकर मेरा आस्था भाव और वैराग्य जागृत हुआ है। इसलिये मैं माता-पिता की आज्ञा लेकर आपके पास दीक्षा लेना चाहता हूँ।''

भगवान ने उन्हें दीक्षा योग्य जानकर कहा-''तुम्हें

जैसा सुख हो वैसा करो, परन्तु आत्म-कल्याण करने में विलम्ब मत करो।''

राजकुमार अतिमुक्त माता-पिता के पास आकर कहने लगे-''आपकी आज्ञा हो तो मैं श्रमण भगवान महावीरस्वामी के पास दीक्षा लेकर उनका शिष्य बनकर धर्म की आराधना करूँ।''

माता-पिता ने आश्चर्यचकित होकर कहा-''अरे बेटा! आप तो बहुत छोटे हो। आपको दीक्षा और संयम का मतलब क्या है, यह ज्ञात नहीं है। आपको धर्म की क्या जानकारी है?''

राजकुमार अतिमुक्त ने कहा-''माता! मैं छोटा हूँ। परन्तु जो मैं जानता हूँ, वह नहीं जानता और जो नहीं जानता हूँ, वह जानता हूँ।''

राजकुमार अतिमुक्त की गूढ़ बात पर हतप्रभ होकर माता-पिता ने पूछा-''क्या कहा? बेटा स्पष्ट करो। हमें आपकी बात समझ में नहीं आई।''

राजकुमार अतिमुक्त ने कहा-''मैं यह जानता हूँ कि जिसने जन्म लिया है, वह अवश्य मरेगा। परन्तु मैं यह नहीं जानता कि कहाँ, कैसे और कब मृत्यु होगी? मैं नहीं जानता कि जीव कौन-से कर्मों से नरक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देवगति में उत्पन्न होता है। परन्तु इतना अवश्य जानता हूँ कि जीव स्वयं के कर्मों से ही चार गति में उत्पन्न होता है।''

पुत्र की ऐसी बुद्धि और वैराग्यपूर्ण बात जानकर माता-पिता के आश्चर्य का पार न रहा। उन्होंने राजकुमार अतिमुक्त को संयम की कठोर साधना और उसमें आने वाले विघ्न और परीषह आदि के बारे में बताया तथा यह भी समझाया कि संयम का पालन करना लोहे के चने चबाना जितना कठिन कार्य है। इस तरह अनेक प्रकार से समझाकर उन्हें रोकने का प्रयत्न किया, परन्तु पुत्र की दृढ़ता के सामने उनकी एक नहीं चली और अन्त में दीक्षा की आज्ञा दे दी। राजकुमार अतिमुक्त ने तुरन्त दीक्षा ले ली।

एक बार चातुर्मास में अतिमुक्त मुनि स्थविर मुनियों के साथ शौच आदि के लिए बाहर गये थे। तब उन्होंने एक छोटा-सा पानी का झरना बहता देखा। बाल सुलभ चेष्टा से उन्होंने मिट्टी की पाल बाँधी और पानी को रोक दिया। वे अपना पात्र पानी में तैराने लगे और गाने लगे-''मेरी नाव पानी में तैर रही है, मेरी नाव पानी में तैर रही है।''

अतिमुक्त मुनि का यह कार्य बड़े सन्तों को पसन्द नहीं आया। वे चुपचाप अपने स्थान पर वापस आये और भगवान महावीर से अतिमुक्त मुनि द्वारा बहते झरने पर मिट्टी की पाल बाँधकर पात्र पानी में तिराने की बात कही। भगवान ने कहा-''अतिमुक्तमुनि इसी भव में मोक्ष जाने वाले हैं। आप उनकी हीलना, निंदा तथा उपेक्षा मत करो। आप उन्हें सच्ची शिक्षा और गोचरी पानी देकर सेवा करो।''

भगवान की आज्ञा स्वीकार करके बड़े साधु अतिमुक्तमुनि की सेवा करने लगे। अतिमुक्तमुनि ने उसके बाद 11 अङ्गसूत्रों का (शास्त्रों का) अध्ययन किया। गुणरत्न संवत्सर तप तथा अनेक प्रकार के तप किये और सब कर्मों का नाश करके मोक्ष में गये।

-'जैन पाठ्यक्रम - पुस्तक : 1' से साभार

प्र. 1 माता ने बालक को धर्म के बारे में पूछा तब उन्होंने क्या जवाब दिया?

प्र. 2 अतिमुक्तमुनि ने क्या व्यवहार किया, जो बड़े सन्तों को पसन्द नहीं आया?

प्र. 3 भगवान महावीर ने सन्तों से अतिमुक्तमुनि के बारे में क्या कहा?

प्र. 4 गौतम गणधर ने बालक अतिमुक्त को अपना परिचय कैसे दिया?

प्र. 5 प्रस्तुत कहानी में निहित सन्देश लिखिए।

प्र. 6 तीन-तीन पर्यायवाची लिखिए-क्रीड़ा, जिज्ञासा, आराधना, चेष्टा, परीषह।

क्या सदैव नहीं रहता?

जो सदा नहीं रहता उस पर राग नहीं करना,
उस पर द्वेष नहीं करना, उसके लिए पाप नहीं करना।

-संकलित

बाल-स्तम्भ [जनवरी-2022] का परिणाम

जिनवाणी के जनवरी-2022 के अंक में बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत 'अमरकुमार' के प्रश्नों के उत्तर जिन बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, वे धन्यवाद के पात्र हैं। पूर्णांक 25 हैं।

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-500/-	कविश जैन, चौथ का बरवाड़ा (राजस्थान)	24
द्वितीय पुरस्कार-300/-	शुभम जैन, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	23
तृतीय पुरस्कार- 200/-	मौलिक जैन, जयपुर (राजस्थान)	22
सान्त्वना पुरस्कार (5) - 150/-	कु. सुवर्णा एस. छाजेड़, भुसावल (महाराष्ट्र)	21
	सिद्धार्थ जैन, सरवाड़-अजमेर (राजस्थान)	21
	दीपल जैन, कोटा (राजस्थान)	21
	काश्वी जैन, बेंगलुरू (कर्नाटक)	21
	ध्रुव बाँठिया, कोटा (राजस्थान)	21

बाल-जिनवाणी फरवरी, 2022 के अंक से प्रश्न (अन्तिम तिथि 15 अप्रेल, 2022)

प्र. 1. 'चिलात' दासपुत्र के व्यसनी होने का क्या कारण था?
प्र. 2. वीर प्रभु से कवि क्या प्रार्थना करता है?
प्र. 3. आचार्यश्री हस्ती को अभय प्रदाता क्यों कहते हैं? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
प्र. 4. 'मुहावरा बदल गया' प्रसङ्ग में निहित सन्देश लिखिए।
प्र. 5. चोर ने मास्टर दीनदयालजी का स्कूटर वापस क्यों दे दिया?
प्र. 6. जिस प्रकार का निवेदन करते हुए मास्टर दीनदयाली ने चोर को स्कूटर दिया, वह आज कितना सम्भव है?
प्र. 7. चिलात चोर के मन में धन्नासार्थवाह को लूटने का विचार क्यों आया?
प्र. 8. शब्दार्थ लिखो-संघट्टिया, वत्तिया, किलामिया, लेसिया।
प्र. 9. विराधना किसे कहते हैं और इससे कैसे बचा जा सकता है?
प्र. 10. Why has been said in the poem that 'life still has a meaning?'

बाल-जिनवाणी [दिसम्बर-2021] का परिणाम

जिनवाणी के दिसम्बर-2021 के अंक की बाल-जिनवाणी पर आधृत प्रश्नों के उत्तरदाता बालक-बालिकाओं का परिणाम इस प्रकार है। पूर्णांक 40 है।

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-600/-	गुंजन प्रशान्त कोठारी, देवपुर-धुलिया (महाराष्ट्र)	39
द्वितीय पुरस्कार-400/-	रुनझुन जैन, बजरिया-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	38
तृतीय पुरस्कार- 300/-	सुहानी सुराणा, अजमेर (राजस्थान)	37
सान्त्वना पुरस्कार (3)- 200/-	सक्षम जैन, आलनपुर-सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	36
	अरिन चोरड़िया, जयपुर (राजस्थान)	36
	यशवर्धन आहूजा, जयपुर (राजस्थान)	36

बाल-जिनवाणी, बाल-स्तम्भ के पाठक ध्यान दें

बाल-जिनवाणी एवं बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रत्येक अंक में दिए जा रहे प्रश्नों के उत्तर प्रदाताओं से निवेदन है कि वे अपना नाम, पूर्ण पता, मोबाइल नम्बर, बैंक विवरण-(खाता संख्या, आई.एफ.एस.सी. कोड, बैंक का नाम इत्यादि) भी साथ में स्पष्ट एवं साफ अक्षरों में लिखकर भिजवाने का कष्ट करें ताकि आपका पुरस्कार उचित समय पर आपको प्रदान किया जा सके। जिन्हें अब तक पुरस्कार राशि प्राप्त नहीं हुई है, वे श्री अनिल कुमारजी जैन से (मो. 9314635755) सम्पर्क कर सकते हैं। *-सम्पादक*

अहंकार के वृक्ष पर
विनाश के फल लगते हैं।

ओसवाल मेट्रीमोनी बायोडाटा बैंक

जैन परिवारों के लिये एक शीर्ष वैवाहिक बायोडाटा बैंक

विवाहोत्सुक युवा/युवती
तथा पुनर्विवाह उत्सुक उम्मीदवारों की
एवं उनके परिवार की पूरी जानकारी
यहाँ उपलब्ध है।

ओसवाल मित्र मंडल मेट्रीमोनियल सेंटर

४७, रत्नज्योत इंडस्ट्रियल इस्टेट, पहला माला,
इरला गांवठण, इरला लेन, विलेपार्ले (प.), मुंबई - ४०० ०५६.

7506357533 ✆ : 9022786523, 022-26287187
ई-मेल : oswalmatrimony@gmail.com

सुबह १०.३० से सायं ४.०० बजे तक प्रतिदिन (बुधवार और बैंक छुट्टियों के दिन सेंटर बंद है)

गजेन्द्र निधि
आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्ज्वल भविष्य की ओर एक कदम......

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

Acharya Hasti Meghavi Chatravritti Yojna Has Successfully Completed 13 Years And Contributed Scholarship To Nearly 4500 Students. Many Of The Students Have Become Graduates, Doctors, Software-Professionals, Engineers And Businessmen. We Look Forward To Your Valuable Contribution Towards This Noble Cause And Continue In Our Endeavour To Provide Education And Spirituals Knowledge Towards A Better Future For The Students. Please Donate For This Noble Cause And Make This Scholarship Programme More Successful. **We Have Launched Membership Plans For Donors.**

We Have Launched Membership Plans For Donors

	MEMBERSHIP PLAN (ONE YEAR)	
SILVER MEMBER RS.50000	GOLD MEMBER RS.75000	PLATINUM MEMBER RS.100000
DIAMOND MEMBER RS.200000		KOHINOOR MEMBER RS.500000

Note - Your Name Will Be Published In Jinwani Every Month For One Year.

The Fund Acknowledges Donation From Rs.3000/- Onwards. For Scholarship Fund Details Please Contact M.Harish Kavad, Chennai (+91 95001 14455)

The Bank A/c Details is as follows - Bank Name & Address - AXIS BANK Anna Salai, Chennai (TN)

A/c Name- Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund **IFSC Code** - UTIB0000168

A/c No. 168010100120722 **PAN No.** - AAATG1995J

Note- Donation to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of Income Tax Act 1961.

छात्रवृत्ति योजना में सदस्यता अभियान के सदस्य बनकर योजना की निरन्तरता को बनायें रखने में अपना अमूल्य योगदान कर पूण्यार्जन किया, ऐसे संघनिष्ठ, श्रेष्ठीवयों एवं अर्थ सहयोग एकत्रित करने करने वालों के नाम की सूची –

KOHINOOR MEMBER (RS.500000)	PLATINUM MEMBER (RS.100000)
श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई। श्रीमान् राजीव जी नीता जी डागा, ह्यूस्टन। युवारत्न श्री हरीश जी कवाड़, चैन्नई। श्रीमती इन्द्राबाई सूरजमल जी भण्डरी, चैन्नई (निमाज-राज.)।	श्रीमान् दूलीचन्द बाघमार एण्ड संस, चैन्नई। श्रीमान् दलीचन्द जी सुरेश जी कवाड़, पून्नामल्लई। श्रीमान् राजेश जी विमल जी पवन जी बोहरा, चैन्नई। श्रीमान् अम्बालाल जी बसंतीदेवी जी कर्नावट, चैन्नई।
DIAMOND MEMBER (RS.200000)	श्रीमान् सम्पतराज जी राजकवंर जी भंडारी, ट्रिपलीकेन-चैन्नई।
श्रीमान् प्रकाशचन्द जी भण्डारी, हरलूर रोड, बैंगलोर M/s Prithvi Exchange (India) Ltd., Chennai	प्रो. डॉ. शैला विजयकुमार जी सांखला, चालीसगांव (महा.)। श्रीमान् विजयकुमार जी मुकेश जी विनीत जी गोठी, मदनगंज-किशनगढ़। श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, तमिलनाडू।
SILVER MEMBER (RS.50000)	श्रीमती पुष्पाजी लोढ़ा, नेहरू पार्क, जोधपुर।
श्रीमान् महावीर सोहनलाल जी बोथरा, जलगांव (भोपालगढ़) श्रीमान् अमीरचन्द जी जैन (गंगापुरसिटी वाले), मानसरोवर, जयपुर श्रीमती बीना सुरेशचन्द्र जी मेहता, उमरगांव (भोपालगढ़ वाले)। श्रीमान् गुप्त सहयोगी, जबलपुर	श्रीमान जी. गणपतराजजी, हेमन्तकुमारजी, उपेन्द्रकुमारजी, कोयम्बटूर (कोसाणा वाले) श्रीमान सुगनचन्द जी छाजेड़, चौपासनी रोड, जोधपुर। श्रीमान् गुप्त सहयोगी, तिरूवल्लुवर (तमिलनाडू)।

सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पते पर भेजें - M.Harish Kavad - No. 5, Car Street, Poonamallee, **CHENNAI-56**

छात्रवृत्ति योजना से संबंधित जानकारी के लिए सम्पर्क करें - मनीष जैन, चैन्नई (+91 95430 68382)

'छोटा सा चिन्तन परिग्रह को हल्का करने का, लाभ बड़ा गुरु भाइयों को शिक्षा में सहयोग करने का'

जिनवाणी की प्रकाशन योजना में आपका स्वागत है

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा विगत 79 वर्षों से प्रकाशित 'जिनवाणी' हिन्दी मासिक पत्रिका मानव के व्यक्तित्व को निखारने एवं ज्ञानवर्धक सामग्री परोसने का महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है। इसमें अध्यात्म, जीवन-व्यवहार, इतिहास, संस्कृति, जीवन मूल्य, तत्त्व-चर्चा आदि विविध विषयों पर पाठ्य सामग्री उपलब्ध रहती है। अनेक स्तम्भ निरन्तर प्रकाशित हो रहे हैं, जिनमें सम्पादकीय, विचार-वारिधि, प्रवचन, शोधालेख, अंग्रेजीलेख, युवा-स्तम्भ, नारी-स्तम्भ आदि के साथ विभिन्न गीत, कविताएँ, विचार, प्रेरक प्रसङ्ग आदि प्रकाशित होते हैं। नूतन प्रकाशित साहित्य की समीक्षा भी की जाती है।

जैनधर्म, संघ, समाज, संगोष्ठी आदि के प्रासङ्गिक महत्त्वपूर्ण समाचार भी इसकी उपयोगिता बढ़ाते हैं। जनवरी, 2017 से 8 पृष्ठों की 'बाल जिनवाणी' ने इस पत्रिका का दायरा बढ़ाया है। अनेक पाठकों को प्रतिमाह इस पत्रिका की प्रतीक्षा रहती है तथा वे इसे चाव से पढ़ते हैं। जैन पत्रिकाओं में जिनवाणी पत्रिका की विशेष प्रतिष्ठा है।

आर्थिक-व्यवस्था हेतु 28 सितम्बर, 2019 को आयोजित कार्यकारिणी बैठक में एक-एक लाख की राशि के प्रतिमाह दो महानुभावों के सहयोग का निर्णय लिया गया। ऐसे महानुभावों का एक-एक पृष्ठ में उनके द्वारा प्रेषित परिचय/सामग्री प्रकाशित करने के साथ वर्षभर उनके नामों का उल्लेख करने का प्रावधान भी रखा गया।

जिनवाणी पत्रिका के प्रति अनुराग रखने वाले एवं हितैषी महानुभावों से निवेदन है कि उपर्युक्त योजना से जुड़कर श्रुतसेवा का लाभ प्राप्त कर पुण्य के उपार्जक बनें। जो उदारमना श्रावक जुड़ना चाहते हैं वे शीघ्र मण्डल कार्यालय या पदाधिकारियों से शीघ्र सम्पर्क करें।

अर्थसहयोगकर्ता जिनवाणी (JINWANI) के नाम से चैक प्रेषित कर सकते हैं अथवा जिनवाणी के निम्नाङ्कित बैंक खाते में राशि नेफ्ट/नेट बैंकिंग/चैक के माध्यम से सीधे जमा करा सकते हैं।

बैंक खाता नाम-JINWANI, बैंक-State Bank of India, बैंक खाता संख्या-51026632986, बैंक खाता-SAVING Account, आई.एफ.एस. कोड-SBIN0031843, ब्रॉच-Bapu Bazar, Jaipur

राशि जमा करने के पश्चात् राशि की स्लिप मण्डल कार्यालय या पदाधिकारियों की जानकारी में लाने की कृपा करें जिससे आपकी सेवा में रसीद प्रेषित की जा सके। इसके लिए कार्यालय के श्री अनिल कुमारजी जैन 9314635755 से सम्पर्क कर सकते हैं।

'जिनवाणी' के खाते में जमा करायी गई राशि पर आपको आयकर विभाग की धारा 80G के अन्तर्गत छूट प्राप्त होगी, जिसका उल्लेख रसीद पर किया हुआ है। 'जिनवाणी' पत्रिका में जन्मदिवस, शुभविवाह, नव प्रतिष्ठान, नव गृहप्रवेश एवं स्वजनों की पुण्य-स्मृति के अवसर पर सहयोग राशि प्रदान करने वाले सभी महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त करते हैं। आप जिनवाणी पत्रिका को सहयोग प्रदान करके अपनी खुशियाँ बढ़ाना न भूलें।

-अशोक कुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 9314625596

जिनवाणी प्रकाशन योजना के लाभार्थी

'जिनवाणी' हिन्दी मासिक पत्रिका की अर्थ-व्यवस्था को सम्बल प्रदान करने हेतु निम्नाङ्कित धर्मनिष्ठ उदारमना श्रावकरत्नों से राशि रुपये 1,00,000/- प्राप्त हुई है। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं जिनवाणी परिवार उनका हार्दिक आभारी है।

वित्तीय वर्ष 2021-22 हेतु लाभार्थी

(1) सेठ चंचलमल गुलाबदेवी सुराणा ट्रस्ट, बीकानेर
(2) डॉ. सुनीलजी, विमलजी चौधरी, दिल्ली
(3) इन्दर कुमार मनीष कुमार सुराणा चेरिटेबल ट्रस्ट, बीकानेर
(4) श्री गणपतराजजी, हेमन्त कुमारजी, उपेन्द्र कुमारजी बाघमार (कोसाणा वाले), कोयम्बटूर
(5) Shri Ankit ji lodha, Jewels of Jaipur Gie gold creations Pvt Ltd, Mahaveer Nagar, Jaipur
(6) श्री राधेश्यामजी, कुशलजी, पदमजी, अशोकजी, प्रदीपजी गोटेवाला, सवाईमाधोपुर (राज.)
(7) श्री सुरेशचन्दजी इन्दरचन्दजी मुणोत, लासूर स्टेशन, औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
(8) श्री कस्तूरचन्दजी, सुशील कुमारजी, सुनील कुमारजी बाफना, जलगाँव (महाराष्ट्र)
(9) पुष्पा चन्द्रराज सिंघवी चेरिटेबल ट्रस्ट, मुम्बई (महाराष्ट्र)
(10) श्री राजेन्द्रजी नाहर, भोपाल (मध्यप्रदेश)
(11) श्रीमती लाडजी हीरावत, जयपुर (राजस्थान)
(12) श्री प्रकाशचन्दजी हीरावत, जयपुर (राजस्थान)
(13) श्री अनिलजी सुराणा, वैल्लूर (तमिलनाडु)
(14) डॉ. सुनीलजी, विमलजी चौधरी, दिल्ली
(15) श्री प्रेमचन्दजी, अजयजी, आलोकजी हीरावत, जयपुर-मुम्बई
(16) सतीशचन्दजी जैन (कंजोली वाले), जयपुर।

उदारमना लाभार्थियों की अनुमोदना
एवं
वित्तीय वर्ष 2022-2023 के लिए
स्वेच्छा से नये जुड़ने वाले लाभार्थियों का
हार्दिक स्वागत।

Centrally located in Thane (W) | Sky park | Sky community | Lavish clubhouse | Swimming pools | Indoor squash court | Badminton courts

PROJECT
IMMENSA
THANE (W)
EVERYTHING UNDER THE SUN

TO BOOK 1, 2 & 3 BHK HOMES, CALL: +91 22 3064 3065

Site Address: Bayer Compound, Kolshet Road, Thane (W) - 400 601. | **Head Office**:101, Kalpataru Synergy, Opposite Grand Hyatt, Santacruz (E), Mumbai - 400 055. | Tel: +91 22 3064 5000 | Fax: +91 22 3064 3131 | **Email**: sales@kalpataru.com | **Website**: www.kalpataru.com

This property is secured with Axis Trustee Services Ltd. and Housing Development Finance Corporation Limited. The No Objection Certificate/Permission would be provided, if required. All specifications, designs, facilities, dimensions, etc. are subject to the approval of the respective authorities and the developers reserve the right to change the specifications or features without any notice or obligation. Images are for representative purposes only. *Conditions apply.

In association with
HDFC PROPERTY FUND

If undelivered, Please return to

Samyaggyan Pracharak Mandal
Above Shop No. 182,
Bapu Bazar, Jaipur-302003 (Raj.)
Tel. : 0141-2575997

स्वामी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिए प्रकाशक, मुद्रक - अशोक कुमार सेठ द्वारा डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर राजस्थान से मुद्रित एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, शॉप नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 राजस्थान से प्रकाशित। सम्पादक-डॉ. धर्मचन्द जैन